नेपाल में सत्ता पलट

नेपाल में युवाओं का गुस्सा अचानक आई प्रतिक्रिया नहीं और न ही सरकार के किसी एक फैसले से उपजा आक्रोश है। यह लंबे वक्त की हताशा है, जो सब्र का बांध टूटने के बाद जाहिर हो रही। नेपाल सरकार को सख्ती के बजाय समस्या की जड़ को समझना चाहिए और युवाओं से बातचीत कर रास्ता निकालने की कोशिश होनी चाहिए। युवा आक्रोश का शिकार बने प्रधानमंत्री ओली ने पद त्याग कर अच्छा किया। बीते हफ्ते 26 सोशल मीडिया प्लैटफॉर्म पर बैन सरकार के विरोध का तात्कालिक मुद्दा बन गया। सरकार भले सुप्रीम कोर्ट के आदेश और नियमों का हवाला दे रही हो, लेकिन उसके इस कदम ने जनता खासकर युवाओं में दबे आक्रोश को उभार दिया। युवा वर्ग का कहना है कि यह प्रतिबंध सीधे उनके काम और अभिव्यक्ति पर है। लेकिन यह संपूर्ण सत्य नहीं है। जो सोशल मीडिया प्लैटफॉर्म अभी उपलब्ध हैं, उन्हीं के जरिये युवा एक-दूसरे से जुड़े और इस आंदोलन को खड़ा किया। इस दौरान 'नेपो बेबी' ट्रेंड करना बताता है कि भाई-भतीजावाद और करप्शन से लोग किस कदर परेशान हैं। इस साल की शुरूआत में भी ऐसा ही एक आंदोलन हो चुका है, जब देशभर में मांग उठी कि राजशाही की वापसी हो। उस समय भी जनता ने भ्रष्टाचार को लेकर गुस्सा जताया था। नेपाल के अंदरूनी हालात लंबे समय से नाजुक बने हुए हैं। यह देश राजनीतिक अस्थिरता, बेरोजगारी और दूसरे मुद्दों से जूझ रहा है। विडंबना है कि 2008 में इन्हीं सब मुद्दों को लेकर व्यापक जन आंदोलन छिड़ा था, जिसने राजशाही का अंत कर गणतांत्रिक व्यवस्था कायम की। लेकिन, दो दशक भी नहीं बीते और उस सिस्टम से जनता का मोहभंग हो चुका है। चुने हुए नेताओं ने लोगों को किस कदर निराश किया है, समझने के लिए यह बताना काफी है कि 17 बरसों में यहां 14 सरकारें बन चुकी हैं। और, पूर्व प्रधानमंत्रियों शेर बहादुर देउबा से लेकर बाबूराम भट्टराई, प्रचंड और मौजूदा पीएम केपी शर्मा ओली तक-तमाम राजनेता किसी न किसी तरह के करप्शन के आरोपों का सामना कर रहे हैं। नेपाल की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से पर्यटन और प्रवासी नागरिकों की ओर से भेजी गई रकम पर निर्भर है, पर हाल में दोनों में कमी आई है। युवाओं में बेरोजगारी दर 19.2% है और 82% आबादी का रोजगार अनिश्चित है। देश की जीडीपी में मामूली तेजी का अनुमान है, लेकिन सरकार युवाओं में उम्मीद और भरोसा जगाने में नाकाम रही है। युवाओं को कोरे वादे नहीं, बदलाव चाहिए।

सोशल मीडिया, जेन-जेड और नेपाल

नीरज कुमार दुबे
(वरिष्ठ पत्रकार)

नेपाल में सरकार द्वारा प्रमुख सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स पर लगाए गए प्रतिबंध ने देश के राजनीतिक, सामाजिक और कूटनीतिक परिदृश्य को गहराई से प्रभावित किया है। यह केवल डिजिटल नीति का सवाल नहीं है, बल्कि यह लोकतंत्र, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और युवा चेतना के लिए एक गंभीर चुनौती है। फेसबुक, यूट्यूब, व्हाट्सएप, इंस्टाग्राम और स्नैपचैट जैसे प्लेटफॉर्म्स, जिन्हें युवा पीढ़ी अपने विचार व्यक्त करने, दोस्तों से जुड़ने और वैश्विक घटनाओं से अपडेट रहने के लिए इस्तेमाल करती है, उन पर बैन लगाने से युवाओं में गहरी नाराजगी और असंतोष पैदा हुआ है।

नेपाल की सरकार को अब यह समझना होगा कि विदेशी ऐप्स को कानूनी दायरे में लाना उचित है, लेकिन इससे भी महत्वपूर्ण है कि वह अपने युवाओं और नागरिकों की भावनाओं का सम्मान करें। युवा पीढ़ी देश के भविष्य के निमार्ता हैं; उनकी आवाज को दबाना, उन्हें अपमानित करना और डिजिटल माध्यमों पर नियंत्रण लगाना केवल अस्थायी समाधान होगा, जबकि अस्थिरता और सामाजिक तनाव स्थायी रूप से बढ़ सकते हैं। इसमें भी कोई दो राय नहीं कि नेपाल में राजनीतिक अस्थिरता, सोशल मीडिया पर पाबंदी और युवा विरोध प्रदर्शन न केवल वहां की आंतरिक राजनीति को प्रभावित कर रहे हैं, बल्कि यह भारत के लिए भी चिंता का विषय बन गए हैं। नेपाल भारत का सबसे नजदीकी पड़ोसी और रणनीतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण देश है। दोनों देशों के बीच खुले सीमावर्ती संबंध, सामाजिक-सांस्कृतिक मेलजोल और आर्थिक संबंध गहरे हैं।

युवा पीढ़ी पहले ही देश की कमजोर स्वास्थ्य और शिक्षा प्रणाली, भ्रष्टाचार और भाई-भतीजावाद से तंग आ चुकी है। ऐसे समय में सोशल मीडिया पर पाबंदी ने उनकी निराशा को और बढ़ा दिया है। हाल ही में ह्यनेपो किड्सह्ल यानि राजनीतिक परिवारों के बच्चों के विरुद्ध उभरे गुस्से और काठमांडू में जेनरेशन जेड के युवाओं का प्रदर्शन यह दशार्ता है कि वह अब अन्याय को चुपचाप सहन नहीं करेंगे। यह चेतावनी है कि यदि सरकार युवा वर्ग की भावनाओं को समझने में विफल रही, तो राजनीतिक अस्थिरता और बढ़ सकती है।

इस घटनाक्रम का भारत और दक्षिण एशिया के लिए भी महत्वपूर्ण संदेश है। नेपाल भारत का निकटतम पड़ोसी और रणनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण देश है। वहां की अस्थिरता न केवल सीमा सुरक्षा के लिए खतरा पैदा कर सकती है, बल्कि चीन जैसे बाहरी प्रभावों को बढ़ावा देने का अवसर भी दे सकती है। हाल ही में ओली सरकार का चीन के प्रति झुकाव, पश्चिम और जापान से दूरी और सीमा विवादों में आक्रामक रुख ने यह संकेत दिया है कि नेपाल अपनी रणनीतिक स्वतंत्रता के बावजूद विदेशी प्रभावों के जाल में फंसता जा रहा है। यह ठीक है कि सोशल मीडिया को कानूनी और सामाजिक वास्तविकताओं के अनुरूप नियंत्रित करना आवश्यक था, लेकिन इसे कैबिनेट निर्णय के माध्यम से लागू करना और विवादास्पद प्रावधान लागू करना– जैसे ह्यसमस्याग्रस्त सामग्रीह्ल को 24 घंटे में हटाना, जैसी नीति को थोपना गलत था। पहले ही दक्षिण एशिया में लोकतंत्र और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की स्थिति चिंताजनक बनी हुई है। श्रीलंका, पाकिस्तान और अब नेपाल के हालात यह संदेश देते हैं कि लोकतंत्र केवल चुनाव तक सीमित नहीं रह सकता; इसे जीवित बनाए रखने के लिए नागरिकों की स्वतंत्रता, उनके अधिकार, शासन में पारदर्शिता और संवेदनशील कूटनीति की रक्षा आवश्यक है।

नेपाल की सरकार को अब यह समझना होगा कि विदेशी ऐप्स को कानूनी दायरे में लाना उचित है, लेकिन इससे भी महत्वपूर्ण है कि वह अपने युवाओं और नागरिकों की भावनाओं का सम्मान करें। युवा पीढ़ी देश के भविष्य के निमार्ता हैं; उनकी आवाज को दबाना, उन्हें अपमानित करना और डिजिटल माध्यमों पर नियंत्रण लगाना केवल अस्थायी समाधान होगा, जबकि अस्थिरता और सामाजिक तनाव स्थायी रूप से बढ़ सकते हैं। इसमें भी कोई दो राय नहीं कि नेपाल में राजनीतिक अस्थिरता, सोशल मीडिया पर पाबंदी और युवा विरोध प्रदर्शन न केवल वहां की आंतरिक राजनीति को प्रभावित कर रहे हैं, बल्कि यह भारत के लिए भी चिंता का विषय बन गए हैं। नेपाल भारत का सबसे नजदीकी पड़ोसी और रणनीतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण देश है। दोनों देशों के बीच खुले सीमावर्ती संबंध, सामाजिक-सांस्कृतिक मेलजोल और आर्थिक संबंध गहरे हैं। ऐसे में नेपाल में बढ़ती अस्थिरता का सीधे प्रभाव भारत की सीमा सुरक्षा, सीमावर्ती इलाकों की स्थिरता और वहां रहने वाले भारतीय नागरिकों पर पड़ सकता है।

नेपाल में युवाओं का आक्रोश और विरोध प्रदर्शन यह संकेत देते हैं कि सरकार और जनता के बीच विश्वास का संकट गहरा रहा है। अगर यह स्थिति और बिगड़ी तो चीन अपना प्रभाव वहां और बढ़ाने का प्रयास कर सकता है। चीन पहले से ही नेपाल में अपनी पकड़ बनाये हुए है। ऐसे में नेपाल के लोकतांत्रिक संस्थानों में अविश्वास और अशांति बढ़ी तो यह भारत के लिए रणनीतिक चुनौती बन सकती है।

भारत को नेपाल के हालात पर सतर्क नजर रखनी चाहिए। यह सतर्कता केवल सीमा सुरक्षा तक सीमित नहीं होनी चाहिए, बल्कि इसमें कूटनीतिक संवाद, आर्थिक सहयोग और सांस्कृतिक संपर्क के माध्यम से नेपाल के लोकतांत्रिक ढांचे और सामाजिक स्थिरता को बनाए रखने का प्रयास शामिल होना चाहिए। भारत को यह सुनिश्चित करना होगा कि नेपाल के अंदरूनी संकट भारत-नेपाल संबंधों को प्रभावित न करें और क्षेत्रीय संतुलन बना रहे। देखा जाये तो नेपाल में बिगड़ते हालात भारत के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा, सामरिक संतुलन और क्षेत्रीय स्थिरता से जुड़ा मामला भी है। इसलिए भारत को सक्रिय, सतर्क और संवेदनशील दृष्टिकोण अपनाना अनिवार्य है।

नेपाल सरकार को इस स्थिति को संभालने के लिए संतुलित और पारदर्शी रुख अपनाना होगा। सबसे पहले, युवा नेताओं और प्रदर्शनकारियों के साथ खुले संवाद की आवश्यकता है। सोशल मीडिया एप्स पर प्रतिबंध का उद्देश्य और कानूनी आधार स्पष्ट करना जरूरी है ताकि जनता को यह विश्वास हो कि यह कदम सिर्फ डिजिटल सुरक्षा और कानूनी संगति के लिए उठाया गया है, न कि युवाओं की आवाज दबाने के लिए। इसके साथ ही, सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों को नियंत्रित करने के लिए एक समग्र और न्यायसंगत कानून तैयार किया जाना चाहिए, न कि केवल कैबिनेट निर्णय या तात्कालिक आदेश पर जोर देना चाहिए। नेपाल सरकार के सामने यह चुनौती केवल सोशल मीडिया नियंत्रण की नहीं है, बल्कि लोकतंत्र और युवा चेतना को बनाए रखने की भी है। संतुलित, पारदर्शी और संवादात्मक रुख अपनाकर ही सरकार युवा नाराजगी को शांत कर सकती है और देश में राजनीतिक और सामाजिक स्थिरता सुनिश्चित कर सकती है।

क्यों सुलग रहा है पड़ोसी देश नेपाल

अशोक भाटिया
(वरिष्ठ स्तंभकार)

पिछले चार सालों में भारत के कई पड़ोसी देशों में घरेलू कारणों से उभरे आंदोलनों ने न सिर्फ सत्ता परिवर्तन को जन्म दिया बल्कि दक्षिण एशिया की स्थिरता पर भी सवाल खड़े कर दिए। नेपाल, बांग्लादेश, पाकिस्तान, श्रीलंका और म्यांमार की सड़कों पर उतरी भीड़ ने यह साबित कर दिया है कि इन देशों में राजनीतिक और सामाजिक असंतोष अपने चरम पर है। चतुर चीन व मक्कार अमेरिका की गोद में झूल रहा नेपाल सुलग उठा। गुस्साई भीड़ नेपाली संसद में घुस गई । ठीक उसी स्टाइल में जैसे कुछ समय पहले बांग्लादेश में बेकाबू भीड़ ने किया था।

आखिर युवाओं की ही भीड़ इस कदर गुस्से में क्यों है ? इन गुस्साए युवाओं की भीड़ हाथों में भ्रष्ट नेपाल सरकार को हटाओ, प्रधानमंत्री ओपी शर्मा ओली महाभ्रष्ट है- की तख्तियां और बैनर क्यों थे? सरकार तो दावा कर रही है कि नेपाल के युवाओं की भीड़ सरकार द्वारा सोशल मीडिया प्लेटफार्म्स के पाबंद किए जाने से नाराज है। तब फिर सरकार और नेपाली प्रधानमंत्री ओपी शर्मा ओली के भ्रष्ट होने का मुद्दा कैसे इस बवाल में उछाला ?

भारतीय थलसेना के कोर ऑफ इंजीनियर्स से रिटायर ले. कर्नल जे एस सोढ़ी कहते हैं कि नेपाल में जो कुछ हो रहा है उस पर भारत को हैरान होने की नहीं, बल्कि सतर्क-चौकन्ना रहने की जरूरत है। क्योंकि खुद को भारत का छोटा भाई कहने वाला नेपाल बीते कई साल से अपनी स्वार्थ-पूर्ति के लिए पाकिस्तान की तरह ही चतुर चीन और मक्कार अमेरिका की गोद में बैठकर झूल रहा है। अब नेपाल को अपना छोटा भाई समझने की गलती भारत न कर बैठे। हालांकि, हिंदुस्तानी हुकूमत नेपाल के इस बदले हुए रुख को काफी पहले से ताड़े-भांपे बैठा है। नेपाल को भारत, चीन और अमेरिका की विश्वसनीयता में अंतर कर पाने का ही माद्दा न बचा हो। नेपाल की नेपाल की संसद पर हमला होने वाला था, और चीन-अमेरिका की एजेंसियों कहां सोती रहीं?

बांग्लादेश में अशांति का माहौल 2022 से ही बनने लगा था। मई 2024 में यह गुस्सा चरम पर पहुंच गया। राजधानी ढाका और अन्य शहरों में शेख हसीना सरकार के खिलाफ बड़े पैमाने पर प्रदर्शन हुए। आखिरकार अगस्त 2024 में शेख हसीना को देश छोड़ना पड़ा। शेख हसीना के खिलाफ जिन छात्रों ने विरोध प्रदर्शन कर सत्ता परिवर्तन किया था वही आज मौजूदा सरकार के खिलाफ भी खड़े होते दिख रहे हैं। बीते दिनों ढाका विश्वविद्यालय के परिसर में विरोध भी हुआ साथ ही आरोप लगाया था कि सेना एक साजिश के तहत शेख हसीना की अवामी लीग के लिए चुनाव में फायदा पहुंचाने की कोशिश हो रही है। कि कुछ दिन पहले ही बांग्लादेश की अंतरिम सरकार के सूचना सलाहकार और छात्र आंदोलन के प्रमुख नेताओं में से एक नाहिद इस्लाम ने मंत्रिमंडल से इस्तीफा दे दिया था। उन्होंने पिछले साल जुलाई में हुए विद्रोह में शामिल कार्यकताओं द्वारा एक नई राजनीतिक पार्टी शुरू करने से पहले यह कदम उठाया था। यानी कि विद्रोह आज भी जारी है ।

पाकिस्तान भी पिछले दो सालों में दो बड़े प्रदर्शनों का गवाह बना है। मई 2023 में पूर्व प्रधानमंत्री इमरान खान की गिरफ्तारी ने पूरे पाकिस्तान में आग भड़का दी। लाहौर से लेकर इस्लामाबाद और रावलपिंडी तक उनके समर्थक सड़कों पर उतरे और कई जगहों पर हालात बेकाबू हो गए। सरकारी इमारतों, पुलिस चौकियों और यहां तक कि सेना के प्रतिष्ठानों पर भी हमले हुए। कई शहरों में कर्फ्यू जैसी स्थिति बनी और इंटरनेट सर्विसेज पूरी तरह से बंद कर दी गईं। विशेषज्ञों की मानें तो यह पाकिस्तान के इतिहास में उन असाधारण मौकों में से एक था जब जनता का गुस्सा सीधे सेना की ओर मुड़ा। इन प्रदर्शनों ने यह संकेत दिया कि पाकिस्तान की राजनीति और सत्ता पर कितना बड़ा संकट है। प्रदर्शन उस समय हुए जब इमरान के सत्ता से हटने के करीब एक साल बाद तोशाखान मामले में उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया था। इमरान अभी तक जेल में बंद हैं। इस प्रदर्शन में जहां 10 से ज्यादा लोगों की मौत हुई तो वहीं हजारों लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया था।

हॉल ही में पाकिस्तान का बलूचिस्तान बेहद अशांत है। पिछले दिनों बलूचिस्तान में दो विभिन्न मामलों में बलूच बंदूकधारियों ने करीब 40 लोगों को मौत के घाट उतार दिया। अगस्त महीने में सबसे ज्यादा हिंसा के मामले आए हैं।पाकिस्तान इंस्टीट्यूट फॉर कॉन्फ्लिक्ट एंड सिक्योरिटी स्टडीज के अनुसार अगस्त के महीने में पाकिस्तान में सरकार विरोधी हिंसा के मामलों में खतरनाक ढंग से बढ़ोतरी हुई है। इस कारण यह पिछले 6 साल का सबसे ज्यादा अशांत महीना बन गया है। अगस्त में बलूचिस्तान में सबसे अधिक मौतें होने के मामले सामने आए हैं। रिपोर्ट के अनुसार केवल अगस्त के महीने में हिंसा की घटनाओं में पाकिस्तान में कम से कम 254 लोग मारे गए। इनमें 92 नागरिक, 108 आतंकवादी और 54 सशस्त्र सैनिक शामिल थे। इसके अतिरिक्त अलग अलग घटनाओं में करीब 150 लोग घायल हुए। इनमें 88 के करीब आमजन थे।

पाकिस्तान से पहले भारत का एक और पड़ोसी श्रीलंका में साल 2022 में बड़े प्रदर्शन हुए। भयंकर आर्थिक संकट के बाद देश धीरे-धीरे सुधार की कोशिशों की तरफ बढ़ रहा था लेकिन जनता नाराज थी। राजधानी कोलंबो, कैंडी और कई और शहरों में हजारों लोगों ने बिजली कटौती, महंगाई, ईंधन की कीमतों में वृद्धि और बेरोजगारी के खिलाफ प्रदर्शन किए। कई जगह भ्रष्टाचार के खिलाफ नारेबाजी भी हुई। इस प्रदर्शन की नींव दरअसल मार्च 2022 में ही पड़ चुकी थी। श्रीलंका में हुए इन प्रदर्शनों को अरगलाया आंदोलन का नाम दिया गया था। प्रदर्शन के बीच ही जनता राष्ट्रपति के आधिकारिक निवास में दाखिल हो गई और तत्कालीन राष्ट्रपति महिंदा राजपक्षे को देश छोड़कर भागना पड़ गया। फिलहाल पूर्व राष्ट्रपति और पीएम रानिल विक्रमसिंघे सरकारी फंड के दुरुपयोग के आरोप में जेल की सजा काट रहे हैं।

फरवरी 2021 में भारत के नॉर्थ-ईस्ट रीजन से सटे म्यांमार में सैन्य तख्तापलट हो गया। देश में तब से ही हालात लगातार अस्थिर हैं और जनता लोकतंत्र की बहाली के लिए संघर्ष कर रही है। 2025 में भी विश्वविद्यालयों, मंदिरों और कस्बों में विरोध प्रदर्शन जारी हैं। छात्रों, नागरिक समूहों और भिक्षुओं ने सेना के खिलाफ आवाज बुलंद करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। तख?तापलट के बाद से ही देश की नेता आंग सान सू की जेल में हैं और सेना सत्ता पर काबिज है। देश में इन हालातों में गिरफ्तारियां, गोलीबारी, इंटरनेट ब्लैकआउट और मीडिया पर पाबंदियां आम हैं। देश पर अंतरराष्ट्रीय दबाव भी बढ़ रहा है लेकिन सैन्य शासन अभी भी सख्ती से सत्ता पर काबिज है। 2021 में हुए प्रदर्शन को स्प्रिंग रेवोल्यूशन के नाम से जाना जाता है।

बांग्लादेश में अशांति का माहौल 2022 से ही बनने लगा था। मई 2024 में यह गुस्सा चरम पर पहुंच गया। राजधानी ढाका और अन्य शहरों में शेख हसीना सरकार के खिलाफ बड़े पैमाने पर प्रदर्शन हुए। आखिरकार अगस्त 2024 में शेख हसीना को देश छोड़ना पड़ा। शेख हसीना के खिलाफ जिन छात्रों ने विरोध प्रदर्शन कर सत्ता परिवर्तन किया था वही आज मौजूदा सरकार के खिलाफ भी खड़े होते दिख रहे हैं। बीते दिनों ढाका विश्वविद्यालय के परिसर में विरोध भी हुआ साथ ही आरोप लगाया था कि सेना एक साजिश के तहत शेख हसीना की अवामी लीग के लिए चुनाव में फायदा पहुंचाने की कोशिश हो रही है। कि कुछ दिन पहले ही बांग्लादेश की अंतरिम सरकार के सूचना सलाहकार और छात्र आंदोलन के प्रमुख नेताओं में से एक नाहिद इस्लाम ने मंत्रिमंडल से इस्तीफा दे दिया था। उन्होंने पिछले साल जुलाई में हुए विद्रोह में शामिल कार्यकर्ताओं द्वारा एक नई राजनीतिक पार्टी शुरू करने से पहले यह कदम उठाया था। यानी कि विद्रोह आज भी जारी है। पाकिस्तान भी पिछले दो सालों में दो बड़े प्रदर्शनों का गवाह बना है। मई 2023 में पूर्व प्रधानमंत्री इमरान खान की गिरफ्तारी ने पूरे पाकिस्तान में आग भड़का दी। लाहौर से लेकर इस्लामाबाद और रावलपिंडी तक उनके समर्थक सड़कों पर उतरे और कई जगहों पर हालात बेकाबू हो गए।

राष्ट्रीय सहारा
नई दिल्ली • बुधवार • 10 सितम्बर • 2025
www.rashtriyasahara.com

जेन-जी की बगावत

नेपाल की राजधानी काठमांडू में सोशल मीडिया पर प्रतिबंध और राजनीतिक भ्रष्टाचार के खिलाफ प्रदर्शन करने वाले कुछ लोगों की मौत होने के बाद स्थिति काबू से बाहर हो गई है। पुलिस के साथ हुई झड़पों में खुद को जेन-जी यानी युवा पीढ़ी बता रहे 22 प्रदर्शनकारियों की मौत हो गई है। काठमांडू के अलावा पूर्वी शहर इटहरी में दो लोग मारे गए। जगह-जगह कर्फ्यू लगा है, सेना सड़कों पर है। भारी झड़प व मौतों के बावजूद प्रदर्शनकारी पीछे हटने को राजी नहीं है। गृहमंत्री रमेश लेखक के बाद अब प्रधानमंत्री के.पी. शर्मा ओली ने भी घटना के बाद इस्तीफा दे दिया है। सरकार की तरफ से मिले संकेतों के अनुसार जल्द ही सोशल मीडिया से बैन हटाया जा सकता है।

सरकार के रवैये और भ्रष्टाचार के कथित आरोपों को लेकर युवाओं में जबरदस्त आक्रोश है। उग्र होते प्रदर्शन को देखते हुए संसद भवन, राष्ट्रपति भवन, प्रधानमंत्री आवास, शीतल निवास पर कर्फ्यू लगा है। अभी कुछ ही महीनों पहले नेपाल में राजशाही बहाल करने को लेकर आंदोलन हो चुका है। तब भी नाराज युवाओं द्वारा सरकार पर भ्रष्टाचार के आरोप लगाए गए थे। सरकार ने पिछले सप्ताह ही फेसबुक, इंस्टाग्राम, वाट्सएप जैसे छब्बीस सोशल मीडिया व मैसेजिंग प्लेटफॉर्म्स पर प्रतिबंध लगा दिया। सरकार का आरोप है, ये सोशल मीडिया कंपनियां कानूनों का पालन करने में कोताही कर रही हैं। चीन की सोशल मडिया कंपनी टिकटॉक द्वारा सभी नियमों का पालन किया है इसलिए उस पर प्रतिबंध नहीं लगा है। टिकटॉक पर चल रहे नेपोबेबी ट्रेंड हो रहा है, जिसमें नेताओं के बच्चों के ऐशो-आराम भरे जीवन की तस्वीरें व वीडियो वायरल किए जा रहे हैं। यह सच है कि बिला-वजह सोशल मीडिया को प्रतिबंधित करने से युवाओं में आक्रोश बढ़ना स्वाभाविक है। नेपाल में भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी व भाई-भतीजावाद को लेकर जनता में नाराजगी बढ़ती जा रही है। भ्रष्ट नेताओं के खिलाफ सख्त कार्रवाई न होने को पर भी नेपालियों में भारी निराशा है। वे देश की बदहाली के लिए राजनेताओं को दोषी मानते हैं। प्रदर्शनकारियों का आरोप है कि मीडिया वास्तविकता छिपाने में सरकार का पक्षकार बन गया है। वे इसे स्वतंत्रता पर हमला मान रहे हैं। जनता की ताकत को नजरंदाज करने वालों को यह समझना होगा कि नई पीढी निरंकुशता मौन होकर नहीं बर्दाश्त कर सकती। उसे अपने अधिकारों और ताकत का अंदाजा है। नेताओं को राजशाही वाले अंदाज त्यागने होंगे।

आधार को मानना होगा

विशेष गहन पुनरीक्षण के नाम पर बिहार में मतदाताओं को कई तरह के दस्तावेज जुटाने की आफत में में डाल रहे निर्वाचन आयोग को उच्चतम न्यायालय ने सख्त संदेश दे दिया है। इस बात से मतदाताओं को तो राहत मिलेगी साथ ही विपक्षी दलों के नेताओं की उन आशंकाओं पर भी कुछ विराम लगेगा जिससे उनमें बड़े पैमाने पर वोट काटे जाने की चिंता पैदा हो गई है। विपक्ष की आशंकाओं को आधार को निर्धारित दस्तावेजों की सूची में न रखने से बढ़ गई थी। शीर्ष अदालत ने सोमवार को निर्वाचन आयोग को स्पष्ट निर्देश दिया कि वह चुनावी राज्य बिहार में मतदाता सूची के विशेष गहन पुनरीक्षण (एसआईआर) में मतदाता की पहचान सुनिश्चित करने के लिए 'आधार' को 12वें निर्धारित दस्तावेज के रूप में शामिल करे। अभी तक

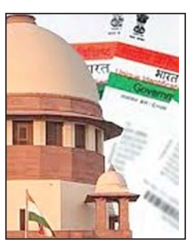

एसआईआर के लिए 11 दस्तावेज निर्धारित हैं जिन्हें मतदाताओं को अपने प्रपत्रों के साथ जमा करना है। यहां अदालत ने साफ कर दिया कि आधार को नागरिकता का प्रमाण नहीं माना जाएगा इसे सिर्फ पहचान के लिए स्वीकार किया जाए। आयोग को यह अधिकार दिया गया है कि मतदाता द्वारा प्रस्तुत आधार कार्ड की संख्या की वास्तविकता का पता लगा सकता है। अदालत के अनुसार यह साफ होना चाहिए कि केवल वास्तविक नागरिकों को ही मतदान करने की अनुमति हो। जाली दस्तावेज वालों को मतदाता सूची से बाहर रखा जाए। आयोग की दलील थी कि मसौदा मतदाता सूची में शामिल 7.24 करोड़ मतदाताओं में से 99.6 प्रतिशत ने दस्तावेज जमा कर दिए हैं और अब 'आधार' को 12वें दस्तावेज के रूप में शामिल करने के अनुरोध से कोई व्यावहारिक उद्देश्य पूरा नहीं होगा। शीर्ष अदालत ने आधार अधिनियम 2016 और जनप्रतिनिधित्व अधिनियम के प्रावधानों का हवाला दिया और कहा कि यह नागरिकता का प्रमाण नहीं है, लेकिन इसे पहचान के प्रमाण के रूप में स्वीकारा जा सकता है। आयोग ने सूचित किया था कि एसआईआर के तहत बिहार में तैयार की गई मसौदा मतदाता सूची में दावे, आपत्तियां और सुधार एक सितम्बर के बाद भी दायर किए जा सकते हैं, लेकिन मतदाता सूची को अंतिम रूप दिए जाने के बाद ही इन पर विचार किया जाएगा। मसौदा सूची में 65 लाख नाम कट चुके हैं। आयोग का कहना है कि इनमें मृत तथा स्थान बदल चुके लोग शामिल हैं तो विपक्ष का कहना है कि इनमें कोई अवैध प्रवासी या घुसपैठिया क्यों नहीं है जिनके नाम पर सारी कवायद की गई थी।

खुदकुशी रोकथाम दिवस/शिव मोहन यादव

उठाने होंगे ठोस कदम

21वीं सदी के आरंभ तक आत्महत्याओं का ग्राफ बहुत तीव्रता से आगे बढ़ता जा रहा था। विश्व में आत्महत्या रोकथाम के संबंध में 2003 में अंतरराष्ट्रीय आत्महत्या रोकथाम संघ और विश्व स्वास्थ्य संगठन की संयुक्त पहल पर 10 सितम्बर का दिन 'विश्व आत्महत्या रोकथाम दिवस' के रूप में मनाने की शुरुआत हुई। वैश्विक और भारतीय परिदृश्य में चौंकाने वाले आंकड़े देखने को मिलते हैं। डब्ल्यूएचओ के अनुसार, दुनियाभर में हर साल 7,20,000 से अधिक लोग आत्महत्या से मरते हैं। यह वैश्विक स्तर पर 15-29 वर्ष के युवाओं में मृत्यु का तीसरा प्रमुख कारण है।

भारत की बात करें तो राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) के आंकड़ों के अनुसार, भारत में 2022 में 1.71 लाख लोगों ने आत्महत्या की, जो 2021 की तुलना में 4.2 फीसद ज्यादा है। 2022 में प्रति एक लाख आबादी पर आत्महत्या की दर बढ़कर 12.4 हो गई। आत्महत्या करने वालों में सबसे ज्यादा 15 से 30 साल के लोग शामिल हैं। भारत में 2022 में 1.70 लाख लोगों ने खुदकुशी की। अध्ययनों से पता चलता है कि आत्महत्या से मरने वाले लगभग 50 से 90 फीसद व्यक्ति अवसाद, चिंता और द्विध्रुवी विकार जैसी मानसिक बीमारियों से पीड़ित होते हैं। भारत में लगभग 31,484 लोगों ने मानसिक तनाव के कारण आत्महत्या की। पारिवारिक समस्याओं के कारण 54,127 लोगों ने खुदकुशी की। वहीं, अकेलेपन या अवसाद जैसे कारणों में अकेलापन प्रमुख है। छात्रों के मामले में पढ़ाई का अनावश्यक दबाव, साथियों के साथ तुलना, और करियर को लेकर चिंता सबसे बड़ी वजहें हैं। इसके समाधान के लिए सामूहिक जिम्मेदारी और समन्वित प्रयासों की जरूरत है। खुली बातचीत, मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच बढ़ाना, सामाजिक सहायता प्रदान करना आत्महत्या रोकथाम के प्रमुख स्तंभ हैं। हर व्यक्ति की भूमिका महत्त्वपूर्ण है-चाहे वह परिवार का सदस्य हो, दोस्त हो, शिक्षक हो या नीति निर्माता। आइए, हम सब मिलकर एक ऐसा समाज बनाएं जहां हर व्यक्ति के जीवन का मूल्य हो और उसके मानसिक स्वास्थ्य को महत्ता दी जाए।

अनमोल वचन

नैतिकता महज एक रवैया है जो हम ऐसे लोगों के प्रति अपनाते हैं जिन्हें हम व्यक्तिगत रूप से नापसंद करते हैं

-आस्कर वाईल्ड

संपादकीय

संकेत कुछ अलग दिखते हैं

नेपाल में हिंसा

राजेश मणि

आज नेपाल का आंदोलन विश्व पटल पर चर्चा का विषय बन गया है। भारी हिंसा के बाद प्रधानमंत्री के.पी. शर्मा ओली और गृह मंत्री ने इस्तीफा दे दिया है। गौरतलब है कि पहले भी नेपाल में आंदोलन होते रहे हैं-मधेश आंदोलन, माओवाद आंदोलन। ये सभी आंदोलन अपने हक और अधिकार के लिए ही लड़ते रहे, परंतु बहुत ही कम समय में जो वर्तमान आंदोलन ने स्वरूप लिया है वह बहुत कुछ कह रहा है। 22 प्रदर्शनकारियों की मौत के बाद सरकार को झुकने के लिए मजबूर होना पड़ा।

दरअसल, इस ऐतिहासिक प्रदर्शन के पीछे सरकार द्वारा सोशल मीडिया पर (4 सितम्बर) प्रतिबंध लगाना रहा है। यह खबर पूरे नेपाल में आग की तरह फैल गई। आंदोलन की अगुवाई जेन जी समूह ने किया। जेन जी समूह 1997 से 2012 तक के बीच पैदा हुए लोगों का समूह है या यूं कह लीजिए नौजवानों का समूह है। सबसे बड़ी बात यह है कि किसी भी राजनीतिक संगठन से इस समूह का जुड़ाव नहीं है। जो तकनीकी रूप से भी सशक्त हैं या तमाम ऐसे तकनीकों का उपयोग करते हैं जिसमें सोशल मीडिया के भी सभी फॉर्म आते हैं। जेन जी समूह बांग्लादेश और श्रीलंका में भी चर्चा में हैं। युवाओं के समूह से 'नेपो किड' नाम से अभियान चलाया जिसमें उन्होंने सच बात की।

मसलन; राजनीतिक व्यक्तियों के परिवारों को अलग से तरजीह, राजनीतिक और प्रभावशाली व्यक्तियों के बच्चों को गलत तरीकों से अर्जित धन हासिल कर या उन बच्चों को विशेषाधिकार मिलना, उनका रहन-सहन, गाड़ियों में घूमना, पॉकेट खर्च सब अलग तरीक़े से दिखते थे। ये सारी बातें उन युवाओं के मन में चिढ़ और वैमनस्यता पैदा कर दिया, लेकिन वह ग्रुप कुछ कर नहीं पा रहा था, उनके सामने विवश था। इसके बाद सोशल मीडिया पर 'नेपो किड' नाम से अभियान चलाया गया, जिसमें इसके साथ उन राजनीतिक और प्रभावशाली लोगों के भ्रष्टाचार को भी धीरे-धीरे उजागर करने लगे। अब यह एक बड़ा समूह बन गया। जिसका परिणाम ये हुआ कि राजनीतिक और प्रभावशाली व्यक्ति सरकार पर दबाव बनाने लगे। दिन-प्रतिदिन उनके कारनामे सामने आ रहे थे। इसके प्रभाव में सरकार को सोशल मीडिया पर प्रतिबंध लगाना पड़ा। व्हाट्सएप, एक्स सहित 26 सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर प्रतिबंध लगाकर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को दबाने का आरोप लगाया था। इस दौरान प्रदर्शन हिंसक हो गया, जब प्रदर्शनकारियों ने संसद भवन के पास पुलिस के अवरोधकों को तोड़ दिया। प्रदर्शनकारियों को रोकने के आंसू गैस फिर गोली चलाया गया। जेन जी समूह प्रतिबंध के बाद और उग्र हो गया क्योंकि भ्रष्टाचार को भी इस आंदोलन के साथ जोड़ दिया गया। संसद

परिसर में घुसने को उतारू आंदोलनकारियों की भीड़ ने हिंसक रूप ले लिया। हिंसा और मौत के बाद कुछ मानवाधिकार संगठन भी जुड़ गए और न्याय की मांग करने लगे। अब एक कौतूहल का विषय यह भी है कि सरकार ने सभी सोशल मीडिया पर प्रतिबंध लगा दिया बावजूद इतने लोग इकट्ठा कैसे हो गए?

यहां यह जानना जरूरी है नेपाली नागरिक सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफार्मों का उपयोग दैनिक चर्या में करते हैं-मैसेंजर, वाइबर, टिक टॉक आदि पर नेपाल में खूब बातें की जाती हैं। उनके सामान्य कॉल से कम पैसे में बात हो जाती है। टिक टॉक ने सरकार को आश्वासन दिया था हम आप के साथ हैं। आपकी सूचना को लोगों तक पहुंचाएंगे। इस नाते टिक टॉक को प्रतिबंधित नहीं किया गया। यह आंदोलन कुछ अलग संकेत भी दे रहे हैं। सोशल मीडिया का इतना बड़ा ग्रुप तैयार हो गया है कि नौजवान या आम लोगों का भी बिना इसके दैनिक चर्या प्रारंभ नहीं हो रही है। वो अलग डिबेट का विषय है कि कितनी पॉजिटिविटी है, कितनी निगेटिविटी है, लेकिन चिंतन का विषय तो है। आंदोलन को देखते हुए भारतीय सीमा पर पुलिस और सशस्त्र सीमा बल (एसएसबी) मुस्तैद है। इंडो-नेपाल बॉर्डर 1751 किलोमीटर लंबी है जिसपर निगरानी बढ़ा दी गई है। भारत-नेपाल सीमा पर कर्फ्यू जैसे हालात हैं। प्रदर्शन का असर भारत पर भी पड़ा है। बॉर्डर के बहुत सारे बाजार नेपाल आधारित हैं। संकेत यह भी है कि लोकतंत्र के लिए भ्रष्टाचार और राजनीतिक वर्चस्व के जरिए विशेष व्यक्ति होना, विशेष दर्जा प्राप्त करना, विशेष रूप से धन अर्जित करना जैसे पहले भी नुकसानदायक रहा है आज भी है। यह आंदोलन दूसरे के लिए सीख भी हो सकता है।

समान नागरिक अधिकार लागू रहे, समानता बनी रहे और संविधान की रक्षा होती रहे। कुल मिलाकर इस समय नेपाल की राजनीति में भारी उथल-पुथल जारी है और आंदोलन अभी स्थगित नहीं हुआ है। कानून-व्यवस्था बनाये रखने की जिम्मेदारी नेपाल सरकार ने सेना को दी है । मंगलवार को नेपाल के युवाओं का उग्र रूप कई शहरों में देखने को मिला। मंगलवार दोपहर को प्रदर्शनकारियों ने नेपाल की संसद को फूंक दिया। प्रदर्शनकारियों ने इससे पहले प्रधानमंत्री ओली के निजी निवास के अलावा, कई नेताओं और पूर्व प्रधानमंत्रियों के निजी आवासों में तोड़फोड़ की। विदेश मंत्रालय ने मंगलवार को कहा कि भारत, नेपाल में विरोध-प्रदर्शनों के दौरान कई नौजवानों की मौत से बेहद दुखी है और उसे उम्मीद है कि शांतिपूर्ण तरीके से मुद्दों का समाधान हो जाएगा। मंत्रालय ने यह भी कहा कि भारत पड़ोसी देश के घटनाक्रम पर करीब से नजर रख रही है। विदेश मंत्रालय ने एक बयान में कहा, 'एक करीबी मित्र और पड़ोसी होने के नाते, हम उम्मीद करते हैं कि सभी पक्ष संयम बरतेंगे और शांतिपूर्ण तरीकों व बातचीत के जरिए किसी भी मुद्दे का समाधान करेंगे।'

प्रदर्शनकारियों ने पूर्व पीएम शेर बहादुर देउबा को घर में घुसकर पीटा। वहीं, वित्त मंत्री विष्णु पोडौल को काठमांडू में उनके घर के नजदीक दौड़ाकर पीटा। इसका वीडियो वायरल हो रहा है। इन हिंसक घटनाओं के बीच खबर है कि प्रधानमंत्री ओली को सेना अज्ञात स्थान पर ले गई है। इस हिंसा में अब तक 22 लोग मारे जा चुके हैं, जबकि 400 से ज्यादा लोग घायल हैं। युवा बेरोजगारी, पलायन, चौपट हो चुकी अर्थव्यवस्था से पहले ही तनाव में था, वहीं सोशल मीडिया प्लेटफार्म बंद होने से इस आक्रोश को चिंगारी मिल गई। लगता है नेपाल के माहौल को खराब करने में किसी तीसरे का हाथ है।

(लेख में विचार निजी हैं)

> यहां यह जानना जरूरी है नेपाली नागरिक सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफार्मों का उपयोग दैनिक चर्या में करते हैं-मैसेंजर, वाइबर, टिक टॉक आदि पर नेपाल में खूब बातें की जाती हैं। उनके सामान्य कॉल से कम पैसे में बात हो जाती है। टिक टॉक ने सरकार को आश्वासन दिया था हम आप के साथ हैं। आपकी सूचना को लोगों तक पहुंचाएंगे। इस नाते टिक टॉक को प्रतिबंधित नहीं किया गया। यह आंदोलन कुछ अलग संकेत भी दे रहे हैं

'मीठी नीम' के पत्तों में छिपे हैं कई गुण

- करी पत्ता से लगा तड़का जहां खाने में स्वाद बढ़ा देता है, वहीं शरीर को कई बीमारियों से भी बचाता है। वैज्ञानिक शोध और आयुर्वेद, दोनों करी पत्ता से मिलने वाले फायदों की पुष्टि करते हैं। आयुर्वेद में करी पत्ता को 'कृष्णनिंब' कहा जाता है। करी को 'मीठी नीम' भी कहा जाता है
- सिद्ध और यूनानी चिकित्सा पद्धतियों में भी इसका उपयोग पाचन, नेत्र रोगों और त्वचा संबंधी समस्याओं के इलाज में किया जाता है। अमेरिकन नेशनल लाइब्रेरी ऑफ मेडिसिन के मुताबिक, करी पत्ते में कार्बाजोल एल्कलॉइड्स, विटामिन्स, एंटीऑक्सीडेंट्स जैसे तत्व मौजूद होते हैं, जो शरीर को कई बीमारियों से दूर रखते हैं। डायबिटीज के मरीजों के लिए तो यह पत्ता किसी वरदान से कम नहीं है

(मीडिया इनपुट्स)

SIR की असली चाल यही थी-
"जो दस्तावेज सबके पास हैं, उन्हें मानेंगे नहीं;
जो लोगों के पास नहीं है, वही मांगेंगे।'
सुप्रीम कोर्ट के आदेश ने इस षड्यंत्र को तोड़ दिया।
आधार अब 12वां वैध दस्तावेज है, इससे बिहार ही नहीं, पूरे देश में करोड़ों नागरिकों का मताधिकार बचा।

योगेन्द्र यादव, सामाजिक कार्यकर्ता
@_YogendraYadav

एशियाई हॉकी | मनोज चतुर्वेदी

पूरी लय में है भारतीय टीम

भारतीय हॉकी टीम राजगीर में एशिया कप हॉकी चैंपियनशिप होने से कुछ पहले तक उसे अच्छे प्रदर्शन के लिए याद नहीं किया जा रहा था। वैसे भी भारतीय टीम फाइनल जैसे महत्त्वपूर्ण मुकाबलों में बेहतरीन प्रदर्शन के लिए नहीं जानी जाती है, लेकिन इस चैंपियनशिप के फाइनल में पिछली चैंपियन दक्षिण कोरिया के खिलाफ भारत ने जिस तरह का प्रदर्शन किया, उससे लगने लगा है कि टीम फिर से ऊंचाइयों की तरफ बढ़ने के लिए तैयार है। भारत ने दक्षिण कोरिया पर 4-1 से जीत पाकर चौथी बार एशिया कप खिताब ही नहीं जीता बल्कि अगले साल अगस्त में नीदरलैंड और बेल्जियम में होने वाले विश्व कप के लिए भी क्वालिफाई कर लिया।

भारतीय टीम एफआईएच प्रो लीग में खराब प्रदर्शन के बाद यहां आई थी। इस लीग के आखिरी यूरोपीय चरण में भारत ने आठ में से सात मैच हारकर बेहद निराश कर दिया था। इस प्रदर्शन की वजह से टीम नौ टीमों की लीग में आठवें स्थान पर रही। वह रेलीगेट होने से एक स्थान से बच गई। इसकी वजह से पेरिस ओलंपिक में कांस्य पदक दिलाने वाले कोच क्रेग फुल्टोन की काबिलियत पर भी सवाल उठने लगे थे। एशिया कप में भारत के शुरुआती प्रदर्शन से स्थिति और बिगाड़ दी। इन प्रदर्शनों को देखने से भारत की क्षमता पर संदेह व्यक्त किया जाने लगा, लेकिन भारत ने सुपर फोर में चीन के खिलाफ और फिर फाइनल में दक्षिण कोरिया के खिलाफ शानदार प्रदर्शन से अपनी फिर से धमक बना दी। भारतीय कोच एफआईएच प्रो लीग में भारतीय प्रदर्शन के बारे में कहते हैं कि इसमें खेले तो अच्छा पर नतीजे अच्छे नहीं निकाल सके। फुलटोन ने कहा, 'हम एफआईएच प्रो लीग में खेले तो अच्छा पर परिणाम अच्छे नहीं निकाल सके। पर हमने इसके बाद खामियों पर काम किया। ऑस्ट्रेलिया दौरे पर हाल-फिलहाल का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन किया।' सही मायनों में इस ऑस्ट्रेलियाई दौरे ने ही एशिया कप की सही तैयारी कराकर जीत में अहम भूमिका निभाई। अब इस प्रदर्शन के बाद देश के हॉकीप्रेमी फिर से उत्साहित हो गए हैं और उन्हें टीम पर भरोसा बन गया है कि हम फिर से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर झंडे गाड़ेंगे। भारत ने चीन हो या दक्षिण कोरिया दोनों के ही खिलाफ आक्रामक अंदाज में शुरुआत करके पहले कुछ मिनटों में गोल जमाकर खेल

पर दबदबा बनाने की रणनीति अपनाई और यह रणनीति कारगर साबित हुई। हरमनप्रीत की अगुआई वाला डिफेंस हो या अभिषेक की अगुआई वाली अग्रिम पंक्ति बहुत दमदार नजर आई। हरमनप्रीत का हमलों में आगे तक जाना और अभिषेक का डिफेंस के समय सर्किल में रहना टीम की फिटनेस का बताता है। वहीं जर्मनप्रीत, हार्दिक सिंह की अगुआई वाली हाफ लाइन भी गेंद को लगातार आगे रखने में सक्षम नजर आई। भारतीय टीम यदि इसी तरह खेलती रही, तो बहुत संभव है कि 2028 के लॉस एंजिल्स ओलंपिक में पदक का रंग बदल जाए और अगले साल विश्व कप में भारतीय टीम पोडियम पर चढ़ती नजर आए। भारतीय टीम इस चैंपियनशिप में अपने प्रदर्शन में लगातार सुधार करती नजर आई। आखिर में वह एक इकाई के तौर पर खेलती दिखी। क्रेग फुल्टोन के कोच के रूप में आने के बाद भारतीय टीम एरियल पासों का इस्तेमाल करने लगी है। आमतौर पर एशिया की टीमें एरियल पासों वाले खेल को कम ही खेलती दिखती रहीं हैं। पर भारतीय टीम का अब यह भी प्रमुख अस्त्र बन गया है। इस मामले में भारतीय कप्तान हरमनप्रीत सिंह ने महारत हासिल कर ली। उनके नपे-तुले स्कूपों पर कई बार प्रतिद्वंद्वी ठगे से नजर आए। दक्षिण कोरिया भी इस खूबी की वजह से मैच में अधिकांश समय बचाव करती नजर आई। भारतीय कप्तान हरमनप्रीत वैसे तो किसी तारीफ के मोहताज नहीं हैं। वह पिछले पेरिस ओलंपिक में सर्वाधिक गोल जमाने वाले रहे हैं। वह अनुभव के साथ निरंतर निखरते नजर आ रहे हैं। पेनल्टी कॉर्नरों पर गोल जमाने में तो वह महारत रखते ही हैं। साथ ही हमले बनाने में भी उनकी अहम भूमिका रहने लगी है। भारत का पहले मिनट में खाता खुलवाने में भी उनकी भूमिका अहम रही। उन्होंने पहले ही मिनट में कोरियाई डिफेंस को छकाते हुए सर्किल में खड़े सुखजीत को पास दिया और उन्होंने रिवर्स शॉट से गोल भेद दिया।

भारत के चौथे गोल को जमाया भले ही अमित रोहिदास ने पर इसमें भी हरमनप्रीत की भूमिका बेहद खास रही। क्रेग फुलटोन ने कहा, 'मैंने पहले कहा था कि हम एशिया में नंबर एक बनना चाहते हैं और टीम में गहराई लाना चाहते हैं। हमें लगता है कि हम वहां पहुंच रहे हैं। हमने अच्छी तैयारी की और अच्छा प्रदर्शन किया। टीम के खिलाड़ी बेहद समझदार हैं। इसलिए वह जो भी कोशिश करते हैं, उसे अंजाम तक पहुंचाते हैं। हम विरोधी टीम के साथ अपनी टीम पर भी बहुत होम वर्क करते हैं और यह उसका ही परिणाम है।' भारत के विश्व कप के लिए क्वालिफाई करने से अब उन्हें इसकी तैयारी के लिए पूरा एक साल मिलेगा। इसका हम सही उपयोग कर सकें तो 1975 के बाद पहली बार भारत खिताब की उम्मीद कर सकता है।

(लेख में विचार निजी हैं)

सहायक पक्ष | श्रीराम शर्मा आचार्य

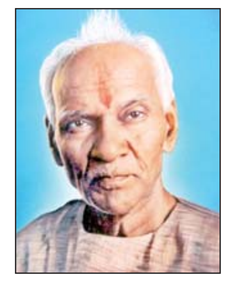

लोग मूर्तिकार को देखने के लिए आतुर हो रहे थे। इतने में स्थानीय आयोजक एक लड़की को पकड़कर लाए जिसके कपड़े जरा-जीर्ण हो रहे थे, और बाल बिखरे। रक्षकों ने बताया कि यह लड़की कलाकार का नाम जानती है किन्तु बताती नहीं। स्थानीय कानून के अनुसार गुलाम व्यक्ति कला में कोई रुचि नहीं ले सकता। लड़की की चुप्पी पर उसे जेलखाने में डाल देने का आदेश हुआ। इतने में एक किशोर सामने आया और 'क्रियो' नाम से अपना परिचय दिया और दृढ़ता के साथ बोला मैंने कला को भगवान मानकर पूजा की है, आपका कानून यदि अपराध मानता है तो हम अपराधी हैं। किशोर की दृढ़ता, अल्पायु में कला के प्रति अपार लगन और कलाकृति के अनुपम सौंदर्य ने अध्यक्ष पेरी क्लीज को मुग्ध कर दिया कानून की कठोरता हृदय को द्रवीभूत होने से रोक न सकी और पेरी क्लीज ने घोषणा की 'क्रियो' दण्ड का नहीं सम्मान और पुरस्कार का पात्र है। हमें यह कानून बदलना होगा जिससे कला देवता का अपमान होता हो। उस दिन से पेरी क्लीज के प्रयत्नों से कानून बदला गया। गरीबी और विपन्न परिस्थितियों में भी किशोर कलाकार की कला के प्रति अपार लगन ध्येय के प्रति दृढ़ निष्ठा ने न केवल उसे विश्व के मूर्धन्य कलाकारों की श्रेणी में पहुंचा दिया वरन उस कानून में भी परिवर्तन करने के लिए बाध्य किया जो अमानवीय था। सच तो यह है कि प्रतिकूलताएं मानवी पुरुषार्थ की परीक्षा लेने आती हैं। और व्यक्तित्व भी अधिक प्रखर परिपक्व विपन्न परिस्थितियों में ही बनता है। लायोन्स नगर में एक भोज आयोजित था। नगर के प्रमुख विद्वान साहित्यकार एवं कलाकार आमंत्रित थे। प्राचीन ग्रीस की पौराणिक कथाओं के चित्रों के संबंध में उपस्थित विद्वानों के बीच बहस छिड़ गई और विवादों का रूप लेने लगी। गृह स्वामी ने इस स्थिति को देखकर नौकर को बुलाया और संबंधित विषय में विवाद को निपटाने के लिए कहा सभी को आश्चर्य हुआ कि भला नौकर क्या समाधान देगा। किंतु नौकर की विश्लेषणात्मक तार्किक विवेचना को सुनकर सभी हतप्रभ रह गए और तत्काल ही अपनी इस गलती का ज्ञान हुआ कि विद्वता प्रतिभा किसी व्यक्ति विशेष की बपौती नहीं है।

रीडर्स मेल

जड़ों से जुड़कर रहें

आज की दुनिया बहुत तेज हो गई है। हर कोई बस आगे बढ़ने की दौड़ में लगा है, करियर, पैसा, लाइफस्टाइल, लेकिन इसी भागदौड़ में हम कहीं-न-कहीं अपने रिश्तों और अपनी जड़ों को भूलते जा रहे हैं। ऐसे में श्राद्ध हमें एक मौका देता है थोड़ा रुककर पीछे देखने का। ये वो समय है जब हम अपने पूर्वजों-दादा-दादी, नाना-नानी, माता-पिता और उनसे पहले की पीढ़ियों को याद करते हैं, जिन्होंने हमें ये जिंदगी दी, हमें पहचान दी। श्राद्ध कोई डराने वाली या सिर्फ पुरानी परंपरा नहीं है। यह तो एक भावनात्मक जुड़ाव है। एक 'थैंक यू' कहने का तरीका है उन लोगों के लिए, जो अब हमारे साथ नहीं हैं, लेकिन जिनकी वजह से हम आज यहां तक पहुंचे हैं। हम चाहें पूजा करें या न करें, लेकिन अगर हम दिल से उन्हें याद करें, उनके बारे में बातें करें तो वही असली श्रद्धांजलि होती है। पितृ पक्ष हमें यह सिखाता है कि अगर हमें अपना आज और कल बेहतर बनाना है, तो पहले अपने अतीत को समझना और अपनाना होगा। तो इस बार श्राद्ध पर सिर्फ रीति-रिवाज निभाने के बजाय थोड़ा वक्त निकालो, अपने बुजुर्गों को याद करो, और अपने बच्चों को भी बताए कि वे कितनी खास धरोहर का हिस्सा हैं।

महेश चमोला, देहरादून

स्वदेशी शिक्षण संस्थान खुलें

हमारे पूर्वजों ने शिक्षा को केवल रोजगार पाने का साधन नहीं माना, बल्कि चरित्र निर्माण और राष्ट्र सेवा का मार्ग बताया। आज जब बड़ी संख्या में छात्र विदेश जाकर शिक्षा ले रहे हैं, तो इससे न केवल आर्थिक बोझ बढ़ता है, बल्कि प्रतिभा का पलायन भी होता है। यदि भारत में ही विश्वस्तरीय संस्थान, शोध केंद्र और नवाचार की परंपरा विकसित की जाए, तो हमारे युवा यहीं रहकर देश की उन्नति में योगदान देंगे। इसलिए आवश्यक है कि शिक्षा नीति में ऐसे कदम उठाए जाएं, जो स्वदेशी गौरव, आत्मनिर्भरता और राष्ट्रभक्ति को प्रोत्साहित करें। जब हमारे विद्यार्थी अपने देश की धरती पर रहकर विश्वस्तरीय शिक्षा प्राप्त करेंगे, तब वे केवल अपने सपनों को नहीं, बल्कि भारत के सपनों को भी साकार करेंगे। यही सच्चे अर्थों में 'शिक्षा में स्वदेशी' की सार्थकता है।

आयुष्मान पाण्डेय, लखनऊ विश्वविद्यालय

साइकिल का इस्तेमाल जरूरी

ऐसी कौन सी वस्तु है जहां सबसे अधिक पैसा आता है। आप बताएं न बताएं हम बता देते हैं वह है पेट्रोल पंप। ये हाइवे पर होते हैं और शहर में भी। शहर में ऐसी जगहों पर वाहन वाले विशेषकर टू व्हीलर वालों की भीड़ रहती है। बेचारा आम दुकानदार दस, बीस, पचास के सौदा के लिए लोगों की राह तकता है, वहीं ये पेट्रोल पंप वाले पूरे दिन बड़ा लेन-देन करते हैं। सरकार की बड़ी आमदनी में से पेट्रोल से होने वाला मुनाफा भी है। वहीं आम-ओ-खास की कमाई में अच्छा खासा खर्च इसी की भेंट चढ़ जाता है। शहर में टू व्हीलर वालों की वजह से शोर व जाम दोनों लगते हैं। तो क्यों ना ऐसी सुविधाजनक चीज देखें जो रोड पर ना जाम लगाए ना शोर करें। साथ ही किफायत का ऐसा पाठ पढ़ाए की आपकी आय बढ़ती दिखे। शरीर भी फिट रहे। ऐसा बढ़िया आइडिया साइकिल ही है। साइकिल से आप रोजाना के काम आसानी से कर सकते हैं। साइकिल को सम्मान की दृष्टि से देखें।

सीमा गुप्ता, बरेली

letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा
• राष्ट्रीयता • कर्तव्य • समर्पण
वर्ष-35, अंक 27

सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक **जिया कादरी** द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन प्रेस, सी-2,3, 4 सेक्टर-11, नोएडा में मुद्रित तथा तथा 1209-1210, बारहवां तल, नवरंग हाउस, 21 के.जी. मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित। । **स्थानीय संपादक - रत्नेश मिश्र*** ।
दूरभाष - दिल्ली कार्यालय -011-23352369, 011-23352372, **दूरभाष - नोएडा प्रेस** 0120-2444755, 2444756 **फैक्स** - 2550750
आर.एन.आई. सं. 53469/91, पंजीकरण संख्या UP/BR /GZB- 38/2024-2026
*इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन तथा कानूनी मामलों के लिए उत्तरदायी

हो सकता है मैं आपके विचारों से सहमत न हो पाऊं फिर भी विचार प्रकट करने के आपके अधिकारों की रक्षा करूंगा। –वाल्तेयर

राजस्थान पत्रिका
• संस्थापक •
कर्पूर चन्द्र कुलिश

लोकतंत्र में जन अपेक्षाएं पूरी करना हो प्राथमिकता

पड़ोसी देश नेपाल में पिछले दिनों सरकार के खिलाफ चला ऑनलाइन अभियान बाहरी हस्तक्षेप के कारण था या वहां की जनता की सहज नाराजगी यह बाद में सामने आएगा। लेकिन इतना जरूर है कि लोकतंत्र में जनता की उम्मीदों को पूरा करना किसी भी लोकतांत्रिक सरकार की प्राथमिकता में रहना चाहिए। पिछले दो दिन से हिंसा की आग में सुलग रहे नेपाल में प्रधानमंत्री को पद से इस्तीफा देना पड़ा है। प्रदर्शनकारियों का गुस्सा यहां तक पहुंच गया कि वहां संसद भवन में तोड़-फोड़ करने के साथ-साथ कई नेताओं के आवास तक आग के हवाले कर दिए गए। काठमांडू के साथ-साथ नेपाल के दूसरे शहरों में सड़कों पर उतरने वालों ने आंदोलन को जेन-जी प्रोटेस्ट का नाम दिया है।

इससे पहले सोशल मीडिया पर चलाए जा रहे अभियान में नेताओं के बच्चों की ऐशो-आराम वाली जिंदगी की तस्वीरें वायरल की जा रही थीं। लोगों को लग रहा था कि सत्ता में बैठे लोग अपने बच्चों को फायदा पहुंचा रहे हैं और आम आदमी बदहाली का जीवन बिताने को मजबूर है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में जनप्रतिनिधि ईमानदार व पारदर्शी शासन का वादा करके सत्ता में आते हैं। ऐसे में उनका यह दायित्व भी बन जाता है कि वे लोगों की अपेक्षाओं के अनुरूप काम तो करें ही भ्रष्टाचार मुक्त शासन भी दें। नेपाल में राजशाही की जगह लोकतांत्रिक प्रणाली हालात बदलने की उम्मीद के साथ अपनाई गई थी, लेकिन अपेक्षाओं के विपरीत बने परिदृश्य ने वहां लोगों को सड़कों पर आने को मजबूर कर दिया। इस आंदोलन में 13 से 28 आयुवर्ग के युवा और विद्यार्थी ज्यादा हैं, जो सोशल मीडिया पर लगाए गए नेपाल सरकार के प्रतिबंध को अभिव्यक्ति की आजादी पर हमला बता रहे हैं। हालांकि बेकाबू हुए हालात के बीच नेपाल सरकार को यह प्रतिबंध भी वापस लेना पड़ा है। समूचा घटनाक्रम कोई एकाएक हुआ हो ऐसा भी नहीं है। नेपाल में सोशल मीडिया पर लगाया गया बैन इसका तात्कालिक कारण जरूर हो सकता है, लेकिन अहम बात तो यह है कि वहां युवाओं में लंबे समय से भ्रष्टाचार के खिलाफ पनप रहे आक्रोश की हर स्तर पर अनदेखी की गई। सड़कों पर उतरकर आंदोलन को हिंसक रूप देने वालों का भी यही आरोप है कि सरकार विरोधी प्रदर्शनों से बौखलाकर ही अभिव्यक्ति की आजादी का माध्यम बने सोशल मीडिया पर प्रतिबंध लगाया गया है। एक पक्ष यह भी है कि सोशल मीडिया के अपने फायदे-नुकसान हैं। नुकसान यह कि इसके जरिए भ्रामक सूचनाएं देकर जनभावनाओं को आसानी से भड़काया जा सकता है।

आने वाले दिन नेपाल में सियासी उथल-पुथल के रहने वाले हैं। इस बीच भारत सरकार ने भारतीय नागरिकों को नेपाल की यात्रा स्थगित रखने और नेपाल में मौजूद भारतीयों को सावधानी बरतने की सलाह दी है। भारतीयों की सुरक्षा को लेकर पर्याप्त सतर्कता बरतने की आवश्यकता है।

युवाओं का आक्रोश: भ्रष्टाचार और बेरोजगारी से परेशान युवा सोशल मीडिया बैन करने से भड़क उठा

नेपाल में जेन-जी आंदोलन के राजनीतिक आयाम

डॉ. अमित सिंह
एसो. प्रोफेसर
राष्ट्रीय सुरक्षा विशिष्ट अध्ययन केंद्र, जेएनयू
@patrika.com

जब नेपाल में एक नई अंतरिम सरकार का जन्म होने वाला है तो भारत को प्रो-एक्टिव रहना होगा। क्योंकि भारत और नेपाल का रोटी-बेटी का नाता है, एक ऐतिहासिक सांस्कृतिक संबंध भी हैं। वहीं, नेपाल में सदियों से रह रहे मधेशियों की पीड़ा भी भारत साझा करता है।

नेपाल में 8 सितंबर से शुरू हुए देशव्यापी जेन-जी आंदोलन से बिगड़े हालात के बाद प्रधानमंत्री के.पी. शर्मा ओली को आखिर अपने पद से इस्तीफा देकर देश भी छोड़ना पड़ा। वर्तमान में नेपाल की राजनीतिक स्थिति वैसी ही है जैसी कुछ समय पहले श्रीलंका और बांग्लादेश की थी जहां राजपक्षे और हसीना को इस्तीफा देकर देश छोड़ना पड़ा था। ओली ने भी यही किया और ऐसा कहा जा रहा है कि वो दुबई चले गए हैं। ओली की पार्टी की विचारधारा एवं उनकी सरकार की चीन से काफी नजदीकियां रहीं। उनको चीन की कठपुतली भी कहा जाता रहा है, फिर भी वे चीन नहीं गए। उनकी छवि भारत विरोधी रही है।

वैसे नेपाल के लोगों का मानना है कि माओवादी एक खूनी क्रांति के माध्यम से सत्ता में आए, जिसमें करीब 16 हजार लोगों की जानें गईं और राजशाही का अंत हुआ लेकिन माओवादियों ने आम जनता से जो वादे किए, जो सपने दिखाए, वे पूरे नहीं किए और भोग-विलासिता में लग गए। नेपाल का भी वेनेजुएला जैसा हाल होता जा रहा था इसलिए युवाओं ने विरोध प्रकट किया और भ्रष्ट माओवादी सरकार को बाहर का रास्ता दिखा दिया। नेपाल में कई लोग चाहते हैं कि वहां राजशाही आए और एक बार फिर से नेपाल हिंदू राष्ट्र बन जाए। साथ ही नेपाल में चल रही सभी अनैतिक गतिविधियां समाप्त हो जाएं। ऐसा होना भारत के भी पक्ष में है क्योंकि पिछले कुछ सालों से नेपाल भारत विरोधी गतिविधियों का एक बड़ा अड्डा बन गया है। कई विश्लेषकों का ऐसा भी मानना है कि नेपाल की वर्तमान राजनीतिक अस्थिरता के पीछे विदेशी ताकतों का हाथ है लेकिन वहां की राजनीतिक अस्थिरता के प्रमुख कारणों में तीव्र पक्षपातपूर्ण राजनीति, बार-बार बदलते गठबंधन, कमजोर सरकारें, भ्रष्टाचार, सत्ता संघर्ष, नेताओं की अक्षमता और जनता की बढ़ती हताशा शामिल हैं। नेपाल के कुछ वर्गों द्वारा राजशाही की वापसी की मांग और उसको लेकर प्रदर्शन भी अस्थिरता को बढ़ावा देते हैं। नेपाल में अक्सर सरकारें बदलती रहती हैं, जिससे स्थिरता नहीं आ पाती। 2008 से अब तक 14 सरकारें बदली जा चुकी हैं।

ओली सरकार पर भ्रष्टाचार के आरोप लगते रहे हैं, जिसे लेकर विपक्षी दलों ने भी सरकार के खिलाफ मोर्चा खोल दिया था। नेपाल को हाल ही एफएटीएफ की ग्रे लिस्ट में भी शामिल किया गया, जिसे लेकर भी ओली सरकार पर दबाव था। विपक्षी दल इसे सरकार की विफलता के रूप में देख रहे हैं और ओली के इस्तीफे की मांग कर रहे थे। आखिरकार वहां के लाखों युवा सड़कों पर उतर आए और निवर्तमान सरकार को उखाड़ फेंका। हाल में ओली सरकार ने विभिन्न सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म (चाइनीज एप टिक-टॉक को छोड़कर) फेसबुक, इंस्टाग्राम, यूट्यूब समेत 26 प्लेटफॉर्म पर बैन लगा दिया था। इस बैन ने वर्षों से सरकार के खिलाफ बढ़ रहे असंतोष की आग में घी का काम किया तथा सोमवार से काठमांडू और कई बड़े शहरों में सरकार के खिलाफ जबर्दस्त विरोध प्रदर्शन जारी हैं। इसमें 20 से ज्यादा लोगों की मौत हो चुकी है तथा 300 से ज्यादा लोग घायल बताए जा रहे हैं।

दरअसल पिछले कुछ दिनों से सोशल मीडिया पर नेपाल की राजनीति में सक्रिय नेताओं के बच्चों तथा के.पी. शर्मा ओली के परिवार की आलीशान जिंदगी पर एक वीडियो वायरल हुआ और सरकार के खिलाफ माहौल बनने लगा, जिसको रोकने के लिए उन्होंने सोशल मीडिया पर प्रतिबंध लगा दिया। नेपाल का युवा भ्रष्टाचार और बेरोजगारी से तो पहले से ही परेशान था लेकिन सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स बैन करने की वजह से ज्यादा नाराज हो गया। प्रदर्शनकारियों ने इसे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर हमला माना और वे उग्र हो गए, नेपाल की संसद को जला दिया गया, कई नेताओं के घरों एवं दफ्तरों को भी फूंक डाला, युवाओं ने विपक्ष के नेताओं को भी नहीं बख्शा।

नेपाल की वर्तमान राजनीतिक स्थिति भारत के लिए भी चिंता का विषय है, इसलिए नई दिल्ली की पैनी नजर काठमांडू में तेजी बदलते हुए घटनाक्रमों पर है। भारत नहीं चाहता कि नेपाल की राजनीतिक अस्थिरता का दुष्प्रभाव भारत पर या भारत-नेपाल संबंधों पर पड़े। दरअसल भारत आज चारों तरफ फेल्ड-स्टेट से घिरा है। बांग्लादेश में जिस प्रकार से सत्ता परिवर्तन हुआ और एक तरह से भारत विरोधी अंतरिम सरकार यूनुस के नेतृत्व में बनी। म्यांमार में सिविल वॉर अभी भी जारी है- सैनिक शासन है। श्रीलंका की आर्थिक बदहाली किसी से छिपी नहीं है। मालदीव में बड़ी मुश्किलों से हालत भारत के पक्ष में आए हैं। पाकिस्तान में आसिफ मुनीर का कद लगातार बढ़ रहा है, ऐसे में जब नेपाल में एक नई अंतरिम सरकार का जन्म होने वाला है तो भारत को प्रो-एक्टिव रहना होगा। क्योंकि भारत और नेपाल का रोटी-बेटी का नाता है, एक ऐतिहासिक सांस्कृतिक संबंध भी हैं और नेपाल की माओवादियों की सरकार ने जिस प्रकार काली नदी, लिपुलेख, लिम्पियाधुरा आदि को लेकर सीमा विवाद को हवा दी, वह किसी से छिपा नहीं है। नेपाल में सदियों से रह रहे मधेशियों की पीड़ा भी भारत साझा करता है। इसलिए भारत को चाहिए कि वह नेपाल की स्थिति पर नजर ही नहीं रखे बल्कि नेपाल में एक नए लोकतंत्र की स्थापना में नेपाल की मदद भी करे ताकि वहां शांति स्थापित हो पाए।

फैक्ट फ्रंट

गुलाबी डॉल्फिन

अमेजन नदी में रहने वाली गुलाबी डॉल्फिन को स्थानीय भाषा में बोटो कहते हैं। यह डॉल्फिन अपनी खास गुलाबी रंगत और अनोखे गुणों के लिए पूरी दुनिया में मशहूर है। यह ताजे पानी में रहने वाली डॉल्फिन है, जो समुद्री डॉल्फिन से अलग होती है। इसका वैज्ञानिक नाम इनिया जेफ्रेन्सिस है और यह अमेजन और ओरिनोको नदियों के क्षेत्र में पाई जाती है। गुलाबी डॉल्फिन की शारीरिक बनावट बहुत खास है। यह 2 से 2.5 मीटर लंबी होती है और वजन 160 से 180 किलोग्राम तक हो सकता है। इसके शरीर का रंग जन्म के समय ग्रे होता है लेकिन उम्र बढ़ने के साथ यह गुलाबी हो जाता है खासकर नर में यह रंग गहरा होता है। यह रंग खून की नलिकाओं के त्वचा के पास होने और गतिविधि के दौरान रक्त प्रवाह बढ़ने से आता है। इसके सिर पर एक छोटा सा उभार होता है जो गायब डोर्सल विंग की जगह लेता है। लंबी और पतली चोंच, छोटी आंखें और लचीला गला इसे जटिल नदियों में आसानी से तैरने में मदद करता है। यह डॉल्फिन अत्यंत बुद्धिमान मानी जाती है। यह मछलियों, केकड़ों और छोटे जीवों का शिकार करने में निपुण होती है।

मोटिवेशनल स्पार्क्स

कठिनाइयों को अपने लिए अवसर बनाएं

जीवन किसी के लिए भी आसान नहीं होता। हर व्यक्ति को कहीं-न-कहीं संघर्षों का सामना करना पड़ता है। इन संघर्षों को पार करने के लिए केवल शारीरिक क्षमता या बाहरी साधन ही नहीं, बल्कि मानसिक मजबूती और सकारात्मक दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है। अमरीकी मोटिवेशनल स्पीकर, कॉमेडियन, पैरा ओलंपियन स्कीयर और लेखक जॉश सनडक्विस्ट की सोच हमें यही सिखाती है कि जीवन की कठिनाइयों को बोझ मानने के बजाय उन्हें ऊर्जा और प्रेरणा का स्रोत बनाया जा सकता है।

हम अक्सर उन परिस्थितियों से जूझते रहते हैं, जिन्हें बदल पाना हमारे हाथ में नहीं होता लेकिन जॉश का मानना है कि जीवन में दो तरह की बाधाएं होती हैं- पहली, जिन्हें मेहनत और संकल्प से पार किया जा सकता है और दूसरी, जिन्हें हमें स्वीकार करना पड़ता है। ऐसी परिस्थितियों में संघर्ष करने के बजाय उन्हें जीवन का हिस्सा मान लेना ही सबसे बड़ी जीत है। जब हम यह स्वीकार कर लेते हैं कि यह मेरी वास्तविकता है और इसी के साथ आगे बढ़ना है, तभी हम अपनी ऊर्जा को सही दिशा में लगा पाते हैं। जीवन में प्रेरणा पाने का सबसे अच्छा तरीका है कि हमारे सामने कोई न कोई लक्ष्य हो। लक्ष्य हमें न केवल दिशा देते हैं, बल्कि कठिन समय में आगे बढ़ने का साहस भी प्रदान करते हैं। जॉश का कहना है कि हमें हमेशा अपने लिए एक फिनिश लाइन तय करनी चाहिए- चाहे वह छोटी हो या बड़ी। वह बताते हैं कि किसी लक्ष्य को हासिल करने की कोशिश ही हमें हर दिन कुछ नया करने की प्रेरणा देती है। बिना लक्ष्य के जीवन एक भटके हुए जहाज की तरह हो जाता है, जो अपनी मंजिल कभी नहीं पा सकता। अक्सर कठिनाइयां हमें थका देती हैं, लेकिन जॉश की सोच है कि इन्हें अवसर के रूप में देखा जाए। हर चुनौती हमें नया अनुभव देती है और आत्मविश्वास बढ़ाती है। जब हम विफलताओं से सीखते हैं और उन्हें आगे की तैयारी में बदलते हैं, तभी वे हमारी असली ताकत बनती हैं। जीवन कितना भी कठिन क्यों न हो, उसमें हास्य की गुंजाइश हमेशा रहती है। जॉश कहते हैं कि जब हालात गंभीर हों, तब भी उनमें छिपे हास्य के छोटे-से अंश को खोजा जा सकता है। हास्य हमें कठिनाइयों से लड़ने की क्षमता देता है। जीवन में कभी भी ठहराव नहीं होना चाहिए।

पेट्रिफाइड फॉरेस्ट: करोड़ों साल पहले पत्थर बने वृक्षों का अनोखा वन

एरिजोना (अमरीका) स्थित पेट्रिफाइड फॉरेस्ट नेशनल पार्क प्रकृति के उन अनमोल चमत्कारों में से एक है, जो करोड़ों साल पुरानी पृथ्वी की कहानी को आज भी जिंदा रखता है। इस क्षेत्र में मौजूद पेड़ वास्तव में लकड़ी नहीं, बल्कि पत्थर में बदल चुके जीवाश्म हैं। लगभग 22.5 करोड़ वर्ष पूर्व, लेट ट्राएसिक काल में ये विशाल वृक्ष यहां गिरे थे। समय के साथ इनमें मौजूद जैविक तत्त्व नष्ट हो गए और उनकी जगह खनिजों ने ले ली, जिससे ये लकड़ियां धीरे-धीरे पत्थर का रूप धारण कर गईं। दिलचस्प बात यह है कि फॉरेस्ट कहे जाने के बावजूद यहां पेड़ खड़े नहीं हैं, बल्कि जमीन पर गिरे पड़े हैं। ये किसी कलाकृति से कम नहीं लगते। यहां आकर ऐसा लगता है कि आप लाखों साल पीछे इतिहास की सैर कर रहे हों।

चिंता स्वच्छ जल और जागरूकता से ही टल सकती है बीमारियों की आशंका

आपदा के बाद रोग नियंत्रण हम सबकी साझा जिम्मेदारी

डॉ. रिपुन्जय सिंह
सदस्य
राजस्थान कर्मचारी चयन बोर्ड, जयपुर
@patrika.com

मानसून और प्राकृतिक आपदाओं के समय भारत जैसे विकासशील देशों में बाढ़ और जलभराव की समस्या व्यापक रूप से सामने आती है। इसके परिणामस्वरूप जलजनित, मच्छरजनित और संक्रामक रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है, जिनमें हैजा, डायरिया, टायफॉइड, मलेरिया, डेंगू, चिकनगुनिया और हेपेटाइटिस प्रमुख हैं। इन रोगों की रोकथाम और उपचार के लिए स्थानीय प्रशासन, स्वास्थ्य विभाग और समुदाय की सावधानियों की अहम भूमिका होती है। समय रहते स्वच्छ जल, भोजन, टीकाकरण और स्वच्छता प्रबंधन सुनिश्चित करने से महामारी जैसी स्थिति को रोका जा सकता है। भारत में मानसून केवल कृषि और जीवन का आधार ही नहीं, बल्कि प्राकृतिक आपदाओं का कारण भी बनता है।

बाढ़, जलभराव और अव्यवस्थित शहरी संरचना के कारण मानसून के बाद स्वास्थ्य संकट उत्पन्न होना स्वाभाविक है। हर वर्ष देश के अनेक हिस्सों में हजारों लोग बीमारियों से प्रभावित होते हैं। मानसून के बाद उत्पन्न होने वाले आपदा-जन्य रोग केवल चिकित्सकीय समस्या नहीं, बल्कि सामाजिक, प्रशासनिक और आर्थिक चुनौती भी हैं।

यदि समय रहते आवश्यक सावधानियां बरती जाएं तो अधिकांश बीमारियों को फैलने से रोका जा सकता है। सुरक्षित जल-आपूर्ति, मच्छर नियंत्रण, राहत शिविरों में स्वच्छता, पर्याप्त दवाइयां एवं टीकाकरण जैसी व्यवस्थाएं रोग-नियंत्रण के लिए आधारभूत तत्त्व हैं। साथ ही प्रशासनिक तत्परता, सामुदायिक सहभागिता और जन-जागरूकता दीर्घकालिक समाधान के लिए अनिवार्य हैं। आपदा के बाद तत्काल उठाए जाने वाले कदमों में प्रभावित क्षेत्रों का सर्वेक्षण करना है। प्रशासन को तुरंत बाढ़ग्रस्त या जलभराव वाले इलाकों की पहचान कर स्वास्थ्य संकट का आकलन करना चाहिए। सुरक्षित पेयजल की सुविधा होनी चाहिए। क्लोरीनयुक्त पानी, टैंकर व फिल्टर पानी की व्यवस्था लोगों के लिए किया जाना बेहद जरूरी है, ताकि जलजनित रोग न फैलें। स्वास्थ्य शिविर एवं मोबाइल हेल्थ यूनिट के जरिए प्रभावित क्षेत्रों में त्वरित चिकित्सा सुविधा प्रदान करनी चाहिए। प्रतिदिन रोगों की रिपोर्टिंग कर संभावित महामारी की आशंका को समय रहते रोकना चाहिए।

आपदा के बाद केवल प्रशासन ही नहीं, बल्कि स्थानीय नागरिक, स्वयंसेवी संगठन और स्वयंसेवक भी सक्रिय भूमिका निभा सकते हैं। वे स्वच्छता अभियान, जागरूकता कार्यक्रम और घर-घर जाकर लोगों को सुरक्षित जल व मच्छर नियंत्रण के उपाय अपनाने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। जन-जागरूकता अभियान के तहत खुले में शौच न करने और मच्छर से बचाव के उपाय बताने चाहिए। रेडियो, टीवी, मोबाइल संदेश और स्थानीय स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से जानकारी देना आवश्यक है।

बाढ़ जैसी आपदाओं के मद्देनजर दीर्घकालिक उपाय किए जाने चाहिए जैसे कि बाढ़ संभावित क्षेत्रों में पहले से दवाएं, वैक्सीन और क्लोरीन टैबलेट का स्टॉक रखना, स्थानीय प्रशासन के साथ आपदा प्रबंधन योजना बनाना, शहरी योजना और अवसंरचना सुधार, नालों और ड्रेनेज सिस्टम की समय पर सफाई, जल निकासी व्यवस्था मजबूत करना, बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में स्थायी स्वास्थ्य केंद्र विकसित करना आदि हैं। आपदा पीड़ितों में तनाव-अवसाद भी स्वास्थ्य को कमजोर करता है। यदि स्थानीय प्रशासन, स्वास्थ्य विभाग और जनता मिलकर कार्य करें तो रोगों को फैलने से रोका जा सकता है। इस दिशा में त्वरित कार्रवाई, रोग निगरानी, सुरक्षित जल-भोजन की आपूर्ति और सामुदायिक सहयोग सबसे महत्त्वपूर्ण कदम है।

प्रसंगवश

बजट राशि का समय पर उपयोग नहीं, सरकारी तंत्र की सुस्ती जिम्मेदार

प्रशासनिक प्रक्रिया में पारदर्शिता लाकर ही विकास कार्यों को गति दी जा सकती है

विकास कार्यों को लेकर जनता की तरफ से जब भी कोई मांग आती है सबसे पहले सवाल यही उठता है कि इसे पूरा करने के लिए बजट कहां से आएगा। सरकारी सिस्टम भी ऐसा ही हो गया है कि कोई काम नहीं करना हो तो बजट की कमी का बहाना बना दो। लेकिन बजट भी हो और विकास के काम नहीं हों तो इसे क्या कहेंगे? यह सचमुच घोर लापरवाही ही कही जाएगी। ऐसी ही लापरवाही का खुलासा कैग की रिपोर्ट में हुआ है। इस रिपोर्ट में कहा गया है कि वर्ष 2023-24 में कुल खर्च को लेकर प्रस्तावित राशि का 62 प्रतिशत हिस्सा यानी 13 हजार 762 करोड़ रुपए संबंधित विभागों के खातों में ही पड़े रह गए। सीधी बात है यह रकम यदि सही समय पर और योजनाबद्ध तरीके से खर्च की जाती, तो राजस्थान में विकास कार्यों की रफ्तार और जनकल्याणकारी योजनाओं की पहुंच आम आदमी तक बढ़ सकती थी। ऐसा नहीं होने पर सरकारी तंत्र की सुस्ती, कार्य निष्पादन में लचर व्यवस्था और बजट का इस्तेमाल नहीं कर पाने में घोर लापरवाही ही सामने आई है। हैरत की बात यह है कि 1122 करोड़ रुपए से अधिक के कार्यों के लिए तो उपयोगिता प्रमाण पत्र तक जारी नहीं किए गए। बिना उपयोगिता प्रमाण पत्र के कार्यों की आधिकारिक मान्यता नहीं बनती, जिससे शुरू हुए कार्य आगे नहीं बढ़ते। अग्रिम राशि से किए गए आकस्मिक खर्च के बिल समय पर प्रस्तुत न किए जाने से न केवल राशि अनावश्यक रूप से रोककर रखी गई, बल्कि परियोजनाओं में देरी भी हुई।

इस लालफीताशाही से यह बात तो साफ है कि असल समस्या यह है कि जो राशि उपलब्ध है उसका सही समय पर उपयोग नहीं हो रहा। शहरी निकाय, पंचायत समितियां और विभागीय अधिकारी बेपरवाह हैं। प्रदेश में आए दिन सरकारी स्कूलों के भवन धराशायी हो रहे हैं, लेकिन उनकी मरम्मत तक समय पर नहीं हो पा रही। सड़कों के हाल बेहाल हैं। यदि समय पर राशि का उपयोग सही ढंग से हो जाए तो ऐसी नौबत ही नहीं आए। वस्तुतः बजट का सही और समय पर इस्तेमाल हो इसके लिए प्रशासनिक प्रक्रिया में पारदर्शिता लानी होगी। साथ ही विकास कार्यों की समयबद्ध समीक्षा भी होनी चाहिए ताकि उपयोगिता प्रमाण पत्र समय पर जारी हो सके। तब जाकर ही विकास के सपने साकार होंगे।

- महेश कुमार जैन
mahesh.jain1@in.patrika.com

दृष्टिकोण शैक्षिक सशक्तीकरण ही इस समाज को अपने सपनों को साकार करने की शक्ति देगा

जनजातीय शिक्षा का संकट: समान अवसरों की तलाश में एक पीढ़ी

प्रो. मनोज कुमार सक्सेना
अध्यक्ष
लोबजंग छोडोन
शोधार्थी
शिक्षा स्कूल, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विवि, धर्मशाला
@patrika.com

शिक्षा का मूल उद्देश्य इस तरह का सशक्तीकरण होना चाहिए, जो बिना सांस्कृतिक जड़ों को मिटाए व्यक्ति की गरिमा, आत्मनिर्भरता और अवसरों को बढ़ाए।

भारत अपनी सांस्कृतिक विविधता के लिए जाना जाता है। यह 705 से अधिक अनुसूचित जनजातियों का घर है, जो जनगणना 2011 के अनुसार देश की कुल जनसंख्या का लगभग 8.6% हिस्सा हैं। ये जनजातीय समुदाय देश के विभिन्न क्षेत्रों में फैले हुए हैं- मध्य भारत के जंगलों से लेकर पूर्वोत्तर की पहाड़ियों और राजस्थान के रेगिस्तानों तक। इनके पास समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर, पारंपरिक ज्ञान प्रणाली और विशिष्ट जीवनशैली है।

हाल के वर्षों में, जैसे-जैसे भारत तकनीकी और आर्थिक आधुनिकीकरण की ओर बढ़ रहा है, जनजातीय शिक्षा का मुद्दा नई तात्कालिकता के साथ सामने आया है। साक्षरता दर में निरंतर अंतर, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुंच, पाठ्यक्रम की सांस्कृतिक प्रासंगिकता और प्रणालीगत समावेशन की कमी जैसे मुद्दों ने इस दिशा में गंभीर विचार-विमर्श को प्रेरित किया है, जिससे यह समझने की कोशिश हो रही है कि कौन-कौनसी चुनौतियां अब भी बनी हुई हैं और समावेशी शैक्षिक भविष्य की क्या संभावनाएं हो सकती हैं? भारत की जनजातीय आबादी में शैक्षिक पिछड़ापन अत्यंत स्पष्ट है। समानता के संवैधानिक आश्वासनों और लक्षित विकास योजनाओं के बावजूद, जनगणना 2011 के अनुसार भारत में अनुसूचित जनजातियों (एसटी) की साक्षरता दर 59 प्रतिशत थी, जबकि राष्ट्रीय औसत 73 प्रतिशत था। इसका मतलब है कि जनजातीय आबादी का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा शिक्षा से वंचित है। ये आंकड़े केवल संख्याएं नहीं हैं। यह एक गंभीर सामाजिक और विकासात्मक संकट को दर्शाते हैं, जो प्रणालीगत उपेक्षा, अपर्याप्त ढांचे और सामाजिक-आर्थिक बाधाओं का परिणाम हैं जो समतामूलक शिक्षा के मार्ग को अवरुद्ध करते हैं।

इनमें से एक प्रमुख चुनौती है जनजातीय समुदायों का भौगोलिक अलगाव। अधिकांश अनुसूचित जनजातियां दूरदराज, पहाड़ी या वन क्षेत्रों में रहती हैं, जहां संचार और परिवहन की सुविधाएं बहुत सीमित हैं। शिक्षा से जुड़ी अधूरी आधारभूत संरचनाएं- जैसे कि उचित कक्षाओं, प्रशिक्षित शिक्षकों, छात्रावासों, पुस्तकालयों और डिजिटल संसाधनों की कमी- इस समस्या को और बढ़ा देती हैं। बच्चे अक्सर कठिन और दुर्गम रास्तों से कई किलोमीटर पैदल चलकर स्कूल पहुंचते हैं, जिससे अनुपस्थिति और ड्रॉपआउट दर में वृद्धि होती है। कई क्षेत्रों में एकल शिक्षक वाले विद्यालय और बहुस्तरीय कक्षाएं आम हैं, जो शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करती हैं। यहां तक कि देशभर में नामांकन बढ़ाने में प्रभावी रही मिड-डे मील योजना भी जनजातीय क्षेत्रों में कार्यान्वयन की चुनौतियों से जूझ रही है, जिसका कारण है निगरानी की कमी।

एक प्रमुख समाधान जनजातीय समुदायों को स्वयं सशक्त बनाने में निहित है। उन्हें केवल लाभार्थी के रूप में देखने के बजाय, उन्हें शैक्षिक कार्यक्रमों के निर्माण और क्रियान्वयन में सक्रिय भागीदार बनाया जाना चाहिए। जनजातीय समुदायों से शिक्षकों की भर्ती, पाठ्यक्रम में उनकी पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों का समावेश और स्थानीय पारिस्थितिक एवं सांस्कृतिक संदर्भों का सम्मान ये सभी शिक्षा को अधिक अर्थपूर्ण और प्रभावी बना सकते हैं। शिक्षा का उद्देश्य आत्मसात कराना ही नहीं, बल्कि सशक्तीकरण भी होना चाहिए। ऐसा सशक्तीकरण, जो गरिमा, आत्मनिर्भरता और अवसरों को बढ़ाए, बिना सांस्कृतिक जड़ों को मिटाए। पंचायती राज संस्थाओं और जनजातीय नेताओं की भूमिका को स्कूलों की निगरानी और शिक्षा बजट की योजना में सुदृढ़ करना भी अत्यंत आवश्यक है। साथ ही, लैंगिक संवेदनशील नीतियां और व्यवहार अत्यावश्यक हैं। जनजातीय समुदायों की लड़कियों को दो अलग-अलग प्रकार के भेदभाव का सामना करना पड़ता है- वे न सिर्फ महिलाएं हैं बल्कि जनजातीय भी। उनकी सुरक्षा, आवाजाही, स्वास्थ्य और गरिमा सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रयास जरूरी हैं। शौचालय की सुविधाएं, परिवहन साधन, मासिक धर्म स्वच्छता उत्पाद, जागरूकता अभियानों और नवीन योजनाओं से बालिकाओं के नामांकन और निरंतर उपस्थिति को काफी बढ़ावा मिल सकता है।

भारत में जनजातीय शिक्षा का भविष्य केवल बजट या नीतियों पर नहीं, बल्कि राजनीतिक इच्छाशक्ति और सामाजिक समावेशन पर निर्भर करता है। शिक्षा को केवल साक्षरता के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, सांस्कृतिक संरक्षण और आर्थिक उन्नयन के साधन के रूप में देखा जाना चाहिए। एक समावेशी, संदर्भ-आधारित और तकनीक-सक्षम शिक्षा प्रणाली लाखों जनजातीय बच्चों के जीवन को बदल सकती है। उन्हें पारंपरिक सीमाओं से आगे सपने देखने की शक्ति दे सकती है, ताकि वे अपनी पहचान की जड़ों से जुड़े भी रह सकें।

आपकी बात

गुरुकुल पद्धति वर्तमान में प्रासंगिक

प्राचीन शिक्षा पद्धति को पुनर्जीवित करने के लिए गुरुकुल प्रणाली को विकसित करना आवश्यक है। इसमें विद्यार्थी अनुशासन, संस्कार, सहयोग और जीवन मूल्यों को आत्मसात करते थे। आधुनिक शिक्षा के साथ-साथ गुरुकुल परंपरा को जोड़कर ज्ञान और नैतिकता का संतुलन स्थापित किया जा सकता है। आज की लोकतांत्रिक पद्धति से विद्यार्थियों को विचारों की स्वतंत्रता और सामाजिक चेतना मिलेगी। गुरुकुल प्रणाली में जीवन कौशल और प्रबंधन को बेहतरीन तरह से सिखाया जाता था। - **विशंभर थानवी**, फलौदी

patrika.com पर पढ़ें

पाठकों की अन्य प्रतिक्रियाएं

इसे स्कैन करें

पत्रिकायन का सवाल था, 'प्राचीन शिक्षा परंपरा को पुनर्जीवित करने को लेकर आपके क्या विचार हैं?' अन्य प्रतिक्रियाएं ऑनलाइन भी देखें।
https://shorturl.at/VNePc

आज का सवाल

बजरी और खनन माफिया पर अंकुश के लिए क्या प्रयास किए जा सकते हैं?

ईमेल करें: edit@epatrika.com

प्रेरणा

मैं जिस व्यक्ति से भी मिलता हूं वह किसी न किसी रूप में मुझसे बेहतर है। - राल्फ वाल्डो इमर्सन

संपादकीय

नेपाल के संकट को कई दृष्टिकोणों से देखना होगा

नेपाल में युवाओं के आंदोलन पर हुए बलप्रयोग ने जनता को उग्र बना दिया। राष्ट्रपति, पीएम और मंत्रियों के घर तक जला दिए गए। पीएम ने इस्तीफा दे दिया। भारत का पड़ोसी नेपाल पिछले ढाई दशकों से अशांत है। 17 वर्षों के गैर-राजतंत्र में 15 सरकारें बदल चुकी हैं। लेकिन सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स पर पाबंदी लगाना चीन-परस्त ओली सरकार को महंगा पड़ गया। युवा वर्ग सड़कों पर आ गया। सरकार ने एक दिन पहले तक इसे दक्षिणपंथी आंदोलन या संपन्न वर्ग द्वारा उकसाया बलवा बताकर बदनाम करना चाहा था। लेकिन आंदोलन का मुख्य कारण शासकीय स्तर पर फैला भ्रष्टाचार है। राजशाही से निकल कर प्रजातंत्र तक आने पर भी सत्तापक्ष का रवैया राजा-प्रजा वाला ही रहा। हैशटैग्स नेपोकिड्स और नेपोबेबी के नाम से वायरल हुए वीडियोज में मंत्रियों के परिजनों का ऐशोआराम की जिंदगी बिताना लोगों के आक्रोश का कारण बना। लेकिन सत्ताधारियों ने सोशल मीडिया को बैन करना मुनासिब समझा। नेपाल में विकास नगण्य रहा है। प्रति-व्यक्ति आय (1500 डॉलर) भारत से आधी है। पर्यटन को बढ़ाने के लिए अपेक्षित निवेश का अभाव है। गरीब-अमीर की खाई बढ़ती गई है और बेरोजगारी 11 फीसदी से ऊपर हो गई है। हर रोज 5000 युवा नौकरी की तलाश में अन्य देशों में पलायन करने लगे हैं। चीन के तियाननमेन और अरब स्प्रिंग के आंदोलनों के बाद हाल में बांग्लादेश, श्रीलंका के अलावा म्यांमार और पाकिस्तान भी अशांत है। भारत को मौजूदा नेपाल संकट पर कई दृष्टिकोणों से नजर बनाए रखनी होगी।

जीने की राह

पं. विजयशंकर मेहता
humarehanuman@gmail.com

मन के केवल दो ही इलाज हैं- मौन और मेडिटेशन

नाकामी की तलवार सब पर लटकती है। और इसके वार से बचने के लिए हमारे हाथ में भी तलवार और साथ में ढाल भी होनी चाहिए। हमारे हाथ की तलवार परिश्रम की हो और ढाल ईमानदारी की रहे। ऐसा करते समय आपको, आपके ही भीतर का मन कमजोर कर देगा। क्योंकि मन लगातार नकारात्मक पैंतरे चलता है। अगर मन सक्रिय है तो हम भय और संदेह में गिरेंगे ही। तो जब भी कोई बड़ा काम करें, 'माइंड साउंड' को जरूर सुनें। इसका इलाज करिए। और मन के दो ही इलाज हैं- मौन और मेडिटेशन। आज हमारे देश में 50 प्रतिशत से अधिक लोग किसी ना किसी बीमारी का इलाज ले रहे हैं। पैरासिटामॉल नाम की दवाई तो टॉफी की तरह खाई जा रही है। ऐसे समय, आप भी एक इलाज लीजिए और वो होगा मौन और मेडिटेशन का। क्योंकि नाकामी की तलवार लटकी रहे, यही ठीक है। कहीं उसने हम पर वार किया और हमारी तैयारी नहीं हुई तो फिर उदासी, अवसाद तो आना ही है।

•Facebook:Pt. Vijayshankar Mehta

पाठकों के पत्र

वर्षा जल व्यर्थ ना बहने दें

अभी बरसात का मौसम चल रहा है। इसलिए आज यदि हम बारिश का पानी संग्रहित करते हैं तो यह गर्मी के मौसम में लोगों की प्यास बुझा सकता है। इसके लिए देशभर में जनता को वर्षा जल संग्रहण के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। घरेलू उपयोग के लिए बरसात के पानी को इकट्ठा करने के लिए घरों में कुंड एवं टांके बनाए जाने चाहिए। सरकारों को भी इस कार्य के लिए लोगों को सब्सिडी देनी चाहिए। -अजीतसिंह सिसोदिया, बीकानेर, राजस्थान

विकासशील देशों में जन आंदोलन हों

पहले इंडोनेशिया और अब नेपाल में चल रहे जन प्रदर्शनों ने दिखाया है कि जनता चाहे तो सत्ता को झुकने पर मजबूर कर दे। इंडोनेशिया में राष्ट्रपति प्रबोवो सुबियांतो को कहना पड़ा कि वे सांसदों के बढ़े हुए लाभों में कटौती कर रहे हैं। नेपाल की हुकूमत को भी देर-सबेर ऐसा ही कोई निर्णय लेना होगा। इंडोनेशिया और नेपाल की तरह सभी विकासशील एवं अविकसित देशों में ऐसे आंदोलनों की सख्त जरूरत है। -जंग बहादुर सिंह, जमशेदपुर, झारखंड

मूल्य आधारित शिक्षा जरूरी

मूल्य आधारित शिक्षा प्रणाली विद्यार्थियों में देश और परिवार के प्रति जिम्मेदारी, सहानुभूति, ईमानदारी, समानता और न्याय जैसी मूलभूत भावनाएं पैदा करती है। यह शिक्षा को बेहतर बनाने में कारगर साबित हो सकती है। गरीब और मध्यवर्गीय परिवारों के बच्चों के लिए छात्रवृत्तियां और वित्तीय सहायताएं देनी चाहिए। स्कूलों की सुविधाओं में भी और सुधार किए जाने की आवश्यकता है।
-सुनील कुमार महला, उत्तराखंड

प्रकृति से छेड़छाड़ पड़ी भारी

कुछ किलोमीटर रास्ता कम करने के लिए पहाड़ों को खोदा गया। नतीजा ये है कि अब पहाड़ कमजोर होकर टूट रहे हैं। ये प्राकृतिक प्रकोप नहीं, बल्कि प्रकृति से छेड़छाड़ का नतीजा है। वैष्णो देवी हादसे से सबक लेते हुए ऐसे प्रोजेक्ट जल्द रोक देने चाहिए। जिस स्थान पर पहुंचने के लिए रास्ता बनाया जा रहा है, वह स्थान ही नहीं रहेगा तो रास्ता किस काम का? प्रकृति को हम अपनी निजी संपत्ति नहीं समझ सकते। -राममोहन चंद्रवंशी, हरदा, मध्यप्रदेश

आप अपने पत्र editpage@dbcorp.in पर भेज सकते हैं

क्या आप जानते हैं

1300 वर्षों से चल रहा है दुनिया का सबसे पुराना होटल

दुनिया का सबसे प्राचीन होटल जापान के यामानाशी प्रांत के हायाकावा में स्थित है। इसका नाम निशियामा ओन्सेन केइउन्कान है। 1300 वर्षों से लगातार यह होटल संचालित हो रहा है। 2017 तक एक ही परिवार की 52 पीढ़ियों ने इसे चलाया था। होटल में गर्म पानी के चार प्राकृतिक स्रोत हैं, जिनमें होटल की स्थापना से लेकर अब तक पानी बना हुआ है।

705 ईस्वी में इस होटल को जापान के 38वें शासक तेन्जी के बेटे फुजिवारा मोहितो ने बनाया था। गिनीज बुक में यह दुनिया के सबसे पुराने होटल के रूप में दर्ज है।

बामुलाहिज़ा • नॉर्थ-ईस्ट के राज्यों जैसी गलती हम एक बार फिर पंजाब में नहीं दोहरा सकते हैं

पंजाब पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है

देश-समाज

शेखर गुप्ता
एडिटर-इन-चीफ, 'द प्रिन्ट'
X @ShekharGupta

1 सितंबर को तियानजिन से लौटते ही प्रधानमंत्री ने अफगानिस्तान में आए भूकंप पर शोक जताते हुए एक ट्वीट किया। तभी उन्हें एक ट्वीट में जवाब मिला। यह जवाब अकाल तख्त और तख्त श्री दमदमा साहिब गुरुद्वारा के पूर्व मुख्य ग्रंथी ज्ञानी हरप्रीत सिंह की ओर से था। वे सिख राजनीति में नेतृत्व के रूप में खुद को देखते हैं, जो शिरोमणि अकाली दल की अंदरूनी दरारों से खतरनाक रूप से टूटी हुई है। वे नवां (नया) अकाली दल के प्रमुख के रूप में जगह बनाने की कोशिश कर रहे हैं। हालांकि वे इसे अलग गुट कहने पर आपत्ति जताते हैं। उनका कहना है कि असल में सुखबीर सिंह बादल का अकाली दल अलग हुआ है। सिख राजनीति में तीसरी ताकत अमृतपाल सिंह का शिरोमणि अकाली दल (वारिस पंजाब दे) है। इन हालात का खतरनाक ताकतें, खासकर आईएसआई फायदा उठा रही हैं।

ज्ञानी जी अकसर ट्वीट करते हैं और लगभग हमेशा पंजाबी (गुरुमुखी) में ही ऐसा करते हैं। फिलहाल उनकी टाइमलाइन पंजाब में बाढ़ की तबाही के विजुअल्स से भरी है। नई दिल्ली का विरोध सिख राजनीति का केंद्रीय मुद्दा है। ज्ञानी जी ने प्रधानमंत्री के अफगानिस्तान वाले ट्वीट को तुरंत पकड़ा और इस बार अंग्रेजी में लिखा- माननीय प्रधानमंत्री, अफगानिस्तान के लिए सहानुभूति जताना अच्छा है, लेकिन पंजाब भी इसी देश का हिस्सा है, जहां 17 अगस्त से करीब 1,500 गांव और 3 लाख लोग बुरी तरह प्रभावित हुए हैं।

हमें पता है कि प्रधानमंत्री ने लौटते ही पंजाब के मुख्यमंत्री भगवंत मान से बात की और हर तरह के सहयोग का वादा किया। केंद्रीय कृषि मंत्री शिवराज सिंह चौहान बाढ़ प्रभावित इलाकों में हैं, ज्यादातर समय पैदल, कई बार घुटनों तक पानी में, उखड़ी हुई फसलों को देखते हुए, यहां तक कि कभी-कभी किसी पौधे को फिर से लगाने की कोशिश भी करते हुए। लेकिन डूबता हुआ पंजाब दशकों में अपने सबसे मुश्किल दौर से गुजर रहा है। वे अपने राज्य में प्रधानमंत्री की मौजूदगी की उम्मीद करते हैं, भले ही वे उस भाजपा से हों, जिसे पंजाब में सिख आम तौर पर वोट नहीं देते। यह पहले से ही अलगाव को बढ़ावा दे रहा है, जो तीन कृषि कानूनों के खिलाफ आंदोलन के बाद से ही पनप रहा है।

भाजपा सबकुछ जीतने की सोच रखने वाली पार्टी है। वो हर उस राज्य में जीतना चाहती है, जहां अब तक उसकी पकड़ नहीं रही। तमिलनाडु, तेलंगाना, केरल और पश्चिम बंगाल उसकी आकांक्षा बने रहे हैं। असम, त्रिपुरा और मणिपुर को उसने दशकों की मेहनत और संघ प्रचारकों की कोशिशों से जीता है। तो पंजाब क्यों नहीं?

पंजाब की दूरी भाजपा को परेशान करती है। अब तक सिर्फ एक बार ही वे यहां सत्ता में साझेदार बने थे, वह भी शिरोमणि अकाली दल के कनिष्ठ साथी के तौर पर। यह कदम अटल बिहारी वाजपेयी ने 1990 के दशक में उठाया था। मौजूदा भाजपा नेतृत्व ने उस गठबंधन को तोड़कर पंजाब में अकेले लड़ने का फैसला किया। इसका उन्हें कोई फायदा नहीं मिला, लेकिन वोट प्रतिशत 2022 के विधानसभा चुनाव (6.6 फीसदी) से बढ़कर 2024 की लोकसभा में 18.56 फीसदी हो गया। इस तरह वे अपने पुराने वरिष्ठ साथी अकाली दल (13.2 फीसदी) से भी आगे निकल गए। जबकि कांग्रेस और आम आदमी पार्टी को 26-26 फीसदी वोट मिले।

भाजपा एक लगातार चुनाव लड़ने वाली सेना की तरह है और उसके नेता सोच सकते हैं कि अगर सिख वोट

उस राज्य के प्रति देश की कुछ जिम्मेदारियां हैं...

एक आपदा केंद्र-भाजपा के लिए पंजाब के साथ खड़े होने का अच्छा अवसर होता। यह राज्य से नया रिश्ता बनाने का मौका भी होता। भारत की जिम्मेदारी है कि उस राज्य और उसके लोगों के लिए सबकुछ करे, जिनके योगदान के बिना गणराज्य की कल्पना नहीं की जा सकती।

तीन हिस्सों में बंट जाएं- शिरोमणि अकाली दल, कांग्रेस और उग्रपंथियों के बीच- और हिंदू वोट एकजुट हो जाएं, तो वह अकेले सत्ता हासिल कर सकती है। हिंदू-मुस्लिम ध्रुवीकरण के जरिए जीतना, खासकर जहां मुसलमान अल्पसंख्यक हैं, पंजाब से बिल्कुल अलग है, जहां सिख बहुमत में हैं। पिछले लोकसभा चुनावों में भी अकालियों का प्रदर्शन इसलिए इतना खराब रहा था, क्योंकि उनका ठीक आधा वोट, यानी करीब 13 फीसदी, उग्रपंथियों ने ले लिया था। चाहे पसंद आए या न आए, लेकिन पंजाब में उग्रपंथियों की बढ़ती लोकप्रियता एक समस्या बन चुकी है। जनता का अकालियों से मोहभंग बढ़ रहा है और भाजपा को ध्रुवीकरण करने वाली पार्टी के रूप में देखा जा रहा है। अलगाववादी इसी माहौल में सक्रिय हैं और पाकिस्तानी भी इसमें खेल रहे हैं।

कई नए यूट्यूब चैनल और सोशल मीडिया हैंडल बेहद चालाकी से प्रोपगेंडा चला रहे हैं। वे ये संदेश दे रहे हैं कि मुसलमान और सिख, दोनों एकेश्वरवादी और पंजाबी हैं और इस नाते उनके बीच कोई असली समस्या नहीं है। परेशानी हिंदुओं से आती है और इसलिए सिखों को अलग तरह से सोचना चाहिए। यह प्रोपगेंडा पंजाबी पहचान का भी इस्तेमाल करता है, यानी साझा संस्कृति, भाषा, संगीत और सीमा पार के रिश्तों का। मैंने इनमें से कई चैनल देखे हैं, जिनमें कनाडा और ब्रिटेन से चलाए जा रहे कुछ लोकप्रिय पॉडकास्ट भी शामिल हैं। ये राजनीति पर बहुत चालाकी से बात करते हैं। मैंने कनाडा से एक 66 मिनट का शो देखा, जिसमें एंकर पाकिस्तान एयरफोर्स के एक वेटरन और ऑपरेशन सिंदूर पर लिखने वाले लेखक से बात कर रहा था। शो में भारतीय वायुसेना की खूब तारीफ की गई, लेकिन संदेश यह था कि छोटी और फुर्तीली पाकिस्तानी वायुसेना ने बेहतर काम किया। पंजाब में ऐसी सामग्री खूब देखी जा रही है।

एक राष्ट्र जो अपने इतिहास से नहीं सीखता, उसे भारी कीमत चुकानी पड़ती है। साठ साल पहले मिजोरम में चूहों ने अनाज के भंडार खा डाले थे और लोग भूखों मरने लगे थे। राज्य सरकार नाकाम रही और केंद्र बहुत दूर था। इस बीच लालडेंगा- जो हाल ही में सेना से छुट्टी लेकर आए थे- ने मिजो नेशनल फैमिन फ्रंट (एमएनएफएफ) बनाया। यह 1966 तक मिजो नेशनल फ्रंट बन गया और दो दशक तक चीन और पाकिस्तान से समर्थन पाकर हिंसक विद्रोह चलाता रहा। भारत वही गलती दोबारा पंजाब में नहीं कर सकता।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

दूरदृष्टि • नेपाल के हालात चिंता का सबब हैं

पड़ोस में अराजकता हो तो हम भी आगे नहीं बढ़ सकते

आस-पड़ोस

पलकी शर्मा
मैनेजिंग एडिटर FirstPost
X@palkisu

जब किसी देश में अराजकता के हालात निर्मित होते हैं, तो यह अमूमन अचानक नहीं होता। नेपाल कई सालों से भीतर ही भीतर सुलग रहा था, लेकिन इस हफ्ते यह एक बड़े राजनीतिक संकट के रूप में फूट पड़ा। 2008 में राजतंत्र खत्म होने के बाद यह नेपाल का सबसे गंभीर राजनीतिक संकट है। इसकी शुरुआत एक अजीब घटना से हुई : सरकार ने सोशल मीडिया पर प्रतिबंध लगा दिया। इसके बाद प्रदर्शनकारी सड़कों पर उतर आए, उन्होंने अनिश्चितकालीन कर्फ्यू की अवहेलना की, पुलिस से भिड़ गए और संसद की ओर मार्च किया। हिंसक झड़पें हुईं। जब तक सरकार ने प्रतिबंध हटाया, तब तक बहुत देर हो चुकी थी।

भारत इस संकट को चिंता के साथ देख रहा है। क्योंकि नई दिल्ली के लिए यह दक्षिण एशिया में एक बड़े और परेशान कर देने वाले पैटर्न का हिस्सा है। पिछले तीन सालों में ही हमारे तीन पड़ोसी देश- श्रीलंका, बांग्लादेश और अब नेपाल- व्यापक प्रदर्शनों के दबाव में राजनीतिक सिस्टम के ढहने के गवाह बने हैं। इनकी कहानियां अलग-अलग हो सकती हैं, लेकिन नतीजा एक ही है। और पड़ोस में ऐसे किसी भी संकट का स्वाभाविक ही भारत पर भी असर होता है।

जरा भारत के नक्शे के इर्द-गिर्द देखें। दक्षिण में, 2022 में श्रीलंका में कर्ज संकट के कारण खाने-पीने की चीजों, ईंधन और दवाओं की कमी हो गई। लोगों ने राष्ट्रपति भवन पर हमला कर दिया। सरकार और अर्थव्यवस्था चरमरा गई। पूर्व में, 2024 में बांग्लादेश में भी अशांति फैली। विवादित कोटा नीति के खिलाफ छात्रों ने विरोध-प्रदर्शन शुरू कर दिया। चरमपंथी समूहों ने आंदोलन को हथिया लिया। शेख हसीना को भारत पलायन करना पड़ा। उत्तर में, अब नेपाल में भी अशांति है। पश्चिम में पाकिस्तान है- जिसकी वास्तविक कमान सेना प्रमुख के हाथों में है। पाकिस्तान के बाद अफगानिस्तान में भी तालिबानी राज है। इसमें म्यांमार को न भूलें, जो 2021 में सैन्य तख्तापलट के बाद से ही गृहयुद्ध में फंसा हुआ है। दक्षिण एशिया में अस्थिरता अब आम हो गई है।

भारत के आसपास मौजूद अशांति के ये द्वीप उसके लिए दो बड़े खतरे पैदा करते हैं। पहला, सुरक्षा से जुड़े संकट। शरणार्थी सीमा पार करके आ सकते हैं, चरमपंथी सुरक्षित जगह ढूंढ सकते हैं और अशांत लोग सीमावर्ती राज्यों में अव्यवस्था फैला सकते हैं। प्रधानमंत्री ने हाल ही में घुसपैठियों के बारे में चेतावनी दी थी, जो भारत की जनसांख्यिकी को बदलना चाहते हैं- उनका इशारा इसी तरह के संकटों की ओर था।

दूसरा खतरा है : आर्थिक दबाव। समृद्ध देश अकसर समूह में विकास करते हैं- युद्ध के बाद का यूरोप, नॉर्डिक देश या आसियान इसका उदाहरण हैं। कारण, पड़ोस में स्थिरता से स्थिर सीमाएं बनती हैं, जिससे सरकारें व्यापार, स्वास्थ्य, शिक्षा और विकास पर ध्यान दे पाती हैं। जबकि अशांति से भरा पड़ोस हमेशा एक बाधा साबित होता है। भारत को यह बात हाल के कड़वे अनुभवों से समझ में आ रही है।

पिछले तीन सालों में ही हमारे तीन पड़ोसी देश- श्रीलंका, बांग्लादेश और अब नेपाल- व्यापक प्रदर्शनों के दबाव में राजनीतिक सिस्टम के ढहने के गवाह बने हैं। इनकी कहानियां अलग-अलग हो सकती हैं, लेकिन नतीजा एक ही है।

तो भारत को क्या करना चाहिए? फिलहाल तो स्थिति पर नजर रखे हुए है। अमेरिका के उलट, भारत अपने पड़ोसियों की घरेलू राजनीति में दखल नहीं देता। लेकिन यह उसकी उदासीनता नहीं है। जब भी जरूरत पड़ी है, भारत ने पड़ोसियों की मदद की है। हमने पूर्वी पाकिस्तान को आजादी दिलाने के लिए सैन्य हस्तक्षेप किया। नेपाल में संविधान परिवर्तन के दौरान हमने सुझाव दिए। श्रीलंका के आर्थिक संकट के समय अरबों डॉलर की मदद दी। नेपाल में बढ़ती अराजकता के चलते भारत के लिए तीन प्राथमिकताएं सामने आ रही हैं। पहली, रिफ्यूजियों की घुसपैठ रोकना। दूसरी, नेपाल की स्थिरता के लिए मदद करना। और तीसरी, लोकतांत्रिक मजबूती को बढ़ावा देना। अगर हम 1.4 अरब लोगों का देश होने के बावजूद सफल लोकतंत्र बने रह सकते हैं, तो हमारे छोटे पड़ोसी देश ऐसा क्यों नहीं कर सकते? **(ये लेखिका के अपने विचार हैं)**

विमर्श • मनुष्य होने की बुनियादी शर्तों में है भाषा

भाषा बताती है कि हम किस तरह के मनुष्य या समाज हैं

देशकाल

प्रियदर्शन
लेखक और पत्रकार
priyadarshan.parag@gmail.com

अरुंधति रॉय अपनी नई किताब 'मदर मेरी कम्स टु मी' में भाषा के बारे में लिखते हुए बताती हैं कि स्कूल के दिनों में उनकी भाषा बहुत खराब थी। लेकिन क्या यह उनकी भाषा थी? वे लिखती हैं- 'तब भी मुझे पता था कि जो भाषा मैं लिखती हूं, वह मेरी नहीं है। 'मेरी' से मेरा मतलब मातृभाषा से नहीं है और 'भाषा' से मेरा मतलब अंग्रेजी, हिंदी, मलयालम से नहीं है। मेरा मतलब है लेखक की भाषा। वह भाषा जिसे मैं इस्तेमाल करूं, वह नहीं जो मेरा इस्तेमाल करे। वह भाषा जिसमें मैं अपनी बहुभाषिक दुनिया की व्याख्या अपने से कर सकूं।'

भाषा पर इन दिनों विचार करने का चलन खत्म हो रहा है। भाषा जैसे किन्हीं पुराने दिनों की चीज हो चुकी है जिसे हम जानते हैं और जिसका ठीक उसी तरह इस्तेमाल कर सकते हैं जैसे चाकू का, फल का या किसी और चीज का करते हैं। जबकि भाषा रोज हमारे भीतर बनती है और हमें भी बनाती है। फल या चाकू भी किसी लेखक के हाथ में अलग अर्थ ग्रहण करते हैं। भाषा हमारा भेद खोल देती है कि हम किस तरह के मनुष्य या समाज हैं। भाषा की कसौटी पर देखें तो लगता है हम एक लगातार सपाट समाज में बदलते जा रहे हैं, जो कुछ 'रेडिमेड' किस्म के विचारों या संवेदना के बीच जीने का आदी हो चला है। इसका सबसे दारुण दर्शन सोशल मीडिया पर होता है, जहां हम एक पल में किसी को जन्मदिन की बधाई देते हैं और दूसरे पल किसी की मौत के मातम में शामिल हो लेते हैं। 'एचबीडी' और 'आरआईपी' तक सिमटी यह भाषा बताती है कि हमारे भीतर सच्चा सरोकार नहीं बचा है।

लेकिन यह टिप्पणी अपने समाज को कोसने के लिए नहीं लिखी जा रही है। सच तो यह है कि समाज के व्यापक हिस्से में सारी गिरावटों के बावजूद बहुत सारी ऊष्मा बची हुई है, एक-दूसरे की मदद का जज्बा कायम है, रिश्तों के प्रति संवेदनशीलता बरकरार है। लेकिन भाषा के साथ हमारा बरताव बताता है कि हम एक तरह के ठहराव के शिकार हो रहे हैं। हम सोचना कम कर चुके हैं, महसूस करना कम कर चुके हैं, जो परंपरा या प्रथा के रूप में हासिल है, उसे जस का तस स्वीकार कर रहे हैं, जो आधुनिकता के तौर पर बाजार हमें बेच रहा है, उसे खुशी-खुशी खरीद रहे हैं।

लेकिन इसमें मुश्किल क्या है? मुश्किल बस इतनी है कि जब कोई चीज ठहर जाती है तो वह सड़ने लगती है, हम विचार करना छोड़ देते हैं तो विचार भी हमें छोड़ता चला जाता है। हम भाषा को खोजना बंद कर देते हैं तो भाषा भी हमें बनाना बंद कर देती है। हम बस लगातार यांत्रिक मनुष्य होते जाते हैं। इस यांत्रिक मनुष्य के लिए भाषा भी बस यंत्र जैसी रह जाती है। कहीं वह दबदबे के काम आती है कहीं दिखावे के, कहीं वह ताकत का औजार बन जाती है तो कहीं सौदे और कभी-कभी भयादोहन तक के सामान में बदल जाती है। फिर धीरे-धीरे शब्द खोखले होते जाते हैं, अपने अर्थ खोने लगते हैं। इन दिनों हमारी राजनीति की भाषा कुछ ऐसी ही हो चली है। नेता कुछ भी बोलें, हम

हम एक पल में किसी को जन्मदिन की बधाई देते हैं तो दूसरे पल किसी की मौत के मातम में शामिल हो लेते हैं। 'एचबीडी' और 'आरआईपी' तक सिमटी यह भाषा बताती है कि हमारे भीतर सच्चा सरोकार नहीं बचा है।

भरोसा करने को तैयार नहीं होते। जिसका भरोसा करते हैं, वह हमसे कुछ भी करवा सकता है- दूसरों से नफरत, दूसरों के प्रति हिंसा। चूंकि हमारे पास हमारा निर्माण करने वाली भाषा नहीं बचती, लेकिन भीतर कोई आवेग बचा रहता है तो उसे उन्माद में बदलना, उसे अपने हित में इस्तेमाल करना दूसरों के लिए आसान हो जाता है। हम वास्तविक मुद्दों को छोड़ भावनात्मक मुद्दों पर लड़ते दिखते हैं और अपनी पहचान के नकली गर्व से लैस अपनी मनुष्यता भूलते जाते हैं। भाषा अक्षरों, शब्दों और वाक्यों से नहीं, हमारे भीतर की उथल-पुथल से बनती है- हमारे प्रेम से, करुणा से, छटपटाहट से, गुस्से से- लेकिन यह भाषा हम भूलते जा रहे हैं, क्योंकि न वास्तविक प्रेम बचा है न वैध गुस्सा। यह याद रखना जरूरी है कि भाषा हमारे मनुष्य होने की बुनियादी शर्तों में से एक है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

डिफ्रेंट एंगल • वर्ष 2024 तक 16 देशों के लगभग 86% छात्र अपनी पढ़ाई के लिए एआई पर निर्भर थे

पहले की पीढ़ियां फोन नंबर और कविताएं कैसे याद रखती थीं?

एआई

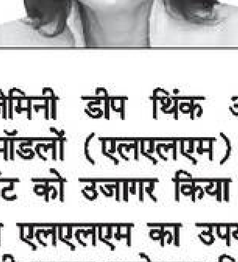

एनजाइरे वुड्स
ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी में प्रोफेसर और डीन

हाल ही में लॉन्च हुए जेमिनी डीप थिंक और जीपीटी-5 ने लार्ज लैंग्वेज मॉडलों (एलएलएम) के तेज गति से हो रहे डेवलपमेंट को उजागर किया है। दुनिया में 67% संगठन अब एलएलएम का उपयोग कर रहे हैं। संभवतः आपने भी इनका इस्तेमाल किया होगा। भले ही आप इनसे प्रभावित हुए हों, लेकिन इसके साथ ही आपको यह भी लगा होगा कि आपका ध्यान आसानी से भटकने लगा है। आपकी याददाश्त अब उतनी भरोसेमंद नहीं रही। पहले जो काम आसान थे, वे अब कठिन लग रहे हैं।

यह महज आपका भ्रम नहीं है। भले ही, एआई-संचालित उपकरण अपनी गति और प्रवाह से चकित कर सकते हैं, लेकिन इन पर अत्यधिक निर्भरता हमारी सोचने-समझने की क्षमता को घटाकर हमें सुस्त बना सकती है। रिसर्च में चार ट्रेंड खासतौर पर उजागर हुए हैं।

डिजिटल डिस्ट्रेक्शन हमारी एकाग्रता को कम कर रहा है। पिछले दो दशकों में स्मार्टफोन और अन्य उपकरणों ने ध्यान बनाए रखने, निर्णय करने और काम निपटाने की हमारी क्षमता को घटाया है। लगातार नोटिफिकेशन हमारा ध्यान भंग करते हैं और हमें अंतहीन स्क्रॉलिंग में धकेलते हैं। बार-बार फोन देखने की इच्छा हर मैसेज और अपडेट के साथ और प्रबल हो जाती है। यह जितनी व्यसनकारी है, उतनी ही हमें कमजोर भी बनाती है। ये व्यवधान चुनौतीपूर्ण और दीर्घकालिक कार्यों को कठिन बना देते हैं।

सूचना की आसान उपलब्धता से स्मृतिलोप भी हो रहा है। इसका अर्थ है निर्णय लेते वक्त जानकारी बनाए रखने और व्यवस्थित करने की क्षमता कम होना। शोधकर्ताओं ने कुछ समय पहले गूगल इफेक्ट का अध्ययन किया, जिसमें स्मार्टफोन पर बढ़ती निर्भरता के कारण स्मृति पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव को बताया। जबकि इसके विपरीत, हमसे पहले की पीढ़ियों को टेलीफोन नंबर, कविताएं और पीरियोडिक टेबल तक याद करनी पड़ती थीं।

बेहतर तर्क कर पाने की क्षमता में कमी आना एआई का सबसे ताजा प्रभाव है, क्योंकि अधिकतर लोग सोचने का जिम्मा चैटजीपीटी, जेमिनी या डीपसीक को सौंपते जा रहे हैं। अध्ययन दिखाते हैं कि यह संज्ञानात्मक ऑफलोडिंग हमारी स्पष्ट तौर से सोचने, तार्किक संबंधों को पहचानने और त्रुटिपूर्ण तर्कों को देखने की क्षमता को बाधित करती है। यह ऐसा ही है जैसे आप अपने नियमित व्यायाम को आउटसोर्स कर रहे हों। इससे आप कुछ समय के लिए अपनी ऊर्जा तो बचा सकते हैं, लेकिन समय के साथ आपकी ही ताकत कम होने लगती है।

एलएलएम युग से पहले शोधकर्ताओं को खासी रिसर्च करनी पड़ती थी। उससे भी पहले लाइब्रेरी में बैठकर हर नए स्रोत को परखना पड़ता था। क्या यह उपयोगी था? अन्य स्रोतों की तुलना में यह कैसा था? क्या इन विचारों को एक-दूसरे के खिलाफ परखा जा सकता था? यह शोध प्रक्रिया दिमाग को याद करने, लागू करने, विश्लेषण करने और संश्लेषित करने के लिए प्रशिक्षित करती थी। इसके बिना, वे क्षमताएं यकीनन कमजोर होती हैं।

छानबीन और बहस नहीं करने और सवाल नहीं उठाने से दिमाग कुंद हो जाता है। दिमागी ताकत को तेज करने के लिए संज्ञानात्मक टकराव महत्वपूर्ण हैं। यूजर्स को प्रसन्न करने के लिए प्रशिक्षित एलएलएम की चापलूसी हमारी विचारशक्ति को कम करती है। जब एआई मॉडल गलत परिणाम पर भी सहमत होते या घातक सुझाव देते हैं तो यह इस चापलूसी का एक और स्याह पहलू है।

चिंताजनक रूप से, एक हालिया अध्ययन दिखाता है कि यूजर्स किसी झूठ पर जितना जोर देते हैं, प्रमुख एलएलएम उतना ही उनका समर्थन करते हैं। ओपन-एआई अब इसे कम करने पर काम कर रहा है। चैटजीपीटी ने स्वयं कहा है कि तारीफ के स्थान पर ईमानदारी, रचनात्मक असहमति और स्वतंत्र सोच को प्रोत्साहित किया जा रहा है। समस्या यह है कि विचारों का टकराव यूजर्स को असहज करता है, फिर यह तनाव व्यक्तिगत विकास के लिए ही क्यों ना हो।

फिर भी, टेक कंपनियों, कार्यस्थलों, शैक्षणिक संस्थानों और लोगों को यह सुनिश्चित करने की चुनौती लेनी होगी कि एआई मानवीय क्षमताओं को मजबूत करे। एक विश्वविद्यालय में कार्यरत होने के नाते मेरे लिए तो यह एक बेहद तात्कालिक चुनौती है।

(© प्रोजेक्ट सिंडिकेट)

कल्पमेधा

युवा पीढ़ी को इस काबिल बनाना कि वह जीवन भर अपने आप को प्रशिक्षित करती रहे, यही शिक्षा का असली उद्देश्य है।
– रोबर्ट मेनार्ड हुत्चिंस

विरोध की आग

भारत के पड़ोसी मुल्क बांग्लादेश के बाद अब नेपाल में युवाओं का आक्रोश सड़कों पर दिखाई दे रहा है। आगजनी, तोड़फोड़ और हिंसा में कई लोगों की जान चली गई है। सरकारी संपत्तियों को भी बड़े पैमाने पर नुकसान पहुंचा है। सरकार की ओर से सोशल मीडिया पर प्रतिबंध लगाने से सुलगी विरोध की इस चिंगारी से संसद तथा प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति के आवास भी अछूते नहीं रहे। प्रदर्शनकारियों की भीड़ को नियंत्रित करना सुरक्षा बलों के लिए इस समय बड़ी चुनौती है। हालात इस कदर बेकाबू हो गए कि प्रधानमंत्री को अपने पद से इस्तीफा देना पड़ा है। इससे पहले सरकार के कुछ मंत्री भी अपना पद छोड़ चुके हैं। सवाल यह है कि आखिर देश का युवा वर्ग इतना ज्यादा आक्रामक कैसे हो गया? शासन और स्थानीय प्रशासन युवाओं के गुस्से को समय रहते शांत करने में क्यों नाकाम रहा? क्या सरकार को इस बात का इल्म नहीं था कि हालात इस कदर बिगड़ सकते हैं या फिर इसका पूर्व आकलन करने में कहीं कोई चूक हुई है?

दरअसल, नेपाल सरकार ने पिछले हफ्ते सोशल मीडिया पर प्रतिबंध लगाने का आदेश दिया था। सरकार का तर्क था कि देश में सोशल मीडिया मंचों से संबंधित कंपनियां पंजीकरण कराने की अनिवार्यता का पालन करने में विफल रही हैं। इसके बाद बड़ी संख्या में युवा सड़कों पर उतर आए और सरकार के इस फैसले का विरोध करने लगे। सोमवार को विरोध प्रदर्शन का दायरा व्यापक हो गया और काठमांडो में युवाओं की उग्र भीड़ ने जगह-जगह तोड़फोड़ शुरू कर दी। इस दौरान सुरक्षाबलों के साथ प्रदर्शनकारियों की हिंसक झड़पें हुईं, जिसमें कई लोगों की जान चली गई। इससे युवाओं का आक्रोश बढ़ गया और भीड़ संसद भवन परिसर में घुस गई। यहां तक कि प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति के आवासों को भी निशाना बनाया गया। हालात को देखते हुए सरकार ने सोमवार रात को ही सोशल मीडिया पर लगे प्रतिबंध को हटा लिया और मंगलवार को प्रधानमंत्री ने भी अपने पद से इस्तीफा दे दिया। मगर प्रदर्शनकारी अभी भी शांत नहीं हुए हैं और वे सरकार को बर्खास्त करने की मांग कर रहे हैं।

नेपाल के इतिहास में इसे बहुत बड़ी घटना के रूप में देखा जा रहा है। इससे पहले बांग्लादेश और श्रीलंका में भी इसी तरह जन आक्रोश ने सरकारों को अपदस्थ कर दिया था। इस बात पर भी गौर करना जरूरी है कि नेपाल में विरोध प्रदर्शनों का नेतृत्व 'जेन जी' कर रहा है। यह युवाओं का एक ऐसा समूह है, जो पिछले कुछ समय से भ्रष्टाचार के खिलाफ अभियान चला रहा है। इस समूह ने पिछले दिनों सोशल मीडिया के जरिए सरकार के मंत्रियों और अन्य प्रभावशाली हस्तियों के बच्चों की फिजूलखर्ची तथा उनकी जीवनशैली को लेकर गंभीर सवाल उठाए थे। दूसरी ओर, सोशल मीडिया पर प्रतिबंध लगाने के सरकार के फैसले को अभिव्यक्ति की आजादी पर पाबंदी के साथ-साथ भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज को दबाने के प्रयास के रूप में भी देखा जा रहा है। इसमें दोराय नहीं कि किसी भी देश में अभिव्यक्ति की आजादी हर हाल में होनी चाहिए, लेकिन क्या हिंसा, आगजनी और तोड़फोड़ ही इसका एकमात्र समाधान है? बहरहाल, उम्मीद की जानी चाहिए कि नेपाल की सरकार और युवा वर्ग देश एवं समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को समझेंगे और माहौल का शांत कर बातचीत की राह पर लौटेंगे।

सेहत पर संकट

देश के कई शहरों और महानगरों में वायु प्रदूषण इस कदर खतरनाक स्तर पर पहुंच गया है कि इसका सीधा असर लोगों के फेफड़ों पर पड़ने लगा है। नतीजा यह कि लोगों की आयु घट रही है और वे कई तरह की बीमारियों का शिकार हो रहे हैं। हर वर्ष लाखों लोग सांस से जुड़ी बीमारियों के अलावा हृदय रोग और कैंसर जैसी जटिलताओं का सामना कर रहे हैं। दरअसल, लंबे समय तक जहरीली हवाओं के बीच रहने से फेफड़े की कोशिकाएं कमजोर पड़ने लगी हैं। श्वसन रोग से संबंधित आठवें राष्ट्रीय सम्मेलन 'रेस्पिकान 2025' में विशेषज्ञों की ओर से साझा किए गए आंकड़ों ने चिंता बढ़ा दी है। उनके मुताबिक, देश में हर वर्ष फेफड़े के कैंसर के 81,700 नए मामले आ रहे हैं। इतना ही नहीं, हवा में प्रदूषण का असर केवल फेफड़े तक सीमित नहीं है, बल्कि यह शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को भी कमजोर कर रहा है। बच्चों की सेहत पर भी जहरीली हवा का गंभीर असर पड़ रहा है, जो भविष्य के लिए एक बड़ी चेतावनी है।

विशेषज्ञों का कहना है कि फेफड़े का स्वास्थ्य कोई एक दिन में नहीं बिगड़ता। अगर सामूहिक रूप से समन्वित प्रयास किए जाएं, तो स्थिति को और ज्यादा गंभीर होने से बचाया जा सकता है। देश में सार्वजनिक परिवहन तंत्र को मजबूत नहीं किए जाने का नतीजा है कि लोग आवाजाही के लिए निजी वाहनों का अधिक इस्तेमाल करते हैं। हर वर्ष सड़कों पर बड़ी संख्या में नए वाहन आ रहे हैं, जिससे प्रदूषण का स्तर बढ़ रहा है। यह निराशाजनक है कि न तो उद्योगों से निकलने वाले कचरे तथा धुएं को नियंत्रित करने के ठोस उपाय अब तक हो पाए हैं और न ही फसलों के अवशेष जलाने की समस्या का कोई प्रभावी समाधान निकल पाया है। हालत यह है कि हर दिन लोगों के फेफड़ों में जहरीली हवा भर रही है। विशेषज्ञों की चेतावनी को सरकार और समाज दोनों को गंभीरता से लेना होगा। हमें जीवनदायिनी वायु को प्राणघातक बनने से हर हाल में रोकना होगा। अगर हम ऐसा नहीं कर पाए, तो सांसों की डोर कमजोर होती चली जाएगी।

आर्कटिक की संपदा पर हक की होड़

अपनी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए अमेरिका, रूस और चीन आर्कटिक पर कब्जे की होड़ में शामिल हैं। यहां ऐसी दुर्लभ खनिज संपदा है, जो जिस देश के हाथ लग जाएगी, वह आर्थिक और सामरिक रूप से समृद्ध हो सकता है।

प्रमोद भार्गव

प्राकृतिक संसाधनों को हथियाने की होड़ में लगी वैश्विक ताकतों की निगाहें आर्कटिक के खनिजों पर जा टिकी हैं। हालांकि यह क्षेत्र अत्यंत दुर्लभ है और यहां से धातुओं का दोहन बहुत कठिन है। आर्कटिक में ऐसी दुर्लभ खनिज संपदा है कि वे जिस देश के हाथ लग जाएगी, वह आर्थिक और सामरिक रूप में समृद्ध हो जाएगा। अभी भी आर्कटिक क्षेत्र से रूस के जरिए विश्व का चालीस फीसद पैलेडियम, 20 फीसद हीरे, 15 फीसद प्लैटिनम, 11 फीसद कोबाल्ट, दस फीसद निकल और आठ फीसद जिंक का उत्पादन होता है। इसलिए इस क्षेत्र की जरूरत आर्थिक रूप से संपन्न देशों को हो रही है। अपनी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए अमेरिका, रूस और चीन आर्कटिक पर कब्जे की होड़ में शामिल हैं।

दरअसल, इस क्षेत्र में खनिजों के दोहन की होड़ इसलिए बढ़ रही है, क्योंकि जलवायु परिवर्तन के कारण आर्कटिक महासागर का जलस्तर घट रहा है। यह उत्तरी ध्रुव के चारों ओर एक वृत्त में घिरा हुआ, दुनिया का सबसे छोटा और उथला महासागर है। इसलिए ये देश आर्कटिक क्षेत्र में संसाधनों की तलाश में उत्खनन बढ़ाने में लगे हैं। जलवायु परिवर्तन के संकेत साफ दिखने लगे हैं। नए शोध बताते हैं कि आर्कटिक से हिमनद तो टूट ही रहे हैं, वायुमंडल का तापमान बढ़ने के कारण बर्फ भी तेजी से पिघल रही है। जलवायु बदलाव का बड़ा संकेत संयुक्त अरब अमीरात में भी दिख चुका है। बीते 75 वर्षों में यहां सबसे अधिक बारिश दर्ज की गई। चौबीस घंटे में दस इंच से ज्यादा हुई इस बारिश ने रेगिस्तान के बड़े भू-भाग को दरिया में बदल दिया था।

आर्कटिक पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव पर शोध एवं अध्ययन लगातार सामने आ रहे हैं। ये अध्ययन विशाल आकार के हिमनदों के पिघलने, टूटने, पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र के खिसकने, ध्रुवीय भालुओं के मानव आबादियों में घुसने और सील मछलियों में कमी को उजागर करते हैं। ये ऐसे प्राकृतिक संकेत हैं, जो पृथ्वी के बढ़ते तापमान का आर्कटिक पर प्रभाव बता रहे हैं। पर्यावरण विज्ञानी इस बदलाव को समुद्री जीवों, जहाजों, पेंगुइन और छोटे द्वीपों पर आबादी के लिए एक बड़े खतरे के रूप में देख रहे हैं। बीते एक दशक के भीतर ऐसी खबरें ज्यादा आई हैं। विशेष तौर से उत्तरी ध्रुव की स्थिति की जानकारी देने के लिए सजग प्रहरी के रूप में अनेक उपग्रहों की तैनाती कुछ देशों ने की है।

अमेरिका के 'नेशनल स्नो एंड साइंस डाटा सेंटर' के अध्ययन के मुताबिक, वर्ष 2014 में ही उत्तरी ध्रुव के 32.90 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में बर्फ की परत पिघली है। यह क्षेत्रफल लगभग भारत-भूमि के बराबर है। इस संस्थान के अनुसार, 1979 में उत्तरी ध्रुव पर बर्फ जितनी कठोर थी, अब उतनी नहीं रह गई है। इसके ठोस हिमतल में 40 फीसद की कमी आई है। हिमतल में एक वर्ष में इतनी बड़ी तरलता, इस बात की द्योतक है कि भविष्य में इसके पिघलने की गति और तेज हो सकती है। उधर, साधन संपन्न देश इस जलवायु परिवर्तन को वरदान मान कर चल रहे हैं, क्योंकि यहां पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस और अन्य खनिजों

के व्यपाक भंडार हैं। इसीलिए अमेरिका इस क्षेत्र में रणनीतिक दृष्टि से सैन्य ताकत बढ़ा रहा है, ताकि चीन के बढ़ते प्रभाव को चुनौती दी जा सके। अमेरिकी भू-वैज्ञानिक सर्वेक्षण के अनुसार, इस क्षेत्र में दुनिया के तेरह फीसद तेल और तीस फीसद गैस भंडारों के साथ अनेक दुर्लभ

> **आर्कटिक में पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस और अन्य खनिजों के भंडार हैं। इसीलिए अमेरिका इस क्षेत्र में रणनीतिक दृष्टि से अपनी ताकत बढ़ाने में लगा हुआ है, ताकि यहां चीन के बढ़ते प्रभाव को चुनौती दी जा सके। अमेरिकी भू-वैज्ञानिक सर्वेक्षण के अनुसार, इस क्षेत्र में दुनिया के तेरह फीसद तेल और तीस फीसद गैस भंडारों के साथ अनेक दुर्लभ खनिज उपलब्ध हैं। अमेरिका इसीलिए ग्रीनलैंड में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है। रूस पहले से ही इस क्षेत्र का बड़ा खिलाड़ी रहा है। उसने यहां अपनी सैन्य और आर्थिक उपस्थिति बढ़ाई है।**

खनिज उपलब्ध हैं। अमेरिका इसीलिए ग्रीनलैंड में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है। रूस पहले से ही इस क्षेत्र का बड़ा खिलाड़ी रहा है। उसने यहां अपनी सैन्य और आर्थिक उपस्थिति बढ़ाई है। रूस यहां सुविधाजनक स्थिति में इसलिए है, क्योंकि उसके भू-भाग का पांचवां हिस्सा आर्कटिक में है। आर्कटिक तटीय सागर की आधी से ज्यादा लंबाई रूसी क्षेत्र में आती है। रूस यहां की प्राकृतिक संपदा का दोहन कर उसका उत्तरी समुद्री मार्ग से कारोबार करने की कोशिश में जुटा हुआ है। हालांकि, अभी भी रूस की अर्थव्यवस्था में दस फीसद के बाद की भागीदारी आर्कटिक की खनिज संपदा के दोहन पर ही निर्भर है।

चीन आर्कटिक क्षेत्र का नया खिलाड़ी है। उसने इस क्षेत्र में बुनियादी संरचना और परियोजनाओं में निवेश शुरू कर दिया है। चीन दूसरे देशों के बढ़ते दखल के कारण स्वयं को अब आर्कटिक का निकटतम देश बताकर अपनी दावेदारी मजबूत करने के प्रयास में है। जबकि वह न तो इस क्षेत्र के निकट है और न ही आर्कटिक से जुड़ा उसका कोई समुद्री तट है। वह आर्कटिक परिषद का देश भी नहीं है। चीन यहां अपने परमाणु ऊर्जा चालित जहाजों को भेजने की कोशिश में है। अमेरिका के लिए चीन की यह नई चुनौती है। यहां बर्फ पिघलने को चीन अपने लिए अनुकूल स्थिति इसीलिए मान कर चल रहा है, क्योंकि तेजी से बर्फ पिघलने से उत्तरी समुद्री मार्ग खुलते जा रहे हैं। स्वेज नहर की तुलना में व्यापार के लिए यह नया मार्ग अधिक सुरक्षित माना जा रहा है।

सुदूर आर्कटिक परिषद में कुल आठ देश, कनाडा, फिनलैंड, डेनमार्क, आइसलैंड, नार्वे, स्वीडन, अमेरिका और रूस शामिल हैं। अमेरिका ने ग्रीनलैंड में शीत युद्ध के आरंभ में ही सैन्य ठिकाना बना लिया था। इसे पहले थुले नाम से जाना जाता था, लेकिन अब पिटुफिक स्पेस बेस के नाम से जाना जाता है। इस ठिकाने पर एक अत्यंत शक्तिशाली रडार अमेरिका ने तैनात किया हुआ है, जो यहां की जानकारी उसे तुरंत देता है। यह रडार इतना सतर्क है कि अंतरिक्ष में सक्रिय किसी गेंद जैसी वस्तु को भी यह देखने में सक्षम है। यानी परमाणु हथियार ले जा रही बैलिस्टिक मिसाइल अगर इस क्षेत्र से गुजरती है तो वह रडार की पकड़ में आसानी से आ सकती है। कोयले का भी इस क्षेत्र में अकूत भंडार है। औद्योगिक विकास के वास्ते खनिज संपदा के लिए यहां व्यापारिक गतिविधियां तेज हुई हैं। इस कारण यहां पारिस्थितिकी तंत्र गड़बड़ाने लगा है।

इस क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन के अनेक दुष्परिणाम दिखाई दे रहे हैं। इनमें से एक उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव क्षेत्रों में पृथ्वी पर बढ़ते तापमान के कारण बर्फ का पिघलना भी है। अत्यधिक गर्मी या सर्दी का पड़ना भी इसके कारक माने जा रहे हैं। वैज्ञानिकों की यह चिंता तब और ज्यादा बढ़ गई, जब आर्कटकि में फ्रांस से भी बड़े आकार के हिमनद 'टाटेन' के पिघलने की जानकारी अनुमान से कहीं ज्यादा निकली। यानी अभी तक जो अनुमान लगाए गए थे, उसकी तुलना में यह विशालकाय हिमनद कहीं अधिक तेजी से पिघल रहा है। इससे समुद्र का जलस्तर बढ़ने की भी आशंका जताई जा रही है। सेंट्रल वाशिंगटन विवि के पाल बिनबेरी की एक रपट के मुताबिक, 'अध्ययन से पहले लगता था कि 'टाटेन' हिमनद की बर्फ स्थिर है, लेकिन जलवायु परिवर्तन के असर के कारण इसकी स्थिरता में बदलाव देखा गया है और यह तेजी से पिघल रहा है। यदि आर्कटिक में उत्खनन की गतिविधियां बढ़ती हैं, तो निश्चित रूप से विश्वस्तर पर जलवायु परिवर्तन का संकट गहराएगा।

वर्तमान का मोल

दुनिया मेरे आगे

शिशिर शुक्ला

समय प्रकृति के द्वारा दिया गया एक ऐसा अमूल्य उपहार है, जो निरंतर गतिमान रहता है। विशेष बात यह है कि इसकी गति पर किसी भी परिस्थिति का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। समय के तीन पहलू हैं, जिनको हम भूतकाल, वर्तमान एवं भविष्य के नाम से जानते हैं। अगर तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो इन सभी पहलुओं में वर्तमान का महत्त्व सर्वाधिक है। कारण यह है कि भूतकाल स्मृतियों के रूप में संचित हो जाता है और भविष्य कल्पनाओं के रूप में प्रस्फुटित होता रहता है। इन दोनों पर ही हमारा लेशमात्र भी नियंत्रण नहीं होता। समय के जिस पहलू को हम अपने अनुसार नियंत्रित और समायोजित कर सकते हैं, वह है वर्तमान। इतना अवश्य है कि इस वर्तमान को सुंदर ढंग से चित्रित करने और सजाने-संवारने में हम भूतकाल की स्मृतियों और अनुभवों तथा भविष्य के लिए की गई कल्पनाओं का सहारा ले सकते हैं।

वर्तमान का प्रत्येक छोटे से छोटा क्षण हमारे लिए एक छोटे से जीवन की भांति है, जिसको हमें खुलकर पूरी प्रसन्नता और उत्साह के साथ जीने का प्रयास करना चाहिए। भूतकाल के साथ अनेक सकारात्मक और नकारात्मक पहलू जुड़े रहते हैं। अच्छे अनुभव और स्मृतियां इसके सकारात्मक पहलू हैं, जबकि असफलताएं, कठिन संघर्ष और कष्ट भूतकाल के नकारात्मक पहलू को निर्मित करते हैं। यह पूर्णतया हमारी बुद्धिमत्ता और विवेक पर निर्भर करता है कि हम भूतकाल के किस पहलू का उपयोग वर्तमान की रचना करने में करते हैं। रही बात भविष्य की, तो वह तो पूर्णतया हमारे हाथ से बाहर है। हम केवल और केवल अपने लक्ष्य से संबंधित अच्छी कल्पनाएं करके, उनके रंगों को वर्तमान के आलेखन में सुव्यवस्थित और सुनियोजित ढंग से भर सकते हैं। भविष्य को लेकर अपने मन में प्रतीक्षा का भाव रखना और इस कारण वर्तमान की उपेक्षा करते रहना नितांत अविवेकपूर्ण है। यह एक कटु सत्य है कि जब वर्तमान भूतकाल में परिणत हो जाता है, तभी हमें उसकी वास्तविक सुंदरता का अनुभव होता है। भूतकाल के लिए पश्चाताप और भविष्य के लिए चिंता हमें एक ऐसे भंवर में धकेल देते हैं, जो हमारे सुंदर सपनों और आकांक्षाओं से हमें हमेशा के लिए दूर कर देता है। हमें आशा, शांति, सुकून और संतोष से भरे हुए जीवन का अनुभव करने के लिए भूत और भविष्य पर केंद्रित न रहते हुए सतत रूप से वर्तमान की सुंदरता का रसास्वादन करते रहना चाहिए।

> **भविष्य को लेकर योजना बनाना तो सर्वथा उचित है, पर यह मान लेना कि भविष्य हमारे विचारों के अनुरूप ही आकार ग्रहण करेगा, बेवकूफी है। वर्तमान का प्रत्येक क्षण शांति एवं प्रसन्नता का अथाह भंडार है, बशर्ते कि भूतकाल एवं भविष्य से संबंधित किसी भी तरह के विचार का उसके साथ कोई भी दखल न हो।**

वर्तमान की उपेक्षा करना किसी भी दृष्टिकोण से बुद्धिमता का परिचायक नहीं है, क्योंकि वर्तमान और वास्तविकता सही मायने में एक दूसरे के पर्याय हैं। भूतकाल वास्तविकता के दायरे को पार करके एक अलग आयाम में पहुंच चुका है, जबकि भविष्य अभी वास्तविकता में परिणत ही नहीं हुआ है। इसलिए भूतकाल और भविष्य से बंधे रहकर वर्तमान की सुंदरता को भूल जाना कहीं न कहीं हमारे अविवेक और अदूरदर्शिता को ही दर्शाता है। वर्तमान का प्रत्येक पल अपने आप में एक अल्पकालिक, लेकिन सुंदर से जीवन को अभिव्यक्त करता हुआ प्रतीत होता है। आवश्यकता है केवल उसे पहचानते हुए उसकी अद्‌भुत सुंदरता में खोकर जीवन के उस अमूल्य क्षण में छिपे हुए आनंद की अनुभूति करने की। भूतकाल की कल्पना और भविष्य की चिंता निश्चित रूप से इस अनुभूति में बहुत बड़ी बाधक बन सकती है। चिंता, दुख और निराशा जैसे भाव तभी जन्म लेते हैं, जब हम या तो भूतकाल के विषय में अधिक विचार करते हैं या फिर भविष्य को लेकर अगणित निराधार कल्पनाओं में खो जाते हैं।

वर्तमान तो ऐसा क्षण है, जिसको अपनी अपेक्षानुरूप आकार देना पूर्ण रूप से हमारे अपने वश में होता है। जरा अपने विवेक और दूरदर्शिता के साथ इस तथ्य के विषय में विचार करें कि जो हमारे विचारों, बुद्धिमता एवं क्षमताओं के दायरे से बाहर है, उसके पीछे अपने अमूल्य समय को बर्बाद करके हमें क्या हासिल होने वाला है। हमारे दृष्टिक्षेत्र एवं कल्पनाक्षेत्र की सीमाओं के भीतर केवल और केवल वर्तमान ही है। सुख एवं प्रसन्नता का भाव केवल और केवल वर्तमान पर केंद्रित रहकर ही अर्जित किया जा सकता है। भविष्य को लेकर योजना बनाना तो सर्वथा उचित है किंतु यह मान लेना कि भविष्य हमारे विचारों के अनुरूप ही आकार ग्रहण करेगा, बेवकूफी है। वर्तमान का प्रत्येक क्षण शांति एवं प्रसन्नता का अथाह भंडार है, बशर्ते कि भूतकाल एवं भविष्य से संबंधित किसी भी तरह के विचार का उसके साथ कोई भी दखल न हो। प्रत्येक दिन हमें जीवन के रूप में प्रकृति द्वारा दिए गए अमूल्य उपहार के लिए उसे हृदय से धन्यवाद देना चाहिए।

प्रकृति के द्वारा रची गई सुंदर एवं अद्‌भुत प्रकृति की गोद में अपना कुछ समय व्यतीत करते हुए उसके मौन संदेश को सुनने एवं समझने का प्रयास करना चाहिए। प्रकृति की मौन ध्वनि को केवल और केवल उसी स्थिति में समझा जा सकता है जबकि हम शांत चित्त से एकांत में बैठकर अपनी अंतरात्मा से जुड़ने का प्रयास करें। मगर क्या यह उस स्थिति में संभव है जब हमारे अंतर्मन में भूतकाल एवं भविष्य को लेकर अनेक उधेड़बुन चल रही हो। संभवतः नहीं, क्योंकि प्रकृति से सच्चे अर्थों में जुड़ने के लिए मन का विकारमुक्त होना नितांत आवश्यक है। चिंता एवं अनावश्यक विचारों की भीड़ मन को विकृत करने में अहम भूमिका निभाती हैं। जब मन पूर्णरूपेण वर्तमान के साथ सम्बद्ध होता है, तो हमारी भावनाएं, विचार, इच्छाशक्ति एवं संवेदनाएं बाहरी परिवेश के साथ पूर्णतया लयबद्ध होती हैं और ऐसी स्थिति में हम अपने अंतस के भीतर एक अद्‌भुत आनंद को जन्म लेता हुआ महसूस कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो वर्तमान से जुड़ाव ही जीवन को एक सही एवं अर्थपूर्ण दिशा प्रदान कर सकता है।

चौपाल

असुरक्षित सड़कें

ऐसा प्रतीत होता है कि सरकार ने सड़क दुर्घटनाओं में शिकार होने वाले नागरिकों को उनकी हालत पर छोड़ दिया है। जिस प्रकार से हर वर्ष डेढ़ लाख से ज्यादा आम नागरिक सड़क दुर्घटनाओं में अपनी जान गंवा रहे हैं, वह बहुत ही चिंतजानक है। इससे यह संदेश जाता है कि सरकारों को आम आदमी की कोई परवाह नही है। नए बने राष्ट्रीय राजमार्ग और पुल सुरक्षा प्रमाणपत्र मिलने के बाद भी धंस रहे हैं। सड़कें टूट रही हैं। फ्लाईओवर पर पानी भर रहा है, तो स्पष्ट रूप से हाइवे इंजीनियर और सुरक्षा अधिकारी इसके लिए जिम्मेदार हैं। उन ठेकेदारों को भी काली सूची में डाल कर सरकारों को जिम्मेदारी तय करनी होगी। जनता से करों के रूप में वसूले गए पैसे को ऐसे नहीं लूटने दिया जाना चाहिए। राष्ट्रीय राजमार्ग मंत्रालय को उन सभी राजमार्गों का सड़क सुरक्षा लेखा-जोखा करना चाहिए, जहां सबसे ज्यादा हादसे हो रहे रहे हैं। इसके साथ-साथ सड़क सुरक्षा संबंधी उपायों को कड़ाई से लागू करना चाहिए और सभी राजमार्गों की निगरानी के लिए उच्चस्तरीय सीसीटीवी व्यवस्था लागू की जानी चाहिए।

– आरके शर्मा, रोहिणी, दिल्ली

युवाओं की घटती संख्या

नमूना पंजीकरण प्रणाली की वर्ष 2023 की रपट बताती है कि भारत की आबादी तेजी से वृद्ध हो रही है। देश में प्रजनन दर घट रही है। शून्य से चौदह वर्ष आयु वर्ग की आबादी में निरंतर कमी दर्ज हो रही है। वहीं वरिष्ठ नागरिकों की संख्या प्रतिवर्ष 9.7 फीसद की दर से बढ़ रही है। यह स्थिति आने वाले समय में हमारे लिए गंभीर चुनौती बन सकती है। इसके प्रमुख कारणों में देर से विवाह, करियर की प्राथमिकता तथा बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य और पालन-पोषण का बढ़ता खर्च शामिल हैं। युवा पीढ़ी इन जिम्मेदारियों से बचना चाहती है। आयरलैंड में सरकार बच्चों को शिक्षा निशुल्क उपलब्ध कराती है और प्रति बच्चे के हिसाब से आर्थिक सहायता भी देती है। बच्चों की संख्या अधिक होने पर कर में छूट दी जाती है। इस प्रकार वहां परविार चलाने के लिए प्रोत्साहन मिलता है। भारत में भी यदि संतुलित नीतियां अपनाई जाएं, तो आने वाले समय में देश युवा बना रहेगा।

– अरविंद जैन 'बीमा', उज्जैन

कूटनीतिक दूरदर्शिता

राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की अप्रत्याशित नीतियों ने भारत-अमेरिका संबंधों को अनिश्चितता के भंवर में ला खड़ा किया। उनके दूसरे कार्यकाल में भारत पर पचास फीसद शुल्क और रूस से तेल आयात पर लगातार निंदा ने आर्थिक व कूटनीतिक समीकरणों को झकझोर दिया। ट्रंप की कठोर आव्रजन नीतियां भारतीय पेशेवरों और छात्रों के लिए चुनौतियां खड़ी कर सकती हैं। फिर भी, भारत ने इस संकट को अवसर में बदला और आर्थिक सुधारों एवं आत्मनिर्भरता को गति दी। हालांकि ट्रंप ने प्रधानमंत्री को 'अच्छा दोस्त' कह कर रिश्तों में गर्मजोशी दिखाई, लेकिन उनके फैसले इस दोस्ती पर संदेह पैदा करते हैं। भारत व्यापार समझौतों में अपनी शर्तों पर अडिग है और उसने शंघाई सहयोग संगठन में चीन और रूस के साथ संतुलित वार्ता कर अपनी स्वतंत्र नीति का परिचय दिया। भारत की कूटनीति ने दूरदर्शिता का अनूठा उदाहरण पेश किया है।

– आरके जैन 'अरिजीत', बड़वानी

सुधार में रफ्तार

जीएसटी में हालिया सुधार अर्थव्यवस्था के लिए सकारात्मक संकेत है। पहले उद्योगों की प्रतिस्पर्धा प्रभावित हो रही थी। विशेषकर कपड़ा और उर्वरक जैसे क्षेत्र इससे काफी प्रभावित थे। अब कर ढांचे में सुधार और जीएसटी अपीलीय न्यायाधिकरण की स्थापना से न केवल कारोबारियों को विवादों के त्वरित और निष्पक्ष समाधान की सुविधा मिलेगी, बल्कि उद्योगों में स्थिरता आएगी। यह कदम निवेशकों के लिए भरोसे का वातावरण बनाएगा। इससे आर्थिक गतिविधियों को भी रफ्तार मिलेगी। हालांकि, सुधार की यह प्रक्रिया यहीं रुकनी नहीं चाहिए। सरकार जीएसटी दरों को और सरल तथा तार्किक बनाए, छोटे और मध्यम उद्यमों के लिए अनुपालन की बाधाएं कम करे। डिजिटल ढांचे को भी सुदृढ़ बनाना होगा। यदि कर प्रणाली सहज व व्यवसाय-अनुकूल होगी, तो उद्योगों का विश्वास और बढ़ेगा।

– आयुष्मान पांडेय, लखनऊ

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

सेना में एकल कमांड

सुधार पर बहस

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ ने एक बार कहा था, परिवर्तन के बिना प्रगति असंभव है। वास्तव में, यथास्थिति बनाए रखना कोई प्रगति नहीं है और अंततः यह आपको दौड़ में पीछे छोड़ देती है। हमारे आसपास की दुनिया बदल रही है - भू-राजनीति तेजी से बदल रही है, इसलिए यह जरूरी है कि नए युग की चुनौतियों का सामना करने के लिए हमारी तैयारी को उन्नत किया जाए, ताकि हम बदलते समय की चुनौतियों का सामना कर सकें। रक्षा तैयारियाँ भी इसका अपवाद नहीं हैं, खासकर जब हमारे प्रतिद्वंद्वी तेज गति से उन्नत हो रहे हैं। दुर्भाग्य से, संगठन की एक प्रिय अवधारणा - रंगमंचीकरण - फाइलों में ही अटकी पड़ी है। लेकिन सेना प्रमुख की हालिया टिप्पणियों ने इसे नई प्रासंगिकता प्रदान की है।

थिएटरीकरण पर सेना प्रमुख के विचार संदेह की कोई गुंजाइश नहीं छोड़तेः भारत को इस सुधार को अपनाना ही होगा, आज नहीं तो कल। जनरल उपेंद्र द्विवेदी का यह कहना कि सशस्त्र बलों का पुनर्गठन ₹अपरिहार्य और समय की आवश्यकता₹ दोनों है, ऐसे समय में आया है जब सेवाओं के भीतर बहस खुलकर सामने आ गई है। संज्ञानात्मक युद्ध के लिए एक एजेंसी—सूचना क्षेत्र का विस्तार—के निर्माण का उनका अतिरिक्त उल्लेख आगे आने वाली चुनौतियों के दायरे को और बढ़ा देता है। मूलतः, थिएटराइजेशन का अर्थ है थलसेना, नौसेना और वायुसेना को एक ही ऑपरेशनल कमांडर के साथ संयुक्त कमान के तहत एकीकृत करना। यह एक समय-परीक्षित संगठनात्मक सुधार है जिसे भारत को लागू करने की आवश्यकता है। यह एक साधारण सत्य पर आधारित हैः युद्ध अब अलग-अलग सेनाओं द्वारा अपने-अपने क्षेत्र की रक्षा के लिए नहीं लड़े जाते,

बल्कि बहु-क्षेत्रीय अभियानों के रूप में लड़े जाते हैं जो भूमि, समुद्र, वायु, साइबर, अंतरिक्ष और सूचना के क्षेत्र में फैले होते हैं। उत्तर में भारत की सीमाएँ और दक्षिण में विशाल समुद्री विस्तार, खंडित दृष्टिकोण के लिए बहुत कम जगह छोड़ते हैं। चाहे वह अग्रिम मोर्चे पर तैनात बीएसएफ और आईटीबीपी हों, साइबर और अंतरिक्ष एजेंसियाँ हों, या इसरो और रेलवे जैसी नागरिक संस्थाएँ हों—अगले युद्ध में समन्वय के लिए एकल कमान बिंदु की आवश्यकता होगी। थिएटराइजेशन ठीक यही प्रदान करना चाहता है।

और फिर भी, इस विचार के पहली बार सामने आने के दो दशक से भी अधिक समय बाद, इसे लागू करना अभी भी मुश्किल बना हुआ है। सेना ने लगातार थिएटराइजेशन का समर्थन किया है, और जनशक्ति को सुव्यवस्थित करने और कमान को तेज करने की इसकी क्षमता को पहचाना है। नौसेना भी इसका समर्थन कर रही है, लेकिन वायु सेना सतर्क रही है। सीमित लड़ाकू स्क्वाड्रनों और उच्च-मूल्य वाली संपत्तियों के साथ, यह संसाधनों को कई थिएटर कमांडों में बाँटने के बजाय केंद्रीकृत नियंत्रण को प्राथमिकता देती है। इसके नेतृत्व का तर्क है कि वायु शक्ति स्वाभाविक रूप से लचीली होती है और इसे कठोर भौगोलिक सीमाओं में नहीं बाँधा जाना चाहिए। उनका तर्क है कि इससे सिद्धांत, पदानुक्रम और संस्थागत पहचान प्रभावित होगी। लेकिन इसके फायदे चुनौतियों से कहीं अधिक हैं। अमेरिका और चीन ने इस सुधार से लाभ उठाया है। अब समय आ गया है कि वायु सेना की शंकाओं का समाधान खोजा जाए और आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ा जाए। थिएटराइजेशन का मतलब किसी एक सेवा को कम करना नहीं है, बल्कि राष्ट्रीय आपातकाल के समय में तुरंत प्रतिक्रिया देने की राष्ट्र की सामूहिक क्षमता को मजबूत करना है।

वैश्विक मंच पर भारतीय सिनेमा

वेनिस से लेकर टोरंटो और बुसान तक, भारतीय सिनेमा अब सिर्फ.एक उत्सव का मेहमान नहीं, बल्कि एजेंडा तय करने वाली एक ताकत बन गया है। पुनर्स्थापनों, प्रीमियर और अंतरराष्ट्रीय परियोजनाओं के साथ, भारत अपनी विरासत को संजो रहा है, समकालीन प्रतिभाओं को प्रदर्शित कर रहा है और बाजारों को आकार दे रहा है।

चैतन्य के प्रसाद
लेखक, पूर्व सिविल सेवक हैं।

भारत विश्व के त्यौहारों के मानचित्र के केंद्र में वापस आ गया है, किसी मौसमी मेहमान के रूप में नहीं, बल्कि एजेंडा तय करने वाली एक ताकत के रूप में। इसकी झलक हर जगह दिखाई दे रही हैः एक नवयथार्थवादी मील का पत्थर, बिमल रॉय की ₹दो बीघा जमीन₹, नए सिरे से पुनर्स्थापित 4ड में वेनिस लौट रही है, टोरंटो अपने 50वें वर्ष का जश्न दक्षिण एशियाई देशों में रिकॉर्ड उपस्थिति के साथ मना रहा है, जिसमें प्रमुख भारतीय प्रीमियर और ₹शोले₹ का एक भव्य पुनरुद्धार शामिल है; और बुसान का अक्टूबर कैलेंडर पहले से ही प्रोग्रामिंग और एशियाई प्रोजेक्ट मार्केट, दोनों में भारतीय फीचर फि ल्मों और भारतीय समर्थित परियोजनाओं से भरा पड़ा है। कुल मिलाकर, ये कोई अलग-थलग जीत नहीं हैं; ये एक ऐसे देश का उदाहरण हैं जो शिल्प की गहराई, पुनरुद्धार की ताकत, प्रोग्रामिंग संबंधों और अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क को सांस्कृतिक शक्ति में बदल रहा है।

वेनिस में, विरासत का यह मोड़ साफ दिखाई देता है। जब दो बीघा जमीन वेनिस क्लासिक्स की सूची में शामिल होगी, तो यह न केवल उस फि ल्म की विजयी वापसी होगी जिसने कभी भारत की आजादी के बाद की चिंताओं को दुनिया तक पहुंचाया था, बल्कि यह भारत के पुनरुद्धार पारिस्थितिकी तंत्र को भी प्रदर्शित करेगी। यह पुनरुद्धार उच्चतम मानकों वाली अंतर्राष्ट्रीय साझेदारियों के साथ किया गया है, जिसमें रॉय की फि ल्म को कुब्रिक, कीस्लोव्स्की और कोबायाशी की पुनर्स्थापित कृतियों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर रखा गया है। यह एक आदर्श वाक्य है, शिष्टाचार नहीं। यह दर्शाता है कि भारत केवल नई फि ल्मों का निर्यात ही नहीं कर रहा है, बल्कि दुनिया के सबसे सटीक दर्शकों के सामने अपनी स्मृति को संजो रहा है।

टोरंटो का स्वर्ण जयंती संस्करण भारतीय सिनेमा के वर्तमान काल का प्रदर्शन बन गया है। इस वर्ष नीरज घायवान की होमबाउंड (एक भव्य समारोह, मार्टिन स्कॉरसेसी द्वारा कार्यकारी-निर्मित), अनुराग कश्यप की बंदर (बंदर इन अ केज) और विकास रंजन मिश्रा की बयान जैसी उच्च-स्तरीय भारतीय फि ल्में प्रदर्शित हो रही हैं। टीआईएफएफ क्लासिक्स में, शोले की पुनरुद्धार वर्षगांठ पर प्रमुखता से सुर्खियों में है।

क्यूरेटोरियल की मुख्य बात स्पष्ट हैः समकालीन भारतीय लेखक घर के सामने की जमीन ले रहे हैं, जबकि क्लासिक भारतीय सिनेमा को वैश्विक विरासत के रूप में स्थापित किया जा रहा है। एक ही महोत्सव दोनों को सर्वोच्च दृश्यता के साथ प्रदर्शित कर सकता है, यह इस बात का मापदंड है कि आज विश्व सिनेमाई कल्पना में भारत किस स्थान पर है।

पैमाने का मामला भी है। टीआईएफएफ ने इसे एक रिकॉर्ड वर्ष कहा हैः आधिकारिक चयन में भारत, दक्षिण एशिया और प्रवासी समुदाय से 17 फिल्में और श्रृंखलाएं - भारत से आठ, भारत से परे दक्षिण एशिया से चार और प्रवासी शीर्षक पांच। केवल संख्याएं मायने नहीं रखतीं, लेकिन एक ऐसे महोत्सव में जहां चयन निर्मम होता है, मात्रा दृश्यता बन जाती है, और दृश्यता वितरण और पुरस्कार मार्गों में परिवर्तित हो जाती है। यह एक समूह है, संयोग नहीं।

बुसान, जो अक्सर वह प्रयोगशाला होती है जहां एशियाई सिनेमा की अगली लहर सबसे पहले देखी जाती है, इस वर्ष भारतीय कहानियों में भी गहराई से निवेशित है। आधिकारिक चयन में पहले से ही विभिन्न वर्गों में कई भारतीय फीचर शामिल हैंः संजू सुरेंद्रन की इफ ऑन ए विंटर्स नाइट और महर्षि तुहिन कश्यप की कोक्कोकोकोक विजन - एशिया में, ट्रिबेनी राय की शेप ऑफ मोमो (भारत/कोरिया) उसी वर्ग में; और विकास रंजन मिश्रा की बयान, अनूप लोकुर की डोंट टेल मदर, और तनिष्ठा चटर्जी की फुल प्लेट इन ए विंडो ऑन एशियन सिनेमा। नई लॉन्च की गई प्रतियोगिता में, स्पाईंग स्टार्स फ्रांस-श्रीलंका-भारत के सह-निर्माण के रूप में दिखाई देती है, जो रेखांकित करती है कि कैसे भारतीय पूंजी और रचनात्मक प्रतिभाएं बहुराष्ट्रीय परियोजनाओं में निवास करती हैं।

बाजार का पक्ष भी उतनी ही महत्वपूर्ण कहानी कहता है। एशियन प्रोजेक्ट मार्केट 2025 ने 30 परियोजनाओं का अनावरण किया है, जिसमें भारत के निमार्ता और रचनात्मक प्रमुख हैंः कुंजिला मस्किल्लामणि की द लास्ट ऑफ देम प्लेग्स को पायल कपाड़िया, जियो बेबी और कानी कुसरुति का समर्थन प्राप्त है; सौरव राय की लंका (द फायर) भारतीय चयनों में से एक है; और मुख्यधारा के स्टार पावर विकास में कदम रखते हैं, जिसमें आलिया भट्ट निमार्ता के रूप में जुड़ी हैं, जिसे व्यापक रूप से डिफिकल्ट डॉटर्स/डिफिकल्ट गर्ल्स के रूप में रिपोर्ट किया गया है यह उछाल पिछले साल कान में हुई ऐतिहासिक उपलब्धि के कारण है, जहां पायल कपाड़िया की फिल्म ऑल वी इमेजिन एज लाइट ग्रैंड प्रिक्स जीतने वाली पहली भारतीय फिल्म बनी थी, जिसने कान प्रतियोगिता में भारत के लिए 30 साल का अंतराल समाप्त कर दिया था।

कान्स पोडियम टोरंटो की सूची नहीं है और न ही वेनिस की क्लासिक्स स्लेट है, लेकिन साथ में वे एक ही संदेश देते हैंः प्रोग्रामर, जूरी और भौगोलिक क्षेत्रों के बाजार भारतीय सिनेमा की गंभीरता, रेंज और निर्यात क्षमता के इर्द-गिर्द एकजुट हो रहे हैं।

यह क्षण भारत की वैश्विक स्थिति के बारे में क्या कहता है यह स्पष्ट है। भारत भागीदार से मंच की ओर बढ़ रहा है। वेनिस, टोरंटो और बुसान में, यह एक साथ कई रजिस्टरों में मौजूद हैः कैनन, समकालीन और पाइपलाइन। फिल्में भेजने और टेबल सेट करने के बीच यही अंतर है। भारतीय फिल्मों की उपस्थिति भारतीय क्यूरेटोरियल प्रभाव से परिलक्षित होती हैः टीआईएफएफ की वरिष्ठ कार्यक्रम सलाहकार (दक्षिण एशिया) मीनाक्षी शेडे ने उत्तरी अमेरिकी और यूरोपीय द्वारपालों के बीच दक्षिण एशियाई आवाजों में विश्वास पैदा करने में दशकों बिताए हैं। वेनिस के लिए दो बीघा जमीन और टीआईएफएफ के लिए शोले को पुनर्स्थापित करना एक नीतिगत समझ का संकेत देता है कि क्लासिक भारतीय सिनेमा को संरक्षित और प्रसारित करने से सांस्कृतिक पूंजी अर्जित होती है जिसे केवल प्रीमियर से नहीं खरीदा जा सकता। यह समकालीन रिलीज में नए दर्शकों को आकर्षित करते हुए भारत को फिल्म इतिहास में स्थापित करता है। साथ ही, अंतरराष्ट्रीय निर्माण एक आदर्श है, अपवाद नहीं।

बुसान प्रतियोगिता में भारत-फ्रांस-श्रीलंका सहयोग से लेकर एपीएम में भारत समर्थित परियोजनाओं और टीआईएफएफ में भारतीय निर्देशकों के इर्द-गिर्द वैश्विक निर्माण समूह तक, भारत की रचनात्मक अर्थव्यवस्था सह-निर्माण में निपुण है। यह 'भारतीय सिनेमा' को किसी एक देश की पाइपलाइन के बजाय एक अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क के रूप में पुनर्परिभाषित करता है।

अंततः, प्रवासी गुणक वास्तविक है। टीआईएफएफ के रिकॉर्ड 17 दक्षिण एशियाई शीर्षक बताते हैं कि कैसे भारतीय डीएनए वाली कहानियाँ सीमाओं और दर्शक वर्गों के पार पहुँचती हैं। प्रवासी दृश्यता वितरकों के लिए बाजार जोखिम को कम करती है जबकि गुरुत्वाकर्षण का केंद्र भारतीय रचनात्मक श्रम और विषयों से जुड़ा रहता है। यह एक राजस्व मॉडल के साथ सॉफ्ट पावर है।

निकट भविष्य में, सभी की निगाहें होमबाउंड, बंदर और बयान के टीआईएफएफ प्रीमियर पर टिकी हैं कि आलोचक और खरीदार उन्हें पुरस्कार-सीजन में कैसे पेश करते हैं; शोले के लिए टीआईएफएफ क्लासिक्स रिसेप्शन पर उत्तरी अमेरिकी दर्शकों के लिए प्रामाणिक भारतीय सिनेमा के तापमान की जाँच के रूप में; और बुसान के विजन-एशिया शीर्षकों और एपीएम सौदों पर उन संकेतों के लिए कि किन भारतीय फिल्म निमार्ताओं को विकास से वैश्विक वितरण की ओर अग्रसर होना है।

यदि आप इसे दो चक्रों में विभाजित करते हैं, इस शरद ऋतु में वेनिस/बुसान, अगले वसंत में बर्लिन/कान्स, तो आप देखेंगे कि भारतीय सिनेमा की उपस्थिति अब एक लय की तरह व्यवहार करती है, न कि एक उछाल की तरह। व्यापक अर्थ सरल हैः भारत का रचनात्मक इंजन तेजी से विविधतापूर्ण और पेशेवर हो रहा है, और दुनिया के सबसे प्रतिस्पर्धी महोत्सव पारिस्थितिकी तंत्र उसी तरह प्रतिक्रिया दे रहे हैं।

ऋणदाता के तौर पर भारत का भविष्य

एक व्यावसायिक खुफिया रिपोर्ट के अनुसार, भारत का वैकल्पिक ऋण बाजार सालाना 26 प्रतिशत से अधिक की दर से बढ़ रहा है। यह उद्योग पहले से ही एक आदर्श बदलाव के दौर से गुजर रहा हैः परिसंपत्ति-समर्थित ऋण से व्यवहार विश्लेषण की ओर।

शशांक सौरव
लेखक, चार्टर्ड एकाउंटेंट हैं।

बहुत कम लोग भविष्य की अवधारणाओं को इतने सरल शब्दों में प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत कर सकते हैं, जितना कि इंफोसिस के गैर-कार्यकारी अध्यक्ष नंदन नीलेकणी कर सकते हैं। 2016 में, उन्होंने एक ऐसे भविष्य के बारे में स्पष्ट रूप से कहा था जब ऋण और बैंकिंग संचालन पूरी तरह से डिजिटल होंगे।

2024 में, उन्होंने फिन्टरनेट शब्द गढ़ा - वित्तीय प्रणालियों का भविष्य। हाल ही में, उन्होंने बताया कि कैसे भारत 2035 तक दस लाख स्टार्ट-अप की मेजबानी करेगा।

इन भविष्यवाणियों को परस्पर मिला दें और हम यह विश्वास कर सकते हैं कि यह रास्ता भारत की बैंकिंग प्रणाली को कागज रहित ऋण से आगे छलांग लगाते हुए देख सकता है, एक उपस्थिति-रहित और सहमति-आधारित विश्वास नेटवर्क तक। यह परिवर्तन उन लाखों स्टार्ट-अप और ग्रामीण उद्यमों को सक्षम करने के लिए है जिन्हें भरोसेमंद, चुस्त और तकनीक-समृद्ध ऋण की आवश्यकता है।

यह डेटा मोबाइल फोन के उपयोग, बिजली के उपयोग और यहां तक कि यूपीआई भुगतानों से संबंधित हो सकता है ताकि उन छोटी-छोटी जानकारियों का पता लगाया जा सके - वे निशान जो ऋण के उद्देश्य और चुकाने की क्षमता के बारे में अधिक बताते हैं। यह वह ज्ञान है जो एक अच्छे बैंक के गहन विश्लेषण और व्याख्या से प्राप्त डेटा प्रदान करने में विफल रहता है।

एक व्यावसायिक खुफिया रिपोर्ट के अनुसार, भारत का वैकल्पिक ऋण बाजार सालाना 26 प्रतिशत से अधिक की दर से बढ़ रहा है। यह उद्योग पहले से ही एक आदर्श बदलाव के दौर से गुजर रहा हैः परिसंपत्ति-समर्थित ऋण से व्यवहार विश्लेषण की ओर।

यह बदलाव भारत के वित्तीय पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर जोखिम मूल्यांकन पद्धतियों के एक मौलिक पुनसंयीजन का प्रतिनिधित्व करता है।

इस बदलाव के दो कारण हैं। पहला, ग्राहकों की मांग; दूसरा, फोमो (छूट जाने का डर)। आज, भारत में लगभग 63 मिलियन मध्यम, लघु एवं सूक्ष्म उद्यम में से अधिकांश के पास औपचारिक ऋण तक पहुंच नहीं है - मुश्किल से 14 प्रतिशत औपचारिक रूप से ऋण तक पहुंच पा रहे हैं। ऐसा इसलिए नहीं है।

क्योंकि ऐसे उद्यम जोखिम भरे हैं, बल्कि इसलिए है क्योंकि वे पारंपरिक बैंकिंग और वित्तीय प्रणालियों के लिए ज्यादातर अदृश्य रहे हैं।

ग्राहकों की मांग इस आधार से भी उपजी है कि आज, ग्राहक सेकंडों में सेवा वितरण की मांग करते हैं। इसलिए, वित्तीय संस्थानों को व्यापक दस्तावेजीकरण और कठोर संपार्श्विक आवश्यकताओं पर आधारित नहीं किया जा सकता। इसलिए, ऐसी प्रक्रियाएँ अभूतपूर्व, फिर भी मौन अप्रचलन का अनुभव कर रही हैं। बैंक वैकल्पिक डेटा स्रोतों पर निर्भर हैं।

दूसरा, अधिकांश संगठनों और उद्यमों ने सीख लिया है कि यह एक सरल खेल है - प्रदर्शन करो या नष्ट हो जाओ। इसलिए, नए मानकों को न अपनाना अस्तित्व के लिए एक जोखिम है। जो बेहतर पूवानुर्मान क्षमता प्रदर्शित कर सकते हैं, वे न केवल जीवित रहते हैं बल्कि बढ़ते भी हैं। इसलिए, डिजिटल परिवर्तन की यात्रा नए पुनरावृत्तियों के साथ उभरी है - एक जो कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मशीन लर्निंग एल्गोरिदम और व्यापक डिजिटल फुटप्रिंट विश्लेषण को एकीकृत करती है।

मशीन लर्निंग वही कर रही है जो जोखिम अधिकारी पहले सहज ज्ञान के आधार पर किया करते थे, लेकिन बड़े पैमाने पर। आज, एल्गोरिदम सैकड़ों व्यवहारिक चरों को पढ़कर यह अनुमान लगा सकते हैं कि कोई उधारकर्ता 15,000 का साधारण ऋण चुकाएगा या नहीं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता पर आधारित तकनीक इस दुविधा को सेकंडों में समझने में मदद कर सकती है। और यह एक पुनरावृत्त शक्ति है। 2023 तक, भारत में डिजिटल ऋण 350 अरब डॉलर से अधिक हो गया, जो 2012 में केवल 9 अरब डॉलर था।

इस क्षमता का अधिकांश भाग एआई-समर्थित अंडरराइटिंग और रीयल-टाइम एपीआई द्वारा संचालित है जो जीएसटी डेटा, ई-केवाईसी, बैंक स्टेटमेंट और वैकल्पिक डेटा को सेकंडों में प्राप्त करते हैं। ये प्रणालियां ऋण देने को और भी स्मार्ट बनाती हैं।

आज का नया जोखिम इंजन विशाल है और कई तकनीकी परतों को घेरे हुए है। यह ब्लॉकचेन और स्मार्ट कॉन्ट्रैक्ट हो सकते हैं जिनका उपयोग वर्तमान में धोखाधड़ी को कम करने के लिए किया जाता है।

यह समय पर पुनर्भुगतान को सुनिश्चित करने के लिए स्वचालित संदेश भी हो सकते हैं। इसके साथ-साथ ही यह कृषि-आधारित मध्यम, लघु एवं सूक्ष्म उद्यम के जोखिम का आकलन करने के लिए उपग्रह-आधारित फसल डेटा का लाभ उठाने की ऋणदाताओं की क्षमता भी हो सकती है।

ऋण देने में दस्तावेजीकरण की हमेशा एक भूमिका होगी। लेकिन भविष्य व्यवहार के विश्लेषण और वास्तविक क्षमता के लिए वैकल्पिक डेटा का लाभ उठाने से निर्मित विश्वास में निहित है। परिणामी प्रणाली, बैंकिंग की समय-परीक्षित प्रक्रियाओं को वैकल्पिक डेटा के साथ एकीकृत करके, विश्वास-आधारित ऋण और तकनीकी नवाचार को जन्म देगी। यह भारत के वित्तीय सेवा परिदृश्य में एक परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता है - एक ऐसा परिदृश्य जो ज़िम्मेदार नवाचार को सुगम बनाता है।

तकनीकी परिष्कार पहले से वंचित आबादी के लिए वित्तीय समावेशन के अभूतपूर्व अवसर खोलता है। यह संगठनों को जोखिम-समायोजित मूल्य निर्धारण जैसे नए उत्पाद बनाने में भी सक्षम बनाता है जो जनसांख्यिकीय सामान्यीकरण या परिसंपत्ति स्वामित्व पैटर्न के बजाय वास्तविक उधारकर्ता विशेषताओं को दर्शाते हैं।

यह प्रतिमानात्मक विकास औपचारिक ऋण तक पहुंच को मौलिक रूप से लोकतांत्रिक बनाता है, साथ ही स्थायी ऋण प्रथाओं के लिए आवश्यक विवेकपूर्ण जोखिम प्रबंधन मानकों को बनाए रखता है।

भारत के ऋण देने वाले पारिस्थितिकी तंत्र के लिए, संदेश स्पष्ट हैः जो लोग बैलेंस शीट से परे आँकड़ों को सुनना सीखते हैं, वे बेहतर, गहन और अधिक निष्पक्ष ऋण देंगे।

आप की बात

नेपाल, बांग्लादेश और श्रीलंका में आग

पिछले चार वर्षों में दक्षिण एशिया की राजनीति में एक अजीब समानता उभरी है युवा नेतृत्व वाले जनांदोलन, भ्रष्टाचार और सत्ता के केंद्रीकरण के खिलाफ उग्र विरोध, और अंततः सरकारों का झुकना। नेपाल की हालिया हिंसा इसी सिलसिले की अगली कड़ी है। बांग्लादेश में भी व श्रीलंका में इसयी तरह का जनाक्रोश देखने को मिला था। नेपाल में सितंबर 2025 में सोशल मीडिया बैन के खिलाफ शुरू हुए जेन जी आंदोलन ने राजधानी काठमांडू को हिला दिया। प्रदर्शनकारियों ने संसद और सुप्रीम कोर्ट तक कब्जा कर लिया, कई मंत्रियों को इस्तीफा देना पड़ा, और प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली को पद छोड़ना पड़ा। यह आंदोलन सिर्फ एक तकनीकी प्रतिबंध के खिलाफ नहीं था यह युवाओं की अभिव्यक्ति की आजादी, भ्रष्टाचार और भाई-भतीजावाद के खिलाफ एक निर्णायक विद्रोह था।ऐसे ही हालात 2024 में बांग्लादेश में और उसके पहले श्रीलंका में 2022 में देखे गए जब छात्र आंदोलन ने तत्कालीन सरकारों को हिला दिया ।इन तीनों देशों में एक समान पैटर्न दिखता है युवा पीढ़ी, जो सोशल मीडिया पर पली-बढ़ी है, अब सड़कों पर उतरकर बदलाव की मांग कर रही है। वे सिर्फ नारे नहीं लगा रहे, बल्कि सत्ता की चूलें हिला रही हैं।

- भगवानदास छारिया, सोमानी नगर, इंदौर

निर्दयता की पराकाष्ठा

गाजा पट्टी में जारी जंग जितनी भीषण हुई है इजराइल सरकार की नीतियां भी उतनी ही विभत्स साबित हुई है।सरकार के कृत्य अक्सर अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों पर सवाल उठाते हैं। हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि फलस्तीनी कैदियों को पर्याप्त और गुणवत्तापूर्ण भोजन न देना न केवल कानून के खिलाफ है बल्कि यह अमानवीयता की पराकाष्ठा भी है। युद्ध जैसी परिस्थितियों में भी कैदियों के बुनियादी अधिकारों से वंचित करना मानवता पर सीधा प्रहार है। न्यायपालिका ने दो वर्षों बाद सरकार के खिलाफ यह दुर्लभ निर्णय दिया जो यह दशार्ता है कि स्थिति कितनी गंभीर है। गाजा युद्ध के बाद से अपनाई गई भोजन नीतियों ने ही कैदियों को कुपोषण और भूखमरी की स्थिति तक पहुँचाया जो न केवल अंतरराष्ट्रीय कानून, बल्कि सभ्यता और नैतिकता के भी विरुद्ध है। यह तथ्य रेखांकित करता है कि सुरक्षा और प्रतिशोध के नाम पर इजराइल सरकार ने मानवीय मूल्यों को किनारे कर दिया है। न्यायालय का यह निर्देश याद दिलाता है कि कोई भी सत्ता अपने विरोधियों से इतनी नफरत नहीं कर सकती कि उन्हें जीने के न्यूनतम अधिकारों से भी वंचित कर दे। यह निर्णय अंतरराष्ट्रीय समुदाय के लिए भी एक चेतावनी है कि इजराइल की अमानवीय नीतियों पर निगरानी और दबाव बढ़ाएं ताकि निर्दोष लोग प्रताड़ना से बच सकें।

- अमृतलाल मारू, इंदौर

एनआरसी की अनिवार्यता

देश के किसी भी चुनाव में केवल वही मतदान करने के अधिकारी हो सकते हैं जो भारत के नागरिक हों। जो भारत के नागरिक नहीं और किसी तरह मतदाता बन बैठे हैं वे भारतीय लोकतंत्र के साथ खिलवाड़ ही कर रहे हैं। उचित यह होगा कि भारत सरकार राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर तैयार करने की दिशा में आगे बढ़े। इसका अर्थ है कि जिन लोगों ने गलत तरीके से आधार हासिल कर लिया है, उन्हें मतदाता बनने से नहीं रोका जा सकता। यह कोई अच्छी स्थिति नहीं और तब तो बिल्कुल भी नहीं, जब चुनाव आयोग बिहार के बाद पूरे देश में मतदाता सूचियों के सत्यापन की तैयारी कर रहा है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि अपने देश में सभी भारतीय नागरिकों को उनकी नागरिकता साबित करने वाले प्रमाण पत्र नहीं दिए जा सके हैं। सुप्रीम कोर्ट ने केवल जन्म प्रमाण पत्र और पासपोर्ट को ही नागरिकता का प्रमाण माना है। यह सही भी है, लेकिन अपने देश में अनेक लोगों के पास जन्म प्रमाण पत्र नहीं और पासपोर्ट तो बहुत कम लोग बनवाते हैं। यह भी ध्यान रहे कि आधार एवं अन्य प्रमाण पत्रों की तरह जन्म प्रमाण पत्र भी नकली बनवाए जा सकते हैं। अच्छा यह होगा कि भारत सरकार के साथ-साथ सुप्रीम कोर्ट भी इस पर विचार करे कि ऐसा कोई प्रमाण पत्र देश के लोगों को कैसे दिया जाए, जो उन्हें भारत का नागरिक साबित करे।

- विभुक्ति बुपक्या, उज्जैन

बदले ट्रंप के सुर

आज टैरिफ विवाद एवं रूस से तेल खरीदने के मुद्दे पर भारत -अमेरिका में जारी तनाव के बीच अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प एवं भारतीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने सकारात्मक बयानों के जरिए दरकते रिश्तों को बचाने की एक महत्वपूर्ण कोशिश की है, जबकि एक दिन पहले हि ट्रम्प ने भारत को चीन के खेमे में जाने संबंधी बयान देकर विवाद खड़ा कर दिया था , लेकिन अब इसके कुछ घंटे बाद ही अचानक ट्रम्प ने मोदी को अब एक बार फिर से महान प्रधानमंत्री बताते हुवे भारत अमेरिका के सम्बंधों को आज एक बार फिर से विशेष बताया है वे आगे यह भी कहते हैं कि कभी-कभार आपस में कुछ विवाद हो सकते हैं लेकिन चिंता की कोई बात नहीं है फिर इधर स्वयं मोदी ने भी ट्रम्प के उक्त बयान की प्रशंसा की हैं एवं कहा है कि दोनों देशों के बीच आज भी काफी सकारात्मक सम्बन्ध है। ट्रम्प के इस बदलते व्यवहार के कारण आज पत्रकारों ने जब ट्रम्प से यह पूछा कि क्या वह मौजूदा हालात में भारत के साथ सम्बंधों का आदर करने को तैयार हैं तो उनका जवाब था कि मैं तो हमेशा हि ऐसा करता हूं एवं आगे भी करता रहुगा फिर आप सभी जानते हैं कि प्रधानमंत्री मोदी के साथ मैं हमेशा एक अच्छा मित्र भी बना रहना चाहता हूं।

- मनमोहन राजावत, शाजापुर

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 18 अंक 175

बाजार के संकेतक

वित्तीय बाजारों में बॉन्ड यील्ड में इजाफे को लेकर काफी चिंता का माहौल है। जैसा कि इस समाचार पत्र ने भी प्रकाशित किया, वाणिज्यिक बैंक तथा अन्य अंशधारकों ने रिजर्व बैंक को कई सुझाव दिए हैं ताकि बॉन्ड बाजार पर दबाव कम किया जा सके। यह सुझाव भी दिया गया है कि रिजर्व बैंक को बॉन्ड जारी करने का काम मार्च तक बढ़ा देना चाहिए बजाय कि इस सालाना बिक्री को फरवरी में बंद करने के। इससे बॉन्ड की साप्ताहिक आपूर्ति कम करने में मदद मिलेगी। अंशधारकों ने यह सुझाव भी दिया है कि राज्य सरकारों द्वारा बॉन्ड की बिक्री का तरीका बदला जाए ताकि स्प्रेड को कम किया जा सके। यह भी कहा गया है कि अत्यधिक लंबी अवधि के यानी 30-50 वर्ष की अवधि के बॉन्ड जारी करने के चलन में कमी लाने की आवश्यकता है। बैंकों ने भी इस बात को रेखांकित किया है कि बॉन्ड को साप्ताहिक रूप से जारी करना काफी बढ़ गया है।

अंशधारकों द्वारा सुझाए गए उपाय कुछ दबाव कम कर सकते हैं लेकिन यह बात बहसतलब है कि यील्ड में इजाफा क्यों हुआ और आने वाली तिमाहियों में क्या हालात रहेंगे? 10 वर्षीय सरकारी बॉन्ड पर यील्ड जून में आरबीआई की मौद्रिक नीति समिति द्वारा रीपो दर में 50 आधार अंक की कटौती के निर्णय के बाद लगभग 20 आधार अंक बढ़ गई। सैद्धांतिक रूप से, जब केंद्रीय बैंक दर में अपेक्षा से अधिक कटौती करता है, तो बॉन्ड यील्ड में नरमी आनी चाहिए। लेकिन इस मामले में बाजार सहभागियों ने पारंपरिक सोच को नहीं अपनाया। इसका एक संभावित कारण यह हो सकता है कि बाजार ने जून की नीतिगत घोषणा, उसके बाद अगस्त की घोषणा, और मुद्रास्फीति के अनुमानों को मिलाकर यह संकेत लिया कि दर कटौती चक्र अब समाप्त हो चुका है। अगस्त की नवीनतम नीति घोषणा में चालू वित्त वर्ष की चौथी तिमाही के लिए मुद्रास्फीति दर 4.4 फीसदी रहने का अनुमान जताया गया है। इसके बाद 2026–27 की पहली तिमाही में यह दर 4.9 फीसदी तक बढ़ने की संभावना है। चूंकि मौद्रिक नीति को दूरदर्शी होना चाहिए, इसलिए वर्तमान परिस्थितियों में तो आगे दरों में कटौती की कोई गुंजाइश नहीं दिखती।

वित्तीय बाजार संभावित राजकोषीय दबाव को भी ध्यान में रख रहे होंगे। वस्तु एवं सेवा कर यानी जीएसटी परिषद ने गत सप्ताह दरों के ढांचे को युक्तिसंगत बनाने का निर्णय लिया। सरकार के अनुसार इससे राजस्व पर 48,000 करोड़ रुपये तक का असर पड़ सकता है। आने वाली तिमाहियों में काफी कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि सरकार मांग को लेकर किस प्रकार प्रतिक्रिया देती है। बहरहाल दीर्घकालिक नजरिया अपनाएं तो परिषद ने औसत जीएसटी दर में कमी की है जिसका असर दीर्घकालिक राजकोषीय टिकाऊपन पर होगा। दरों को युक्तिसंगत बनाए जाने के पहले औसत दर 11.6 फीसदी थी जबकि एक सरकारी समिति द्वारा अनुशंसित राजस्व तटस्थ दर 15 से 15.5 फीसदी है।

ढांचागत रूप से कम जीएसटी दर और संग्रह केंद्र और राज्य सरकारों की राजकोषीय घाटा कम करने और उधारी कम करने की क्षमता को लगातार प्रभावित करेगा। इसके अलावा केंद्र सरकार अगले वित्त वर्ष के आरंभ से एक नए राजकोषीय ढांचे को अपनाएगी जहां वह केंद्र सरकार के कर्ज को सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के रूप में निरंतर कम करने का प्रयास करेगी। इससे केंद्र सरकार को बजट प्रबंधन में अपेक्षाकृत अधिक लचीलापन हासिल होगा। परंतु इससे बॉन्ड बाजार में अनिश्चितता भी पैदा हो सकती है।

इसके अतिरिक्त, वैश्विक परिस्थितियां भी अनुकूल नहीं हैं। विकसित अर्थव्यवस्थाओं में उच्च यील्ड भारतीय सरकारी बॉन्ड की मांग को प्रभावित करेगा। उदाहरण के लिए, विदेशी पोर्टफोलियो निवेशकों ने वर्तमान वित्त वर्ष में अब तक केवल 54.2 करोड़ डॉलर के भारतीय बॉन्ड खरीदे हैं, जबकि 2023-24में यह आंकड़ा 1.45 अरब डॉलर से अधिक था। इसलिए, मौद्रिक, राजकोषीय और बाह्य वातावरण को देखते हुए, बॉन्ड यील्ड में किसी ठोस नरमी के आसार बहुत कम है। निकट भविष्य में बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि बाजार मुद्रास्फीति को लेकर क्या अपेक्षाएं रखता है।

भारतीय स्टार्टअप के सपने कैसे हों साकार?

हमें ऐसा नीतिगत ढांचा तैयार करना चाहिए जो भारत में गैर-पारिवारिक वेंचर कैपिटल और प्राइवेट इक्विटी कंपनियों के विकास को बढ़ावा दे। स्टार्टअप की समस्याओं पर प्रकाश डाल रहे हैं अजित बालकृष्णन

अक्सर मेरे पास राज्यों या केंद्र सरकार के अधिकारियों के फोन आते हैं जो मुझे उनके द्वारा आयोजित स्टार्टअप सम्मेलनों में बोलने के लिए आमंत्रित करते हैं। मेरे लिए ऐसे सभी फोन कॉल को संभालना मुश्किल होता है। जब भी मैं ऐसे सम्मेलनों में शामिल होता हूं तो वहां सैकड़ों कॉलेज छात्र दिन भर मेरे जैसे उद्यमियों और सरकारी अधिकारियों के भाषण सुनते हैं और प्रस्तुतियां देखते हैं। इन बैठकों को ध्यान में रखते हुए मुझे आश्चर्य होता है कि आखिर क्यों और कैसे स्टार्टअप उन सामान्य कारोबारी चक्र में शामिल हो जाते हैं जिनसे हम सब गुजरे हैं: 1960 के दशक की हरित क्रांति, 1970 के दशक में सार्वजनिक उपक्रमों को उद्धारक के रूप में देखने का दौर (हिंदुस्तान मशीन टूल्स, भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स, मॉडर्न ब्रेड आदि), 1990 के दशक का मुक्त बाजार और 2000 के दशक के आरंभ में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश।

अपने अर्थशास्त्री दोस्तों की नाराजगी का खतरा मोल लेते हुए भी मैं एक सवाल करना चाहता हूं। क्या ये कारोबारी लहरें उसकी तरह की हैं जो हमने अपनी महिला मित्रों के वास्तविक फैशन की दुनिया में देखीं यानीः रेशम की साड़ी की जगह नायलॉन की साड़ी और उसके बाद नीली जींस और काली टी-शर्ट, या फिर सलवार-कमीज का कश्मीर से कन्याकुमारी तक तमाम भारतीय लड़कियों और महिलाओं की पसंद बन जाना। इन पहनावों का चलन किस प्रकार जोर पकड़ा, यह कैसे तय होता है कि इनमें से कौन-सा चलन कितने समय तक रहेगा और फिर गायब हो जाएगा? फैशन की दुनिया के चुनिंदा दोस्तों द्वारा अपनाया जाना और उसके बाद बॉलीवुड के अदाकारों और मॉडल द्वारा अपनाया जाना। यही सबसे स्पष्ट व्याख्या नजर आती है।

ऐसे में क्या हम 'कीन्सवाद', 'मुक्त बाजार', 'थैचरवाद', 'वॉशिंगटन सहमति', 'नव-उदारवाद' जैसे शब्दों को फैशन की शब्दावली के रूप में देख सकते हैं और यह मान सकते हैं कि आर्थिक नीतियों की प्रवृत्तियां भी वैसी ही ताकतों से संचालित होती हैं, जैसे फैशन ट्रेंड्स होते हैं? दूसरे शब्दों में, क्या हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि भारत में हम उन देशों के 'मॉडल' को अपनाते हैं जिन्हें हम किसी विशेष समय में प्रशंसा की दृष्टि से देखते हैं? स्टार्टअप की दुनिया में, आज के फैशन लीडर मुख्य रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका और इसमें भी विशेष रूप से सिलिकन वैली में स्थित हैं इसलिए उस फैशन राजधानी से आने वाले संदेशों को समझना जरूरी हो जाता है। जैसा कि इन दिनों आम हो गया है, मैंने यह सवाल चैटजीपीटी के समक्ष रखा और मुझे यह उत्तर मिलाः

'सिलिकन वैली का दुनिया का प्रमुख स्टार्टअप केंद्र बनना किसी एक वजह से नहीं हुआ है, बल्कि यह इतिहास, संस्कृति और संस्थागत ढांचे के दुर्लभ संयोजन का परिणाम है, जो एक-दूसरे को मजबूती प्रदान करते रहे। इसकी शुरुआत 20वीं सदी के मध्य में हुई, जब अमेरिका ने रडार, सेमीकंडक्टर और कंप्यूटिंग पर रक्षा खर्च के माध्यम से बे एरिया में निवेश किया। स्टैनफर्ड विश्वविद्यालय फ्रेडरिक टरमन के नेतृत्व में, छात्रों और शिक्षकों को अपने शोध को व्यावसायिक रूप देने के लिए प्रोत्साहित करता था। इससे ह्युलिट-पैकर्ड और फेयरचाइल्ड सेमीकंडक्टर जैसी कंपनियां अस्तित्व में आईं और शैक्षणिक संस्थानों, उद्योग और सरकार के बीच करीबी सहयोग का एक मॉडल तैयार हुआ। इसके बाद एक ऐसी संस्कृति विकसित हुई जो जोखिम को अपनाती थी और असफलता को कलंक नहीं, बल्कि सीखने का अवसर मानती थी। इस क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने वाले वेंचर कैपिटलिस्ट ने इस सोच को और मजबूत करते हुए उद्यमियों पर बार-बार भरोसा किया और स्टॉक विकल्पों के जरिये कर्मचारियों को दीर्घकालिक सफलता से जोड़ दिया। उत्साह और विचारों की सघनता भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण थी। एक छोटे से क्षेत्र में इंजीनियर और उद्यमी स्वतंत्र रूप से ज्ञान का आदान-प्रदान करते थे, जबकि स्टैनफर्ड और बर्कले लगातार नई प्रतिभाएं तैयार करते रहे। प्रवासी लोगों ने महत्त्वाकांक्षा और विविधता जोड़ी, और अमेरिकी बाजार ने उन्हें विस्तार का मंच दिया। आखिरकार सफल संस्थापक मेंटर और निवेशक के रूप में फिर से निवेश करते हैं। इससे एक सतत चक्र बनता है, जो आज भी सिलिकन वैली की वैश्विक नवाचार में अग्रणी भूमिका को बनाए रखे हुए है।'

जैसा कि आप चैटजीपीटी की उपरोक्त टिप्पणी से देख सकते हैं, टेक स्टार्टअप के क्षेत्र में सिलिकन वैली के दबदबे में ढेर सारे वेंचर कैपिटल और रक्षा खरीद का योगदान है जिन्होंने स्टार्टअप को शुरुआत में सक्रिय और सकारात्मक माहौल मुहैया करया। अमेरिका के कुल स्टार्टअप में 20 फीसदी सिलिकन वैली में हैं। इसके अन्य केंद्र हैं- न्यूयॉर्क (करीब 15 फीसदी), बोस्टन (10 फीसदी), लॉस एंजिलिस (8 फीसदी) सिएटल (6 फीसदी) और ऑस्टिन (5 फीसदी)।

बहरहाल, भारत के लिए सही नीतिगत उपाय तैयार करने के क्रम में हमें शायद वे सबक अपनाने की आवश्यकता है जो हमें यूनिफाइड पेमेंट्स इंटरफेस (यूपीआई), आधार और किफायती मोबाइल फोन और इंटरनेट के मिश्रण से मिली हैं। इनके चलते देश में 50 करोड़ से अधिक ग्राहकों, 6.5 करोड़ दुकानदारों और इस व्यवस्था से जुड़े 675 बैंकों का एक नेटवर्क तैयार हुआ है। देश के कुल डिजिटल भुगतान में 85 फीसदी यूपीआई से होते हैं और दुनिया भर में होने वाले रियल टाइम डिजिटल लेनदेन में उसका योगदान करीब आधे का है।

इसके बाद हमें अपने रक्षा विभागों को प्रोत्साहित करना होगा कि वे भारतीय स्टार्टअप से खरीदारी करें। अभी हाल ही में उन्होंने घरेलू खरीद को बढ़ावा दिया है लेकिन यह ज्यादातर उन वस्तुओं के लिए है जो किसी विदेशी कंपनी से लाइसेंस लेकर स्थानीय स्तर पर निर्मित की जा रही हैं। अंतिम और सबसे महत्त्वपूर्ण कदम यह है कि भारत को अपने शुरुआती चरण के निवेश और वेंचर कैपिटल व्यवस्था को मजबूत करना होगा। हमारे पास शुरुआती चरण में निवेश करने वाली, तकनीकी समझ रखने वाली वेंचर कैपिटल कंपनियां बहुत कम हैं। जो कुछ मौजूद हैं, वे या तो विदेशी (मुख्यतः अमेरिकी) कंपनियों की सहायक इकाइयां हैं या सरकारी संस्थाएं, जिनके कर्मचारी आमतौर पर तकनीकी जोखिम उठाने की संस्कृति से परिचित नहीं होते। ये संस्थाएं अक्सर स्टार्टअप उद्यमियों से एक दिल तोड़ने वाला सवाल पूछती हैं: 'और किसने ऐसा करने में सफलता पाई है?'

देश के सकल घरेलू उत्पाद में पारिवारिक कारोबारों की हिस्सेदारी 80 फीसदी है। अमेरिका में इनकी हिस्सेदारी 55 फीसदी है। यह भी स्टार्टअप के लिए एक चुनौती है। इन कंपनियों से निवेश लेने का मतलब होता है ऐसे निवेशकों से पेश आना जो तकनीकी समझ नहीं रखते, और यह खतरा भी बना रहता है कि स्टार्टअप को उस पारिवारिक व्यवसाय में समाहित कर लिया जाएगा। हमें पूरी ताकत से काम करना चाहिए और ऐसा नीतिगत ढांचा तैयार करना चाहिए जो भारत में गैर-पारिवारिक वेंचर कैपिटल और प्राइवेट इक्विटी कंपनियों के विकास को बढ़ावा दे। यही वह रास्ता है जिससे भारतीय स्टार्टअप के सपने साकार हो सकते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में खरा सोना साबित हो रहा फसलों का अवशेष

भारत ने हाल के वर्षों में ग्रामीण क्षेत्र से जुड़े संकट, वायु प्रदूषण और स्वच्छ ऊर्जा की जरूरतों जैसी चुनौतियों को हल करने के लिए कई महत्त्वपूर्ण कदम उठाए हैं। ऐसी ही एक नीति है कोयले से चलने वाले बिजली संयंत्रों में कोयले के साथ बायोमास पेलेट (जैविक अवशेष) भी जलाए यानी इस्तेमाल किए जाएं। यह एक ऐसा उपाय है जिससे उम्मीदें बढ़ रही हैं और अगर इसे सही तरीके से लागू किया जाए और इसे समर्थन दिया जाए तो बड़े पैमाने पर अपनाया जा सकता है।

विद्युत मंत्रालय के तहत, समर्थ अभियान (ताप विद्युत संयंत्रों में कृषि अवशेषों के उपयोग पर सतत कृषि अभियान) के अंतर्गत सभी कोयला आधारित बिजली संयंत्रों को अपने यहां 5 फीसदी कोयले की जगह बायोमास पेलेट का इस्तेमाल करना जरूरी है और इस साल इसे बढ़ाकर 7 फीसदी किया जाएगा। यह लक्ष्य फिलहाल भले ही छोटे दिख रहे हों, लेकिन इन्हें व्यापक और व्यवस्थित तरीके से अपनाया जाए तो इनका आर्थिक और पर्यावरणीय महत्त्व बहुत अधिक है।

सरकार के अनुमानों के मुताबिक, भारत में हर साल 50 करोड़ टन से अधिक कृषि अवशेष बेकार पड़े होते हैं। इसका कुछ हिस्सा चारे, जलावन और खाद जैसे कामों में इस्तेमाल होता है, लेकिन करीब 14 करोड़ टन अतिरिक्त कचरा बच जाता है। इस बचे हुए हिस्से को या तो खेतों में जला दिया जाता है या फेंक दिया जाता है, जिससे वायु प्रदूषण और ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन बढ़ता है। पंजाब और हरियाणा जैसे राज्यों में पराली जलाने से सर्दियों के मौसम में वायु प्रदूषण 40 फीसदी तक बढ़ जाता है, खासतौर पर गंगा के मैदानी इलाकों में।

इन जैविक अवशेष (बायोमास) को पेलेट यानी ईंधन के ठोस स्वरूप में बदलना एक अच्छा विकल्प है। इन पेलेट को विभिन्न कृषि अवशेषों (जैसे धान की पराली, कपास के डंठल, सरसों की भूसी या गन्ने की खोई) से बनाया जा सकता है और ताप विद्युत संयंत्रों में आंशिक ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। शुरुआती प्रायोगिक परीक्षणों से पता चला है कि बायोमास के साथ जलाने से हर यूनिट बिजली उत्पादन पर कार्बन डाईऑक्साइड उत्सर्जन में 15 से 20 फीसदी तक की कमी आ सकती है, जो इस्तेमाल किए गए मिश्रण के अनुपात और ईंधन के स्रोत पर भी निर्भर करता है।

निश्चित रूप से ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर भी इसका अच्छा-खासा असर पड़ सकता है। अध्ययनों से पता चलता है कि किसान अपनी फसल के अवशेष को पेलेट निर्माताओं को बेचकर प्रति एकड़ 3,000 रुपये से 6,000 रुपये की अतिरिक्त कमाई कर सकते हैं। दो एकड़ खेती करने वाले किसी किसान के लिए यह अतिरिक्त आय 6,000 रुपये से 12,000 रुपये तक हो सकती है। यह उन क्षेत्रों के लिए खासकर महत्त्वपूर्ण है जहां खेती में ज्यादा लागत लगती है या फसलों की कीमतों में अनिश्चितता रहती है। कुल मिलाकर, अगर भारत के बचे हुए जैविक अवशेषों का एक-तिहाई भी इस्तेमाल कर लिया जाए तो इससे एक से दो करोड़ किसान परिवारों को मदद मिल सकती है और हर साल ग्रामीण क्षेत्रों में 6,000 से 24,000 करोड़ रुपये की नई आमदनी के मौके तैयार हो सकते हैं।

जयंत सिन्हा

रोजगार के मौके तैयार करना इसका एक अहम पहलू है। उत्तरी और मध्य भारत में पेलेट बनाने वाली इकाइयों का एक नेटवर्क उभर रहा है। ये इकाइयां अक्सर छोटे उद्यमियों द्वारा चलाई जाती हैं, इसमें स्थानीय लोगों को रोजगार मिलता है और इससे आपूर्ति श्रृंखला को भी बढ़ावा मिलता है जिसमें परिवहन, इन अवशेषों को इकट्ठा करना और इसके लिए मशीनरी सेवाएं देना भी शामिल है। राष्ट्रीय जैव ऊर्जा अभियान के तहत यह अनुमान लगाया गया है कि बायोमास को बड़े पैमाने पर जलाए जाने की प्रक्रिया लागू करने पर सीधे तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों और कस्बाई इलाकों में 50,000 नौकरियों के मौके तैयार होंगे।

अंतरराष्ट्रीय अनुभव भी इस दृष्टिकोण के महत्त्व की पुष्टि करते हैं। यूरोप में, स्वीडन और ब्रिटेन जैसे देशों ने बिजली बनाने के लिए कोयले के साथ बायोमास को मिलाकर जलाने को एक बदलाव की रणनीति के रूप में अपनाया है। ब्रिटेन का ड्रैक्स पावर स्टेशन कभी पूरी तरह से कोयले से चलता था, लेकिन अब उसमें 80 फीसदी से ज्यादा बिजली स्थानीय बायोमास से तैयार होती है। जापान और दक्षिण कोरिया की राष्ट्रीय ऊर्जा योजनाओं में मौजूदा कोयला संयंत्रों में 20 फीसदी तक बायोमास के इस्तेमाल का लक्ष्य है, जिसे लंबी अवधि के खरीद समझौतों और विशेष लॉजिस्टिक्स बुनियादी ढांचे का समर्थन मिला है।

भारत के करीब, इंडोनेशिया ने 52 कोयला संयंत्रों में बायोमास को साथ जलाने का फैसला किया है, जिसका लक्ष्य इस साल तक 10 फीसदी बायोमास का मिश्रण करना है। इन प्रयासों को ऐसे समाधानों के रूप में देखा जाता है जो कोयले के संयंत्रों को तुरंत और बड़े पैमाने पर बंद किए बिना ही उत्सर्जन कम कर सकते हैं। यह दृष्टिकोण वास्तव में भारत की बिजली की वास्तविक स्थिति के अनुरूप है।

हालांकि इसे पूरी तरह से अपनाया नहीं गया है। कुछ सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों ने इस दिशा में प्रगति की है, लेकिन अन्य इकाइयां लागत, तकनीकी अनुकूलता और ईंधन आपूर्ति श्रृंखलाओं से जुड़ी चिंताओं के कारण पीछे हैं। कुछ निजी उत्पादक कंपनियां भी हिचकिचा रही हैं क्योंकि उन्हें पेलेट की सीमित उपलब्धता या अनिश्चित नियामकीय नियमों की चिंता है। ये बाधाएं दूर की जा सकती हैं, लेकिन इन पर व्यवस्थित तरीके से ध्यान देने की जरूरत है।

कुछ नीतिगत हस्तक्षेपों से इसे बेहतर ढंग से लागू करने में मदद मिल सकती है। सबसे पहली बात यह है कि बिजली संयंत्रों को बायोमास खरीद नियमों में ज्यादा स्पष्टता और स्थिरता से फायदा होगा। पेलेट के मानकों को तय करना, पारदर्शी मूल्य बेंचमार्क बनाना और विश्वसनीय आपूर्ति अनुबंध सुनिश्चित करने से उत्पादकों और उपयोगकर्ताओं दोनों के बीच गतिरोध कम होगा और विश्वास बढ़ेगा। साथ ही, बिजली संयंत्रों में समूचे बिजली उत्पादन के 3-5 फीसदी के लिए कोयले की जगह बायोमास पेलेट का इस्तेमाल अनिवार्य किया जाना चाहिए।

दूसरी अहम बात है खासतौर पर छोटे पेलेट विनिर्माणकर्ताओं को क्षमता निर्माण के लिए सहयोग मिलना जो आपूर्ति वृद्धि को तेज कर सकता है। इनमें ऋण की आसान उपलब्धता, गुणवत्ता मानकों को पूरा करने में तकनीकी सहायता और पेलेट को ग्रामीण क्षेत्रों से बिजली केंद्र तक ले जाने के लिए लॉजिस्टिक्स सहायता शामिल हैं।

तीसरा, इसके लिए बेहतर निगरानी और रिपोर्टिंग प्रणाली के तरीके अपनाना बेहद जरूरी हैं। संयंत्र के स्तर पर कोयले के साथ जैविक अवशेष जलाने के आंकड़े सार्वजनिक करना, उत्सर्जन में कमी का हिसाब रखना और सफल मामलों की जानकारी साझा करने से इस पहल को बढ़ावा मिलेगा और लोगों का भरोसा भी बढ़ेगा। आखिर में भारत, कोयले के साथ बायोमास को जलाने के क्रेडिट को कार्बन बाजार या अक्षय ऊर्जा प्रमाणपत्रों के साथ जोड़ने पर विचार कर सकता है। इससे नियमों का पालन करने और बेहतर प्रदर्शन करने वालों को अतिरिक्त वित्तीय प्रोत्साहन मिलेगा।

भारत को वर्ष 2070 तक अपना विशुद्ध शून्य उत्सर्जन लक्ष्य हासिल करने और राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान पूरा करने के लिए व्यावहारिक, जमीनी स्तर की रणनीतियां जरूर अपनानी होंगी। बायोमास को साथ जलाना कोई जादुई उपाय नहीं है, लेकिन यह एक ऐसा समाधान है जो कम लागत पर बड़े फायदे दे सकता है। नए अक्षय ऊर्जा स्रोतों या बड़े ग्रिड-स्तरीय भंडारण तंत्र के मुकाबले इसमें कम समय और पूंजी लगती है।

यह विकास का एक ऐसा मार्ग है जो सभी को साथ लेकर और संतुलित तरीके से चलता है। यह किसानों, गांव के मजदूरों, बिजली कंपनियों और पर्यावरण संरक्षण का पैरोकार करने वालों के हितों को एक साथ जोड़ता है, जो वास्तव में सार्वजनिक नीति में अक्सर मुश्किल होता है। भारत ने समर्थ मिशन के जरिये पहले ही इस दिशा में कदम उठा लिए हैं। अगर इसे बेहतर ढंग से लागू किया जाए और सही प्रोत्साहन दिए जाएं तो यह ग्रामीण भारत में जैविक कचरे, बिजली और समृद्धि से जुड़ी हमारी सोच को पूरी तरह बदल सकता है।

(लेखक केंद्रीय मंत्री और लोक सभा सदस्य रह चुके हैं। ये उनके निजी विचार हैं)

आपका पक्ष

सेमीकंडक्टर निर्माण से खुलेंगे समृद्धि के द्वार

सेमीकंडक्टर चिप के देश में ही निर्माण से भारत की इस क्षेत्र में आयात पर अत्यधिक निर्भरता घटेगी। इससे फिलहाल वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला पर निर्भरता का जोखिम बना रहता है। स्वदेशी निर्माण आत्मनिर्भर भारत की दिशा को मजबूती प्रदान करेगा। हाल ही में नई दिल्ली में सेमीकॉन इंडिया 2025 सम्मेलन आयोजित किया गया था। इस कार्यक्रम में विभिन्न कंपनियों ने चिप निर्माण से संबंधित प्रदर्शनी भी लगाई थी। इसका आयोजन देश में चिप निर्माण को बढ़ावा देना था। देश में चिप निर्माण से इलेक्ट्रॉनिक्स, ऑटोमोबाइल, एआई, रोबोटिक्स और 5जी जैसे क्षेत्रों को नई गति मिलेगी। घरेलू उद्योगों और स्टार्टअप को कच्चे माल व संसाधन सस्ते व आसानी से उपलब्ध होंगे, जिससे नवाचार और शोध को बढ़ावा मिलेगा। उत्पादन लागत कम होने से भारत वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धी बनेगा और विदेशी निवेश आकर्षित होगा। साथ ही लाखों रोजगार अवसर उत्पन्न होंगे और डिजिटल बुनियादी ढांचे का विस्तार होगा। अतः यह पहल भारत को तकनीकी महाशक्ति बनाने, वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला चेन में मजबूत स्थिति हासिल करने और भविष्य की अर्थव्यवस्था में अग्रणी भूमिका निभाने में सहायक सिद्ध होगी।

अमृतलाल मारू, इंदौर

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पिछले हफ्ते नई दिल्ली स्थित यशोभूमि में आयोजित सेमीकॉन इंडिया 2025 का अवलोकन किया था

अनमोल है मानव जीवन, सकारात्मक सोच रखें

विश्व आत्महत्या रोकथाम दिवस हर वर्ष 10 सितंबर को मनाया जाता है। इसके तहत दुनिया के कई देश लोगों को जागरूक करने के लिए कार्यक्रम आयोजित करते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन और इंटरनैशनल एसोसिएशन फॉर सुसाइड प्रिवेंशन ने वर्ष 2003 में एक संदेश दिया था कि, आत्महत्याओं को रोका जा सकता है। आधुनिकता की भागदौड़, तनाव, आत्मविश्वास की कमी आज लोगों को कमजोर कर रही है। खुदकुशी के मामलों मे नौजवानों का आंकड़ा अधिक है। किसी भी परेशानी या समस्या का हल मौत को गले लगाना नहीं है। हर समस्या का कोई न कोई हल जरूर निकलता है। किसी भी समस्या से निपटने के लिए इंसान को हौसले से काम लेना चाहिए। इंसान को हमेशा सकरात्मक सोच रखनी चाहिए। सकरात्मक सोच हमेशा इंसान को आगे बढ़ने में मदद करती है।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में लोगों को मिले मुआवजा

देश के उत्तरी भाग में भारी बारिश, बाढ़ और भूस्खलन से जीवन अस्त-व्यस्त हो गया है। जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, पंजाब, हरियाणा तथा राजस्थान में बाढ़ ने भारी तबाही मचाई है। इन राज्यों में लोगों को काफी नुकसान हुआ है। बाढ़ के कारण घर, खेत-खलिहान सब पानी में डूब गए हैं। पंजाब में फसलों को काफी नुकसान पहुंचा है। केंद्र और राज्य सरकार को बाढ़ प्रभावित लोगों को उचित मुआवजा देना चाहिए जिससे उनके जख्म पर कुछ मरहम पट्टी लग सके। इसके अलावा प्रभावितों को कुछ दिन रहने तथा खाने की भी व्यवस्था की जानी चाहिए।

मोहित कुमार, नई दिल्ली

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो – पीटीआई

रूस के हमले से यूक्रेन के एक केंद्रीय मंत्री का घर ध्वस्त हो गया। रूस ने मंगलवार को पूर्वी यूक्रेन के एक गांव में पेंशन लेने के लिए कतार में लगे बुजुर्गों पर रूसी ग्लाइड बम से हमला कर दिया जिससे 21 लोगों की मौत हो गई तथा दो दर्जन लोग घायल हो गए। यूक्रेन के राष्ट्रपति वोलोदीमिर जेलेंस्की ने कहा कि निःसंदेह यह क्रूरता है।

विचार

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली । बुधवार, 10 सितंबर 2025

जीत संग ज़िम्मेदारी

उपराष्ट्रपति चुनाव में NDA के उम्मीदवार सीपी राधाकृष्णन की जीत अप्रत्याशित नहीं है। संख्या बल शुरू से उनके साथ था। I.N.D.I.A. ब्लॉक सुप्रीम कोर्ट के रिटायर्ड जज बी. सुदर्शन रेड्डी को चुनाव मैदान में उतारकर एक मेसेज देना चाहता था और इसमें वह काफी हद तक सफल रहा। वैसे भी उपराष्ट्रपति चुनाव को केवल वोटों के गणित और सियासी समीकरणों से नहीं तौला जा सकता। असली चुनौती यहां से शुरू होती है।

सीपी राधाकृष्णन नए VP

अतीत से बढ़कर । इस चुनाव की नौबत इसलिए आई क्योंकि सत्र के बीच में उपराष्ट्रपति जगदीप धनखड़ ने पद से इस्तीफा दे दिया। देश में कभी ऐसी स्थिति नहीं आई थी कि संसद का सत्र चल रहा हो और उपराष्ट्रपति अचानक पद छोड़ दें। उनका जाना कई सवाल खड़े कर गया। सीपी राधाकृष्णन को इस अतीत से आगे बढ़कर जिम्मेदारी निभानी है।

संतुलन की जरूरत । राधाकृष्णन ऐसे वक्त में यह पद संभालने जा रहे हैं, जब सरकार और विपक्ष के बीच असहमति की दीवार बहुत ऊंची हो चुकी है। इसका असर इस इलेक्शन में भी दिखा। दोनों तरफ तल्खियां साफ नजर आईं और आरोप-प्रत्यारोप वैसे ही लगे, जैसे कि दूसरे चुनावों में लगते हैं। लेकिन, यह अब बीती बात हो गई है। कौन साथ रहा और कौन खिलाफ, यह भूलकर नए उपराष्ट्रपति से उम्मीद होगी संतुलन और निरपेक्षता की। उन्हें दोनों पक्षों को साथ लेकर चलना होगा।

संसदीय परंपराओं के अभिभावक । सीपी राधाकृष्णन के सामने एक और बड़ी चुनौती है - खुद को अराजनीतिक दिखाना। देश में उपराष्ट्रपति का पद राजनीतिक नहीं होता, लेकिन हाल-फिलहाल में इससे कई राजनीतिक विवाद जुड़ चुके हैं। धनखड़ के साथ विपक्ष की यह शिकायत आम रही कि वह उनको मौके नहीं देते। ऐसे में लोकतांत्रिक मूल्यों और संसदीय परंपराओं की कसौटी पर सीपी राधाकृष्णन को भी परखा जाएगा।

सदन की गरिमा । उपराष्ट्रपति राज्यसभा के पदेन सभापति होते हैं और इस नाते सीपी राधाकृष्णन के सामने यह कठिन कार्य है कि वह कैसे उच्च सदन को उसकी गरिमा वापस दिलाते हैं। दुर्भाग्य से राज्यसभा से अब सार्थक बहसों से अधिक हंगामे और शोर-शराबे की खबरें आती हैं। इस मॉनसून सत्र में ही राज्यसभा की प्रॉडक्टिविटी केवल 38.8% रही। ज्यादातर वक्त सदन बाधित रहा और कई अहम मुद्दों पर बहस अधूरी रह गई। उच्च सदन को ज्यादा विचारवान माना जाता रहा है। उसकी यह खोई छवि कैसे लौटती है, नए उपराष्ट्रति पर निर्भर करता है।

इन दिनों

मैक्रों की मुश्किल

मृत्युंजय राय

फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों फिर मुश्किल में हैं। प्रधानमंत्री फ्रास्वां बायरू और उनकी कैबिनेट को नैशनल असेंबली यानी लोकसभा में विश्वासमत हासिल नहीं हुआ। इसलिए उन्हें इस्तीफा देना पड़ा। बायरू फ्रांस के बढ़ते कर्ज को कम करने के उपायों पर काम कर रहे थे। उन्होंने पिछले महीने अचानक विश्वासमत प्रस्ताव लाने की घोषणा की थी, जिसमें वह इस हफ्ते हार गए। यूं तो फ्रांस में राष्ट्रपति शीर्ष राजनीतिक पद है, लेकिन प्रधानमंत्री और कैबिनेट पर घरेलू नीतियां बनाने और बजट का दायित्व होता है। खैर, प्रधानमंत्री के इस्तीफे के बाद अब विरोधी मैक्रों से भी पद छोड़ने की मांग कर रहे हैं। मगर मैक्रों जल्द से जल्द नए प्रधानमंत्री की नियुक्ति करना चाहते हैं। उन्होंने कुछ दिनों में नया पीएम चुनने का वादा भी किया है। लेकिन क्या इससे फ्रांस में राजनीतिक स्थिरता लौटेगी?

यह सवाल इसलिए पूछा जा रहा है क्योंकि पिछले साल मैक्रों के अचानक संसदीय चुनाव कराने के बाद फ्रांस में उनके चुने हुए दो प्रधानमंत्रियों और कैबिनेट को इस्तीफा देना पड़ा है। इस बार उन्हें ऐसा लीडर चुनना होगा, जिसे 577 सांसदों वाले सदन में बहुमत मिल पाए ताकि वह बजट पास करा सके। यह काम आसान नहीं है। असल में, लोकसभा में तीन राजनीतिक समूहों के बीच खींचतान चल रही है। एक तरफ लेफ्ट पार्टियां हैं, दूसरी ओर सेंटर-राइट हैं या गठबंधन तो तीसरे ग्रुप में दक्षिणपंथी पार्टियां। मैक्रों ने पिछले दो बार में सेंटर-राइट लीडर्स को पीएम बनाया। सोच यह थी कि वे रिटायरमेंट की कानूनी उम्र बढ़ाने जैसे उनके रिफॉर्म को बचाए रख सकेंगे। रक्षा मंत्री सेबेस्टियन लेकोर्नू ऐसे लीडर हैं। नए पीएम के रूप में उन्हें लेकर अटकलें लग रही हैं। वामपंथी सोच वाले वित्त मंत्री एरिक लोम्बार्ड को भी पीएम पद का दावेदार बताया जा रहा है। समाजवादियों के साथ उनके अच्छे रिश्ते हैं। मगर कुछ दलों का कहना है कि बायरू की जगह किसी और को लाने भर से बात नहीं बनेगी। वे जल्द से जल्द संसदीय चुनाव कराने की मांग कर रहे हैं। मगर मैक्रों इसका जोखिम नहीं ले सकते। ओपिनियन पोल्स के मुताबिक, अभी चुनाव हुए तो मैक्रों का centrist अलायंस हार जाएगा। इसलिए वह एक और पीएम की नियुक्ति करेंगे, लेकिन क्या इससे फ्रांस में राजनीतिक अस्थिरता का दौर खत्म हो पाएगा?

एकदा

बिना पैर का पायलट

ब्रिटिश रॉयल एयरफोर्स के पायलट के दोनों पैर द्वितीय विश्वयुद्ध में कट गए थे। इलाज के बाद जब उसे प्रशिक्षण दिया गया, तो उसने कमांडर से कहा, 'मैं अब भी विमान उड़ा सकता हूं।' 'ठीक है, तुम्हें विश्वास है कि तुम विमान उड़ा सकते हो, लेकिन अफसोस है कि वायु सेना के नियम इसकी इजाजत नहीं देते', कमांडर ने अपनी मजबूरी बताई। पायलट बोला, 'पायलट बनने के लिए एयरफोर्स में जो परीक्षाएं निर्धारित हैं, मेरी उससे भी अधिक कठिन परीक्षाएं ली जाएं। अगर मैं सफल हो जाता हूं, तो फिर से सेवा का अवसर दीजिएगा।' वह हर परीक्षा में सफल हो गया।

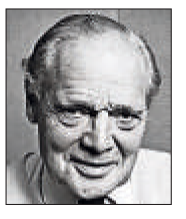

उसने युद्ध में जर्मनी के 151 विमान मार गिराए। वह तीन बार दुश्मनों की जेल से निकलकर भागने में सफल हुआ था। उसकी पत्नी ने एक दिन उससे कहा, 'अब आपको आराम करना चाहिए।' उसका उत्तर था, 'नहीं, वायु सेना का जवान होने के नाते मैं खाली नहीं बैठ सकता। देश के लिए समर्पण मेरा लक्ष्य है।' आखिरकार जब देश में युद्ध का विजय दिवस मनाया गया तो विमान में बैठकर उसने परेड का नेतृत्व किया। समूचा लंदन उसके सम्मान के लिए उमड़ पड़ा। उस बिना पैर वाले विमान चालक का नाम था, Douglas Bader। रॉयल एयरफोर्स से 1969 में रिटायर होने के बाद उन्होंने अपना सारा जीवन विकलांगों की सेवा में लगा दिया। आज भी डगलस बेडर फाउंडेशन यह काम कर रहा है।

संकलन : दीनदयाल मुरारका

नेपाली युवाओं के स्वतःस्फूर्त आंदोलन ने पीएम ओली का इस्तीफा तो ले लिया, लेकिन आगे क्या

नेपाल पर मंडरा रहा राजतंत्र का राहु

चंद्रभूषण

पिछले 45 साल नेपाल में बड़े लोकतांत्रिक आंदोलनों को समर्पित रहे हैं, लेकिन आंदोलनकारियों पर पुलिस की गोलीबारी से हताहत लोगों की इतनी बड़ी संख्या पहले वहां कभी नहीं देखी गई। सोमवार 8 सितंबर के घटनाक्रम में 19 लोगों की जान गई। यह हाल तब है, जब राजतंत्र की औपचारिक विदाई नेपाल में 17 साल पहले हो चुकी है और लोकतांत्रिक गणराज्य बहुत सारे आम चुनावों के क्रम में अपनी जड़ें भी जमा चुका है। हालांकि इसके स्थायित्व को लेकर बहुतेरे सवाल हैं और राजतंत्र की वापसी के मुद्दे पर एक गंभीर आंदोलन अभी छह महीने पहले ही हुआ है।

आंदोलन का ट्रिगर पॉइंट । अभी के आंदोलन का ट्रिगर पॉइंट बनी नेपाल में कार्यरत 26 सोशल मीडिया साइटों पर लगाई गई सरकारी रोक। ओली सरकार एक अर्से से इन साइटों के कर्ताधर्ताओं से कहती आ रही थी कि वे नेपाल में अपना रजिस्ट्रेशन कराएं। इस आग्रह का कमजोर पहलू यह बिंदु रहा है कि उन्हें किसी आपत्तिजनक पोस्ट पर सरकार द्वारा की गई शिकायत का संज्ञान लेते हुए तत्काल उसे हटा देना होगा। चार-पांच साल पहले जब भारत में ऐसा विवाद हुआ था तो इन कंपनियों की तरफ से कहा गया था कि किसी पोस्ट का सही या गलत होना अगर वे सरकार की मर्जी से तय करने लगें, फिर तो उनके होने का ही कोई मतलब नहीं बचेगा।

नेताओं की तिकड़ी । 2008 में गणराज्य की स्थापना और 2017 में संविधान लागू होने के बाद से यह तय हो गया है कि नेपाल में केंद्र की सरकार कुल तीन में से एक राजनीतिक दल और उसके एक ही नेता को धुरी बनाकर चल सकती है। NCP-UML के केपी शर्मा ओली, नेपाली कांग्रेस के शेरबहादुर देउबा और NCP (माओइस्ट) के पुष्प कुमार दाहाल 'प्रचंड'। संवैधानिक बाध्यता के तहत आम चुनाव पांच साल बाद ही हो सकते हैं, लिहाजा एक सरकार गिर जाए तो नए चुनाव में जाने के बजाय जोड़-तोड़ करके दूसरी सरकार बनाना लाजिमी हो जाता है। नतीजा यह कि सत्तापक्ष और विपक्ष सिर्फ एक रवायत बनकर रह गए हैं और इसके मजे नौकरशाही ले रही है।

मूल मसला भ्रष्टाचार । इस आंदोलन में शामिल छात्रों का कहना था कि सोशल मीडिया पर रोक तो सिर्फ एक तात्कालिक मसला है। असल में वे भ्रष्टाचार और तानाशाही के खिलाफ आंदोलन करने आए हैं। इसके लिए सभी राजनीतिक दलों की छात्र इकाइयों से आंदोलन में शामिल न होने की अपील उन्होंने पहले ही कर दी थी। लेकिन इसका कमजोर पहलू यह रहा कि राजनीतिक मिजाज के छात्र संगठनों में पिछले आंदोलनों का जो तजुर्बा और देर तक टिके रहने का जो धैर्य होता है, इस आंदोलन में उसका अभाव था। सोमवार को स्कूल-कॉलेज और तमाम कोचिंग सेंटर खुलते ही सारे छात्र कैंपसों से बाहर निकल आए और काठमांडू में सारे बैरियर तहस-नहस करके वे सीधे संसद भवन में ही जा घुसे।

सरकार की संवादहीनता । यह स्पष्ट तौर पर ओली सरकार की नाकामी थी। सुरक्षा बलों को उसने इस लायक ही नहीं छोड़ा कि देश की कार्यकारी-विधिक धुरी का तो क्या, अपना खुद का भी बचाव वे कर सकें। यही हाल नवगठित राज्यों की राजधानियों और छोटे शहरों का भी हुआ। हालांकि हताहतों की संख्या वहां उतनी ज्यादा नहीं दिख रही है, जितनी हो सकती थी। सिर्फ एक हफ्ते की नोटिस पर सोशल मीडिया ठप कर देना और लोगों को ऐसा कोई दिलासा भी न देना कि जल्द ही सब ठीक हो जाएगा- तीन करोड़ आबादी वाले इस पड़ोसी मुल्क में नेतृत्व की ऐसी संवादहीनता कल्पनातीत है।

ओली का अड़ियल रुख । पीछे जाकर देखने पर ऐसा लगता है कि बस एक ही नेता ऐसा कर सकता है, और उसका नाम है खड्ग प्रसाद शर्मा ओली। अभी तीन साल पहले की बात है, उनके एक गठबंधन सहयोगी के समर्थन वापस ले लेने से उनकी सरकार अल्पमत में आ गई थी। फिर भी वे सरकार चलाते रहे क्योंकि राष्ट्रपति उनकी अपनी पार्टी की ही थीं। डर था कि कहीं अदालत के स्पष्ट आदेश के बाद भी ओली गद्दी छोड़ने से मना न कर दें, लेकिन अंततः हटने के लिए राजी हो गए। ऐसा ही उन्होंने भारत और चीन से नेपाल के रिश्तों के मामले में भी किया था। कुछ दिन ऐसे दिखाया जैसे भारत से सारे नाते खत्म करके चीन के हो जाएंगे। फिर चीन की ओर से नेपाली कम्युनिस्टों को आपसी रिश्ते ठीक रखने की सलाह आई तो इसे बाहरी हस्तक्षेप बताकर भारत से घनिष्ठता दिखाने लगे।

इस्तीफे की मजबूरी । सोशल मीडिया पर लगी रोक हटाने की घोषणा ओली सरकार ने गोलीबारी के अगले ही दिन कर दी, लेकिन इतनी मौतों के बाद मामला आगे बढ़कर प्रधानमंत्री के इस्तीफे पर आ गया था, जो उन्हें देना भी पड़ा। ओली के पास खेलने की कोई जगह नहीं थी क्योंकि नेपाली कांग्रेस के समर्थन से चल रही उनकी सरकार के प्राण यूं भी उधारी के थे। असल में, सवाल अभी किसी नेता-पार्टी से ज्यादा नेपाली गणराज्य पर है, जिस पर राजतंत्र का राहु मंडरा रहा है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

रुक गई आबादी

देश की जनसंख्या अब स्थिर होने की ओर है। वजह है प्रजनन दर (TFR) का गिरना। पिछले हफ्ते इसी पर आई सैंपल रजिस्ट्रेशन सिस्टम की 2023 की रिपोर्ट बताती है कि ग्रामीण भारत में सबसे अधिक गिरावट दर्ज की गई है। वहीं मृत्यु दर अभी भी सामान्य से ऊपर है। क्या है यह पूरा मामला, क्यों इसे एक मुसीबत की तरह देखा जा रहा है, आइए समझते हैं :

क्या है प्रजनन दर

- यह जनसंख्या बढ़ने या घटने का आधार है
- इसमें प्रति महिला औसत बच्चों की गणना होती है
- 15-49 साल की महिलाओं के डेटा से गणना होती है
- कुल योग को महिला संख्या से भाग करके औसत निकाला जाता है

2.1 प्रजनन दर जनसंख्या स्थिर रखती है

गांव की दर

2.1 बच्चे प्रति महिला है अब ग्रामीण भारत में प्रजनन दर

2.2 बच्चे प्रति महिला थी 2020-22 में

ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या स्थिर होने की ओर

शहरों की दर

2023 में **1.5** बच्चे प्रति महिला का औसत था

2020-22 **1.6** बच्चे प्रति महिला का औसत था

यह स्थिरता स्तर 2.1 से काफी नीचे है

शहरी क्षेत्रों में जनसंख्या घटने की ओर

मृत्यु दर

भारत में अशोधित मृत्यु दर (Crude death rate यानी CDR)

वर्ष	मृत्यु दर
2023	6.4
2022	6.8
2019	6.0

प्रति हजार

ग्रामीण	शहरी
2023	2023
6.8	5.9

सबसे अधिक प्रभावित होने वाला आयु समूह- 5 से 39 वर्ष

गुणा-गणित

Total Fertility Rate (TFR) — *Crude birth Rate (CBR)*

	ग्रामीण	शहरी	
TFR	1.9	2.1	1.5
CBR	6.4	6.8	5.9
	जनसंख्या वृद्धि धीमी	स्थिरता की ओर	घट रही जनसंख्या

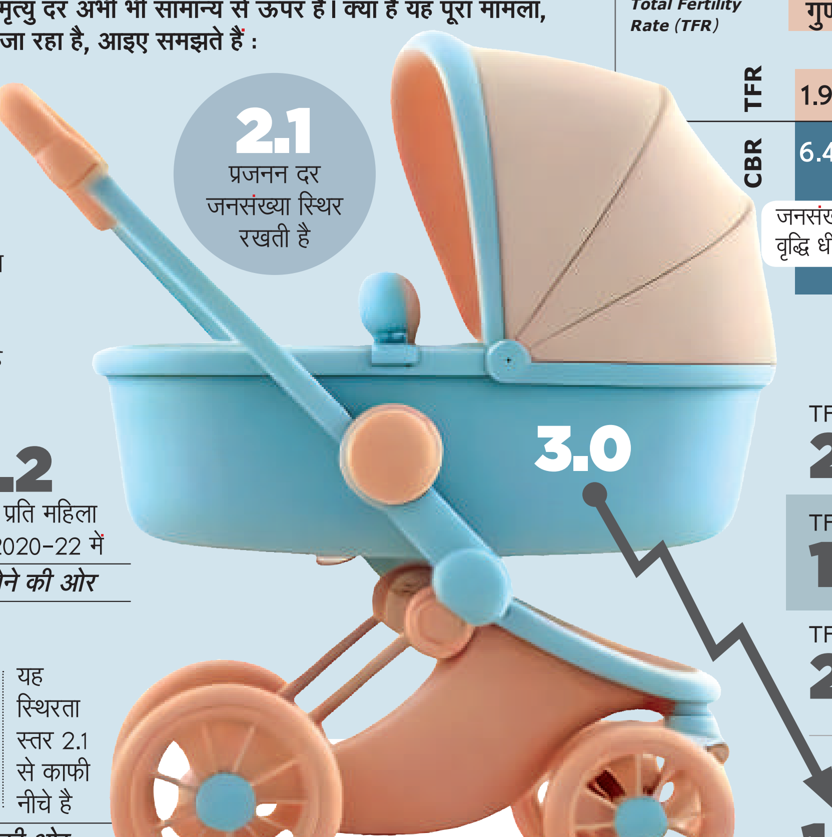

बड़े बदलाव

3.0

TFR **2.0** से गिरकर 2023 में 1.9 पर पहुंचा भारत में

TFR **1.5** से नीचे पहुंचा दक्षिणी राज्यों में, उम्रदराज आबादी बढ़ी

TFR **2.4** से ऊपर बिहार और उत्तर प्रदेश में, यहां जन्म ज्यादा

1.9 की गिरावट शिक्षा और परिवार नियोजन से TFR में 20 साल में

राज्यों में जन्मदर

(बच्चे प्रति महिला 2023)

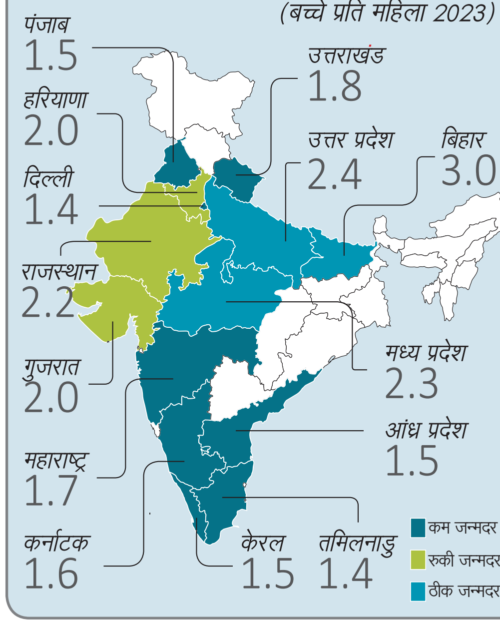

18 राज्यों में **2.1** से कम प्रजनन दर

867 **लड़कियां**- सबसे खराब लिंगानुपात उत्तराखंड

चिंता की बात

- 60 वर्ष से अधिक आयु के लोग कुल जनसंख्या का **9.7%**
- एक वर्ष के भीतर **0.7%** बढ़ गई बुजुर्ग आबादी
- केरल में बुजुर्ग आबादी का अनुपात सबसे अधिक **15%**

भारत के डेमोग्राफिक डिविडेंड के 2040-41 के आसपास चरम पर पहुंचने का अनुमान है। तब तक वृद्ध जनसंख्या भी आनुपातिक रूप से बढ़ जाएगी। भारत को अगले दो दशकों में इसका लाभ उठाना होगा।
अभिजीत मुखोपाध्याय, वरिष्ठ अर्थशास्त्री

क्यों हुआ ऐसा

- शिक्षा के प्रसार और जागरूकता ने प्रजनन दर कम की
- देरी से विवाह और बढ़ती गरीबी ने परिवार शुरू करने की उम्र बढ़ाई
- शहरीकरण और सरकारी परिवार नियोजन योजनाओं ने छोटे परिवारों की रुझान बढ़ाया
- सरकारी नीतियों और योजनाओं ने जन्म नियंत्रण को बढ़ावा दिया

क्या होगा इससे

- प्रजनन दर में कमी से कार्यबल में भविष्य में कमी आ सकती है
- बुजुर्गों की आबादी बढ़ रही है, इससे स्वास्थ्य सेवाओं पर बोझ बढ़ेगा
- बुजुर्गों की आबादी बढ़ने से पेंशन और सामाजिक सुरक्षा की मांग में वृद्धि होगी
- ग्रामीण इलाकों में असमानता बढ़ सकती है

कंटेंट: राहुल पाण्डेय, **ग्राफिक:** नितिन कुमार

THE SPEAKING TREE
और पढ़ने के लिए देखें
www.speakingtree.nbt.in

पूर्वजों और प्रकृति को जानने का मौका है पितृपक्ष

हिमांशु राय रावल

अभी श्राद्ध पक्ष चल रहा है। इसे पितृपक्ष भी कहते हैं। यह भारतीय संस्कृति में वह कालखंड है, जब हम अपने पूर्वजों का स्मरण कर उन्हें अन्न और जल अर्पित करते हैं। यह मात्र धार्मिक अनुष्ठान नहीं बल्कि प्रकृति, पर्यावरण और स्वास्थ्य से गहराई से जुड़ी एक वैज्ञानिक परंपरा है। हर वर्ष भाद्रपद मास के कृष्ण पक्ष में आने वाला यह समय हमें अपने पूर्वजों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के साथ-साथ जीवन और प्रकृति के बीच के सूक्ष्म संबंधों को भी समझाता है।

श्राद्ध में विशेष रूप से काकग्रास, यानी कौवों को अन्न देने की परंपरा है। यह आस्था का प्रतीक है कि कौवे पितरों के संदेशवाहक हैं, परंतु इसके पीछे प्रकृति का गहन विज्ञान छिपा है। वास्तव में वट और पीपल जैसे वृक्ष, जो भारतीय अध्यात्म और आयुर्वेद दोनों में अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं, तभी पनपते हैं जब उनके बीज कौवों के पाचनतंत्र से होकर भूमि पर पहुंचते हैं। इस प्रकार कौवे इन पवित्र वृक्षों के प्राकृतिक विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

भारतीय ऋषि-मुनियों ने वट और पीपल वृक्ष की महिमा को जानकर सदैव इनकी छाया में साधना की। पीपल ऐसा अद्वितीय वृक्ष है, जो सूर्योदय और सूर्यास्त के डेढ़ घंटे आगे-पीछे तक भी ऑक्सिजन देता रहता है। वहीं वटवृक्ष अपने पत्तों से व्यापक क्षेत्र की नमी को सोखकर वातावरण को संतुलित बनाए रखता है। स्पष्ट है कि इन वृक्षों का अस्तित्व केवल धार्मिक आस्था का विषय नहीं, बल्कि पर्यावरण संरक्षण का जीवंत आधार है, और कौवे इसमें सहायक कड़ी हैं। श्राद्ध पक्ष में काकग्रास की परंपरा इसी गहन पर्यावरणीय समझ की देन है।

श्राद्ध की एक और परंपरा है- खीर का अर्पण और सेवन। भाद्रपद मास शरद ऋतु का अंग है, जब पित्त दोष का प्रकोप बढ़ता है। दूध में पित्त दोष को दूर करने का गुण होता है, इसलिए खीर के रूप में इसके सेवन से शरीर का अतिरिक्त पित्त बाहर निकल जाता है। इस प्रकार खीर केवल धार्मिक प्रसाद ही नहीं, एक प्रभावी औषधि भी है। यही कारण है कि नवरात्रि से पहले खीर का सेवन और उसके बाद लघु आहार की व्यवस्था की गई है।

पितृपक्ष हमें पूर्वजों की स्मृति में विनम्र बनाता है, तो प्रकृति और स्वास्थ्य की रक्षा का व्यावहारिक मार्ग भी सुझाता है। आशीर्वाद में जहां 'शरदः शतं जीवेम (हम सौ शरद ऋतु तक जीवित रहें)' कहा जाता है, वहीं यह भी स्मरण कराना आवश्यक है कि 'रोगाणां शारदी माता (रोगों की माता शरद ऋतु)'। इसलिए शरद ऋतु में खीर का सेवन और कौवों को अन्नदान केवल रीति नहीं, बल्कि जीवन रक्षा का सूत्र है। यह परंपरा नई पीढ़ी तक पहुंचाना हम सबका कर्तव्य है।

अपना क़सूर मानें, तभी रुकेंगी ऐसी आपदाएं

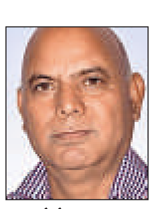
व्योमेश चन्द्र जुगरान

उत्तराखंड में 1 अप्रैल से 31 अगस्त तक बारिश के चलते 80 से अधिक लोग जान गंवा चुके हैं। आखिर पहाड़ों पर बारिश इतनी घातक कैसे हो गई? मौसम वैज्ञानिक इसे मॉनसून के परिवर्तनकारी पैटर्न से जोड़कर देख रहे हैं, जबकि तजुर्बेकार प्रकृति के साथ हो रहे खिलवाड़ से।

कमजोर निगरानी । पहाड़ों में सड़कों का विस्तार, तीर्थों का कायाकल्प, बांधों का निर्माण और पर्यटन विकास सरकार की जिम्मेदारी है। लेकिन, कमजोर निगरानी तंत्र के कारण यह जिम्मेदारी संसाधनों की लूट-खसोट में बदल गई। निगरानी तंत्र की अहम कड़ी स्थानीय लोग होते हैं, लेकिन वे रोजगार और कारोबार के वशीभूत खुद इस खेल का हिस्सा बन गए।

जवाबदेही जरूरी । माना कि विकास बनाम पर्यावरण का संघर्ष नया नहीं, लेकिन एकतरफा आरोप नहीं चल सकते। संतुलन साधने की जवाबदेही सामूहिक है। केदार महाविनाश के घाव मंदिर के पास ठहर गई एक शिला के पूजन से भर दिए जाएं और वहां नवनिर्माण का 'इको फ्रेंडली' वादा नारा भर रह जाए, यह नहीं होना चाहिए। पर क्या पंडे-पुजारी और स्थानीय लोग जवाबदेही से बच सकते हैं?

सरकारों की चाल । श्रीनगर में धारी देवी को बांध से बचाने आगे आए पर्यावरण प्रेमी संत गुरुदास अग्रवाल पर पोती गई कालिख और उमा भारती पर फेंके गए पत्थरों के घाव हमारी याददाश्त में होने चाहिए। सरकारें तो पर्यावरण विरोधी परियोजनाओं के विरोध का यही हश्र चाहती हैं। इसीलिए उत्तराखंड के तत्कालीन मंत्री ने धारी गांव के लोगों को बस में भरकर दिल्ली के जंतर-मंतर पर इकट्ठा कर दिया कि बांध के प्रमोटर स्थानीय लोगों को नौकरी देने को तैयार हैं, पर पर्यावरणवादी रोड़ा बन रहे हैं। उन नौकरियों का क्या हुआ?

कॉमन रूम

कैसा संसिटिव जोन । गुरुदास अग्रवाल (स्वामी ज्ञान स्वरूप सानंद) ने 2009 में भागीरथी घाटी की तीन बड़ी बांध परियोजनाओं लोहारी नागपाला, पाला मनेरी और भैरोंघाटी के खिलाफ अनशन किया था। तत्कालीन केंद्र सरकार ने न सिर्फ तीनों परियोजनाओं को रद्द किया, बल्कि जुलाई 2011 में भागीरथी घाटी को 'इको-सेंसिटिव जोन' घोषित कर दिया। लेकिन राज्य में BJP की सरकार रही हो या कांग्रेस की, सभी ने केंद्र के फैसले का विरोध किया।

खुद से सवाल । NGT के संज्ञान में यह बात आई है कि गंगोत्री से उत्तरकाशी के बीच हाल के वर्षों मे 500 से अधिक होम स्टे बन गए हैं। इनमें अधिकांश भागीरथी के जल संभरण क्षेत्र में हैं। पहाड़ों पर सड़क बनें, पर आखिर कितनी चौड़ी? होटल बनें, पर वे कितने बड़े हों? बांध बनें, पर क्या रिजर्वायर का आयतन गुपचुप बढ़ा दिया जाए? तीर्थों को सुविधामय बनाने के लिए विकास हो, पर क्या पर्यावरण का मखौल उड़ाकर? पहले ये सवाल हमें खुद से पूछने होंगे।

आर.एन.आई. नं. 510/57 © सर्वाधिकार सुरक्षित। लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। स्वत्वाधिकारी बैनेट, कोलमैन एण्ड कम्पनी लिमिटेड के लिए राजीव यादव द्वारा, 7 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा **टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस, साइट IV, औद्योगिक क्षेत्र साहिबाबाद** और प्लॉट नंबर 7-8, सेक्टर M-11, ट्रांसपोर्ट हब, इंडस्ट्रियल मॉडल टाउनशिप, मानेसर, हरियाणा से मुद्रित। फोन : 23302000 फैक्स: 23492047, पंजीकृत कार्यालय : दादाभाई नौरोजी रोड, मुंबई-400001। विमान सेवा शुल्क : 1 रु. प्रति कॉपी। नेपाल में कुल मूल्य : सोमवार से शनिवार : नेपाली 5 रु. ; रविवार : नेपाली 6 रु. संपादक (दिल्ली मार्केट) : आशीष पांडे (इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अन्तर्गत उत्तरदायी)

संस्थापक: शहीद शिरोमणि लाला जगतनारायण जी, अमर शहीद रमेश चन्द्र जी एवं कलम के योद्धा अश्विनी कुमार जी

आदित्य नारायण चोपड़ा
adityachopra@punjabkesari.com

'आधार मेरी पहचान'

भारत संविधान से चलने वाला देश है और इस देश के संविधान का झंडा स्वतन्त्र न्यायपालिका ने हर विषम परिस्थिति में भी हमेशा ऊंचा रखने का प्रयास किया है। यदि केवल 21 महीने के इमरजेंसी काल को छोड़ दिया जाये तो देश की न्यायपालिका ने हर हाल में पूरे देश को संविधान के रास्ते पर चलने की राह दिखाई है और सिद्ध किया है कि भारत में केवल उस कानून का राज ही चलेगा जो सबके लिए बराबर होता है। हमारे संविधान निर्माताओं ने न्यायपालिका को सरकार का अंग इसीलिए नहीं बनाया था जिससे राजनीतिक स्तर पर चुनी जाने वाली हर सरकार केवल संविधान के अनुसार ही शासन चलाये और हर सरकार की अन्तिम प्रतिबद्धता केवल संविधान के प्रति ही हो। इसी प्रकार हमारे संविधान निर्माताओं ने चुनाव आयोग को भी सरकार का हिस्सा नहीं बनाया और इसकी जिम्मेदारी तय की कि यह भारत के हर नागरिक को मिले एक वोट के अधिकार की सुरक्षा करेगा और देखेगा कि उसके एक वोट की कीमत सार्वभौमिक तौर पर एक बराबर हो। किसी मजदूर के वोट की कीमत भी वही हो जो किसी उद्योगपति के वोट की होती है।

स्वतन्त्रता के बाद से चुनाव आयोग अपनी यह जिम्मेदारी पूरी निष्ठा से निभाता आ रहा था मगर वर्तमान में इसकी विश्वसनीयता पर बड़ा प्रश्न चिन्ह तब आकर लगा जब इसकी बनाई मतदाता सूची पर सवालिया निशान लगने लगे। बिहार में चुनाव आयोग जो सघन मतदाता सूची पुनरीक्षण का काम करा रहा है उसमें 65 लाख मतदाताओं के नाम हटा दिये गये। ये नाम जिन कारणों से हटाये गये उनके पीछे चुनाव आयोग का अपना तर्क हो सकता है मगर इनके प्रदूषित होने के प्रमाण भी बहुत जल्दी ही देश के विपक्ष के नेता श्री राहुल गांधी ने उजागर कर दिये। चुनाव आयोग का मुख्य कार्य देश में साफ-सुथरे व पारदर्शी चुनाव कराने का है क्योंकि इनकी मार्फत ही देश में लोकतन्त्र का आधार तैयार होता है। बाबा साहेब अम्बेडकर जब चुनाव आयोग का गठन कर रहे थे तो उनके सामने लक्ष्य राजनीतिक समानता व आजादी का था। इसकी आधारशिला मतदाता सूची ही थी। अतः चुनाव आयोग की जिम्मेदारी इसे पूर्णतः स्वच्छ तरीके से बनाने की तय की गई और यह सुनिश्चित करने के लिए कहा गया कि कोई भी भारतीय नागरिक इससे छूटना नहीं चाहिए और किसी अवैध भारतीय को इसका हिस्सा नहीं बनना चाहिए। अपनी इस जिम्मेदारी को चुनाव आयोग ने 1952 के पहले चुनावों से लेकर अब तक पूरी निष्ठा से निभाया और अपना नजरिया समावेशी रखा जिससे हर गरीब-गुरबे का भी वोट बन सके लेकिन बिहार में मतदाता सूची के पुनरीक्षण करते समय चुनाव आयोग अपनी इस जिम्मेदारी को भूल गया और पहली बार स्वतन्त्र भारत में उसकी विश्वसनीयता पर प्रश्न चिन्ह लगा। उसने मतदाता सूची में अपना नाम दर्ज कराने के लिए 11 ऐसे दस्तावेजों की सूची जारी की जो किसी आम भारतीय के पास बामुश्किल ही पाये जाते हैं और राशन कार्ड व आधार कार्ड को इस सूची से गायब कर दिया। राशन कार्ड व आधार कार्ड प्रायः हर गरीब से गरीब व्यक्ति के पास भी होते हैं । आधार कार्ड को तो हर भारतवासी के लिए जरूरी दस्तावेज भी केन्द्र सरकार ने ही बनाया था जो उसके निवासी होने का प्रमाणपत्र था। यह आधार कार्ड हर जरूरी सरकारी कामकाज के लिए जब काम में आता है तो मतदाता सूची में नाम दर्ज कराने की फेहरिस्त से इसे बाहर क्यों किया गया? इससे चुनाव आयोग की मंशा पर सन्देह व्यक्त किया जा सकता है।

> बाबा साहेब अम्बेडकर जब चुनाव आयोग का गठन कर रहे थे तो उनके सामने लक्ष्य राजनीतिक समानता व आजादी का था। इसकी आधारशिला मतदाता सूची ही थी। अतः चुनाव आयोग की जिम्मेदारी इसे पूर्णतः स्वच्छ तरीके से बनाने की तय की गई और यह सुनिश्चित करने के लिए कहा गया कि कोई भी भारतीय नागरिक इससे छूटना नहीं चाहिए और किसी अवैध भारतीय को इसका हिस्सा नहीं बनना चाहिए। अपनी इस जिम्मेदारी को चुनाव आयोग ने 1952 के पहले चुनावों से लेकर अब तक पूरी निष्ठा से निभाया और अपना नजरिया समावेशी रखा जिससे हर गरीब-गुरबे का भी वोट बन सके

चुनाव आयोग ने यह कह कर कुतर्क पेश किया कि आधार कार्ड नागरिकता का प्रमाण नहीं है। इससे सवाल खड़ा हुआ कि क्या चुनाव आयोग को किसी भारतीय की नागरिकता की जांच करने का अधिकार है। जाहिर है कि यह अधिकार संविधान केवल गृह मन्त्रालय को ही देता है। भारत का कोई भी नागरिक चुनाव आयोग के सामने जब यह लिख कर देता है कि वह भारत का नागरिक है तो उसकी विश्वसनीयता की कानूनन जांच तभी की जा सकती है जब कोई दूसरा व्यक्ति उसके इस दावे को चुनौती दे। अतः आधार कार्ड को मतदाता सूची में शामिल करने के दस्तावेज के मानने से किसी को क्या गुरेज हो सकता है। अतः देश की सबसे बड़ी अदालत सर्वोच्च न्यायालय इस सम्बन्ध में दायर याचिकाओं की सुनवाई करते हुए लगातार कह रही थी कि आधार कार्ड को भी 12वां ऐसा दस्तावेज माना जाना चाहिए जिसके दिखाने पर किसी नागरिक का नाम मतदाता सूची में शामिल किया जा सके। मगर चुनाव आयोग की बेशर्मी यह थी कि वह उसके इस सुझाव या निर्देश पर ध्यान ही नहीं दे रहा था। अतः अन्त में 8 सितम्बर को सर्वोच्च न्यायालय को लिखित आदेश देना पड़ा कि आधार कार्ड बाकायदा 12वां दस्तावेज होगा। इससे देशवासियों ने बहुत राहत की सांस ली है क्योंकि चुनाव आयोग अब पूरे देश में ही बिहार की तर्ज पर मतदाता सूची पुनरीक्षण करना चाहता है। हालांकि अभी सर्वोच्च न्यायालय को इस बारे में भी अंतिम फैसला देना है कि क्या आयोग ऐसा कर भी सकता है या नहीं। गौर से देखा जाये तो चुनाव आयोग का कार्य हर चुनाव से पहले मतदाता सूचियों का संशोधन करना होता है और जब यह कार्य वह करता रहता है तो उसे सघन पुनरीक्षण की जरूरत क्यों पड़े? इसका मतलब यह भी निकाला जा सकता है कि चुनाव आयोग को अपने ही किये गये कार्य पर विश्वास नहीं है।

पूरे देश में 2024 के लोकसभा चुनाव आयोग की ताजा मतदाता सूची के आधार पर ही हुए थे। मगर ये सब बारीक कानूनी नुक्ते हैं जिनके पेंच सर्वोच्च न्यायालय में वरिष्ठ व विद्वान वकील ही खोल सकते हैं। फिलहाल तो आधार कार्ड को 12वां दस्तावेज बनाये जाने का मुद्दा ही मुख्य है। निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि भारत की न्यायपालिका किसी भी संवैधानिक संस्था तक को संविधान के ही रास्ते पर डालने की कला जानती है। चुनाव आयोग का अब यह कर्त्तव्य बनता है कि वह विनम्रता सीखे और अपनी उस जिम्मेदारी को न्यायपूर्वक निभाये जो संविधान निर्माता उसके कन्धे पर डाल कर गये हैं।

तनाव और अकेलेपन के अंधेरों से...

तन के साथ साथ मन को भी स्वस्थ बनाना होगा,
हर दिल को प्रेम, सहानुभूति का अहसास कराना होगा,
तनाव और अकेलेपन के अंधेरों से सबको बाहर लाना होगा,
'विश्व आत्महत्या रोकथाम दिवस' को सही अर्थों में सार्थक बनाना होगा..!!

गीता पाढा

भविष्य की राजनीति तय करेगा बिहार चुनाव

प्रभु चावला
एडिटोरियल डायरेक्टर
द न्यू इंडियन एक्सप्रेस
newindianexpress.com

बिहार में होने वाला चुनाव सिर्फ एक लोकतांत्रिक कवायद नहीं है, इसमें तीन दिग्गजों -नीतीश कुमार, तेजस्वी यादव और राहुल गांधी की राजनीति दांव पर लगी है। दो दल-जदयू और लोजपा अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं, जबकि शक्तिशाली भाजपा और इंडिया का भंगुर गठबंधन सबसे कठिन लड़ाई में जूझने जा रहे हैं। मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने पांच बार चुनाव जीता है, परंतु यह उनका निर्णायक चुनाव होगा। उनकी पार्टी का वोट प्रतिशत 2010 के 22.6 फीसदी से घटकर 2020 में 15.7 प्रतिशत रह गया। ढांचागत सुधार, विद्युतीकरण में वृद्धि तथा कानून-व्यवस्था की स्थिति बेहतर करने जैसी उनकी उपलब्धियां निर्विवाद हैं, लेकिन अब उन पर थकान भारी पड़ रही है। बेरोजगारी बिहार की आत्मा से जुड़ी है, और 75 लाख लोग बिहार से बाहर मेहनत कर जीविका चला रहे हैं। विस्थापन एक ऐसा घाव है, जो भरना ही नहीं चाहता। नीतीश कुमार को अपने दम पर बहुमत लाना होगा, ताकि एनडीए में अपनी पार्टी की प्रासंगिकता बनाये रखें, जिसने उन्हें मुख्यमंत्री प्रस्तावित किया है। इससे कुछ स्थानीय भाजपा नेता परेशान हैं, जो बड़ी भूमिका चाहते हैं।

बिहार की राजनीति में बड़ी भूमिका इन दिनों तेजस्वी यादव निभा रहे हैं। इस चुनाव में उन्हें लालू के बेटे से अलग पहचान साबित करनी होगी। इंडिया गठबंधन का नेतृत्व कर रहे तेजस्वी अपने मुस्लिम-यादव जनाधार पर निर्भर हैं, जिसके बूते 2020 के चुनाव में 75 सीटें जीत राजद राज्य का सबसे बड़ा दल बनकर उभरा है। एनडीए के मजबूत जातिगत समीकरण को चुनौती देने के लिए तेजस्वी को अब ओबीसी, दलितों और कमजोर तबकों तक पहुंच बनानी होगी। तेजस्वी के तेज, युवा केंद्रित और तकनीकी दक्षता से लैस चुनाव अभियान का दायरा बढ़ रहा है। एक ओपिनियन पोल के मुताबिक, मुख्यमंत्री के तौर पर उनकी 36.9 प्रतिशत रेटिंग मुख्यमंत्री नीतीश कुमार की 18.4 फीसदी रेटिंग से बहुत आगे है। इसके बावजूद तेजस्वी पर लालू यादव के दौर के जंगल राज का ठप्पा लगा हुआ है. लालटेन चुनाव चिह्न के आधार पर विपक्ष राजद को प्रगति विरोधी भी कहता है।

बिहार के रण में राहुल गांधी भी अपनी योग्यता साबित करना चाहते हैं। वर्ष 2020 में 19 सीटें जीतने वाली कांग्रेस गठबंधन में जूनियर पार्टनर है, फिर भी चुनाव में कांग्रेस की भूमिका बड़ी है। यह चुनाव न केवल इस प्रांत में कांग्रेस की संभावनाओं की परीक्षा है, इसमें कांग्रेस का प्रदर्शन इंडिया गठबंधन के संभावित प्रधानमंत्री के रूप में राहुल की नियति भी तय करेगा। तेजस्वी और कन्हैया कुमार के साथ राज्य पदयात्रा में उन्होंने उन मुद्दों को उभारा, जो युवाओं के मुद्दे हैं। यानी बेरोजगारी, विस्थापन और आर्थिक महत्वाकांक्षा। ऐसे ही, प्रियंका के साथ राहुल की साझा रैलियों का उद्देश्य कभी कांग्रेस के गढ़ रहे इलाकों में पार्टी को फिर से मजबूत बनाना था। राहुल गांधी के 'वोट चोरी' तथा चुनाव आयोग के पक्षपात के आरोप सार्वजनिक झगड़े में बदल गये हैं, जिन पर सुप्रीम कोर्ट ने सावधानी से जांच करने को कहा है।

कांग्रेस के 'पलायन रोको, नौकरी दो' का नारा बिहार की हकीकत से

जुड़ गया है, जहां के 51.2 फीसदी मतदाताओं ने रोजगार को अपनी प्रमुख प्राथमिकता बतायी है। नेहरू के वैज्ञानिक समाजवाद के नजरिये को मौजूदा समय संदर्भ में ढालकर राहुल गांधी कांग्रेस की परंपरागत धर्मनिरपेक्ष सोच को समसामयिक आर्थिक लोक-प्रियतावाद से जोड़ते दिखाई देते हैं।

भाजपा के एजेंडे में आदर्शवाद कहीं नहीं है। एनडीए की चुनावी गाड़ी बिहार में एक असामान्य बाधा का सामना कर रही है, राज्य में एक भी करिश्माई स्थानीय नेता नहीं है। ऐसे में, भाजपा नरेंद्र मोदी की व्यापक लोकप्रियता व चुंबकीय व्यक्तित्व तथा अमित शाह के रणनीतिक कौशल के सहारे आगे बढ़ेगी। वर्ष 2020 के 74 सीटों से आगे बढ़ने के लिए पार्टी मोदी के विकासवादी विमर्श के साथ राजद के दौर में कानून-व्यवस्था की विफलता को याद दिलायेगी। चुनाव विश्लेषक एनडीए के पक्ष में 48.9 प्रतिशत तथा इंडिया गठबंधन के पक्ष में 35.8 फीसदी समर्थन का आंकड़ा दे रहे हैं। परंतु एनडीए सहयोगियों में सब कुछ ठीक नहीं दिखता। सीटों के मामले में चिराग पासवान की लोजपा और जदयू के बीच मतभेद हैं। चिराग पासवान 20-25 सीट मांग रहे हैं, पर जदयू इतनी सीटें देना नहीं चाहता. चिराग पासवान बिहार चुनाव में सबसे अप्रत्याशित चेहरे के रूप में सामने हैं। पिछले साल हुए लोकसभा चुनाव में पांच सीटों पर शानदार जीत बिहार में पासवान मतदाताओं के बीच, जिनकी आबादी राज्य में अच्छी-खासी है, चिराग की लोकप्रियता का सबूत था। अगर चुनाव में भाजपा और जदयू में से किसी को निर्णायक बहुमत नहीं मिलता, तो मुख्यमंत्री के चयन में चिराग की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है। उनके द्वारा नीतीश कुमार के राज में कानून-व्यवस्था की आलोचना एनडीए में अंदरूनी दरार के बारे में बताती है। एनडीए के मजबूत जातिगत समीकरण को मोदी की रैलियों ने मजबूती प्रदान की है, जिनमें कल्याणकारी योजनाओं तथा ढांचागत सुधारों के बारे में बताया जाता है। एआई की मदद से बनाये गये मीम्स तथा प्रभावी संदेशों से भरपूर राजद का डिजिटल अभियान एनडीए के व्हाट्सएप संदेशों तथा डोर-टू-डोर कैंपेन से बिल्कुल अलग है।

बिहार की राजनीति अब भी जातिगत समीकरणों पर निर्भर है। एक सर्वे बताता है, 51.2 फीसदी मतदाताओं ने बेरोजगारी को, 45.7 प्रतिशत वोटरों ने मुद्रास्फीति को और 41 फीसदी वोटरों ने भ्रष्टाचार को बड़ा मुद्दा बताया है. पर जातिगत समीकरणों को, नीतीश द्वारा आर्थिक रूप से पिछड़ी जातियों तथा चिराग द्वारा पासवान मतदाताओं, साधने के कौशल के कारण एनडीए अपने प्रतिद्वंद्वी पर भारी है। दूसरी ओर, मुस्लिम, यादव, बहुजन, आदिवासी और गरीब मतदाताओं के अपने जनाधार को राजद और व्यापक करने की कोशिश में है। सभी 243 सीटों पर लड़ रही जन सुराज पार्टी जातिगत समीकरणों को महत्व नहीं दे रही। पर इसके नेता प्रशांत किशोर की मुख्यमंत्री के रूप में रेटिंग मात्र 16.4 फीसदी है। बेशक विस्थापन पर केंद्रित कांग्रेस का अभियान जोर पकड़ रहा है, पर इंडिया गठबंधन में अंदरूनी खींचातानी इसे बाधित कर सकती है। बिहार का चुनाव एनडीए और इंडिया गठबंधन, दोनों के लिए बेहद महत्वपूर्ण है। राज्य के मतदाता सिर्फ अगले मुख्यमंत्री का ही चयन नहीं करेंगे, वे भारत के राजनीतिक भविष्य की भी नींव रखेंगे।

मां जैसी कोई दूसरी चीज़ भगवान ने नहीं बनाई !

फिरोज बख्त अहमद

जब भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की आंसुओं से डुबडुबाई आंखों से जनता को यह पैगाम मिला कि देश और संसार की सभी मां एक समान होती हैं और उनका परम आदर, सम्मान हम सबका संस्कार ही नहीं, बल्कि धर्म होता है तो सुनने वालों की आंखों में भी आंसू तैरने लगे। वास्तव में मां चीज ही ऐसी बनाई है, भगवान ने कि उसका कोई बदल नहीं। अपनी मां को मोदी जी कितना प्यार करते हैं, इसका एक किस्सा बताते हैं, वरिष्ठ संघ कार्यकर्ता और पूर्व सांसद, बापू देव दास आप्टे, जो किसी समय किसी शाखा में उनके गुरु भी रहे। मोदी के हवाले से उन्होंने बताया कि भले ही वे शाखा को समर्पित थे, और प्रायः अपनी मां हीराबेन बाई का स्मरण करते थे। मोदी ने उन्हें एक बार बताया कि भगवान ने जब मां को बनाया तो उसे अपनी गलती का आभास हुआ। आप्टे ने पूछा, 'ऐसा क्यों?' उस पर मोदी के कहा कि भगवान ने जब मां को बनाया तो उसको इस बात का एहसास नहीं था कि मां, उसकी जगह ले लेगी।

मोदी जी को तो लोग गालियां देते ही रहते हैं और स्वयं वे कहते हैं कि उन्हें रोज तीन किलो या इस से भी अधिक गालियां दी जाती हैं, मगर उनकी मां, जो कि आज अपना डिफेंस करने के लिए इस दुनिया में भी नहीं हैं उन्होंने किसी का क्या बिगाड़ा था, जो उन्हें कांग्रेस और आरजेडी के संयुक्त प्लेटफॉर्म से गालियां दी गई। मोदी जी ने अपना दर्द-ए-दिल एक मंच से बयान किया तो उसी मंच के कुछ तुच्छ मानसिकता वाले लोगों ने कहा कि वे मां के नाम में लोगों की भावनाओं को उभार रहे हैं। लेकिन इसमें कोई हैरानी की बात नहीं, क्योंकि भारत का विपक्ष अभिव्यक्ति की आजादी के नाम में यह वीभत्सपूर्ण पाप करता चला आया है। ध्यान रहे कि जब कांग्रेस व विपक्ष सत्ता में थे तो हिंदू महासभा, आरएसएस या भाजपा ने इनके प्रधानमंत्रियों को इस प्रकार से कभी गालियां नहीं दीं। इन गालियों के संबंध में मोदी जी ने एक बार कहा था कि गालियों के जो पत्थर, ईंटें और लाठियां मुझ पर फेंके और बजाए जाते हैं, मैं पलट कर जवाब देने के बजाय उनको उठा कर जमा कर लेता हूं और उनसे प्रधानमंत्री आवास योजना के घर बना लेता हूं।

मां के संबंध में इस्लाम से जुड़ा एक किस्सा इमाम उमैर अहमद इलियासी ने बताया कि हज़रत उमर रज़ी अल्लाह ताला अन्हू को अपनी मां से बहुत प्यार था और एक दिन उन्होंने अपनी मां से कहा-मां, आपने मेरा पालन पोषण करने के लिए बड़ी कुर्बानियां दी हैं। मां, मैं उनका एहसान चुकाना चाहता हूं। मां यह सुन कर मुस्कुराईं और बोलीं, 'ठीक है बेटा,

ज़रा ध्यान से सुनो। एक रात की बात है कि मूसलाधार बारिश हो रही थी और हमारी छप्पर की झोंपड़ी की छत से पानी ऐसे बह रहा था जैसे बरमे या नल की टोटी खुली हुई हो। उस रात मैं ने तुम्हें ठंडे पानी से बचाने के लिए तुम्हें एक सूखे टाट के बिस्तर पर लिटाया हुआ था और अपनी पीठ पर पानी झेल रही थी। बेटा यह केवल एक रात की बात है। क्या तुम उस रात का एहसान चुका सकते हो?' यह सुन कर हजरत उमर की आंखों से आंसुओं के नलों की टोटियां खुल गईं।

सच है, मां का एहसान कभी नहीं चुकाया जा सकता, यही कारण है कि मोदी जी, जिनका मन फूल की पंखड़ियों जैसा है, कई बार भावुक हो जाते हैं। दूसरी ओर विपक्ष इसको घड़ियाली आंसू या फोटो ऑप कह कर घृणात्मक वोट बैंक की राजनीति में ब्राउनी प्वाइंट्स बटोरने के लिए मीडिया में उछालते हैं। मगर देश याद रखे, जहां मोदीजी का दिल छूई मूई जैसा है, वहीं यह व्यक्ति इतना दमदार, दिलदार, जानदार, शानदार, कामदार, वफादार और ईमानदार है कि देश की आबरू बचाने के लिए फौलादी बन जाता है और चाहे वह जिनपिंग हों या ट्रंप, किसी के आगे नहीं झुकता।

यदि हम मोदी जी के विरुद्ध 'गाली सियासत' का अध्ययन करें तो पिछले ग्यारह वर्ष में उन्हें पूर्ण विपक्ष ने 211 रिकॉर्डेड गालियों, कोसा, धमकियों और बददुआओं से नवाज़ा है, जैसे - चौकीदार चोर है, गंदी नली का कीड़ा", बिच्छू", "बंदर", "गंगू तेली", "खून की खेती वाला", चाय वाला", 'मोदी तेरी कब्र खुदेगी', हिटलर, 'कुत्ते की मौत मरेगा' आदि।

अंत में एक बार की बात है कि भगवान गौतम बुद्ध को किसी ने गाली दी तो उन्होंने बड़ा सीधा और सटीक प्रश्न गाली देने वाले से पूछा। 'भाई यह बताइए कि अगर आप मुझे कोई तोहफ़ा दें और वह मैं लेने से इंकार कर दूं तो किसका होगा?' गाली देने वाले ने कहा कि उसी का होगा जो भेंट कर रहा था। इस पर भगवान बुद्ध ने कहा-भाई, आपका बहुत धन्यवाद कि आपने मुझे गालियों का तोहफा दिया, मगर मुझे इसकी आवश्यकता नहीं, अतः आपको ही वापस करता हूं। उस व्यक्ति के मस्तिष्क की शराफत और रूहानियत का बल्ब रौशन हो गया और वह उनका चेला बन गया। जय हिंद।

बलूचिस्तान में पाकिस्तानी अत्याचार : भूला हुआ नरसंहार

भावना अरोड़ा

कई दशकों से बलूचिस्तान ख़ामोश कराई गई आवाज़ों की कब्रगाह बना हुआ है। पहाड़ी इलाकों और खनिजों से भरपूर ज़मीन के नीचे गुमशुदगियों, सामूहिक कब्रों और सिर्फ़ सुने जाने की गरिमा के लिए लड़ते लोगों की दर्दनाक कहानी छिपी है। पाकिस्तान अक्सर संयुक्त राष्ट्र में कश्मीर में मानवाधिकारों पर जोर-शोर से बोलता है लेकिन अपनी ही सीमाओं के भीतर उस बलूचिस्तान में उसने दमन का एक पूरा सिस्टम खड़ा कर दिया है जो उसका सबसे बड़ा और सबसे उपेक्षित प्रांत है। यह पैटर्न बेहद डरावना और लगातार एक तरह का है। लोगों को सुरक्षा बल उठा ले जाते हैं, हिरासत में लेने से इनकार कर दिया जाता है और फिर हफ्तों या महीनों बाद उनके क्षत-विक्षत शव सड़कों के किनारे या सामूहिक कब्रों में मिलते हैं। जो परिवार विरोध करते हैं उन पर लाठीचार्ज किया जाता है, महिलाओं के नेतृत्व वाले मार्चों को कुचल दिया जाता है और जो लोग बच जाते हैं वे हर समय इस डर में जीते हैं कि अगली बार दरवाज़ा कौन खटखटाएगा? ये बातें अंधेरे में कही गई आरोप नहीं हैं। ये दर्ज की गई सच्चाइयां हैं, जिन्हें एमनेस्टी इंटरनेशनल, ह्यूमन राइट्स वॉच, अंतर्राष्ट्रीय मीडिया ने रिपोर्ट किया है और यहां तक कि पाकिस्तान की ओर से जबरन लापता व्यक्तियों पर गठित जांच आयोग (सीओआईईडी) भी स्वीकार किया है।

धोखे का लंबा इतिहास

बलूचिस्तान की अलगाव की भावना 1948 में शुरू हुई, जब पाकिस्तान ने कई बलूच नेताओं की इच्छा के विरुद्ध खानत-ए-कलात को अपने में मिला लिया। यह नाराज़गी दशकों तक सुलगती रही और कई बार विद्रोह के रूप में फूट पड़ी लेकिन अगस्त 2006 में पाकिस्तान सेना के एक अभियान के दौरान वरिष्ठ नेता नवाब अकबर बुग़ती की हत्या ने हिंसा के सबसे भयानक दौर को फिर से भड़का दिया। तब से राज्य की काउंटर, इंसर्जेंसी संवाद पर कम और 'मारो और फेंको' जैसी नीति पर ज़्यादा आधारित रही है। जिस पर संयुक्त राष्ट्र के लापता व्यक्तियों पर कार्यकारी समूह ने बार-बार चिंता जताई है।

1 अप्रैल 2011 को पाकिस्तानी अख़बारों ने एक खौफनाक आंकड़ा प्रकाशित किया। बताया गया कि सिर्फ आठ महीनों में बलूचिस्तान से 121 गोलियों से छलनी लाशें बरामद हुईं। इनमें ज़्यादातर युवा, कार्यकर्ता और छात्र थे, जिन्हें पहले सुरक्षा एजेंसियों ने उठाया था। संदेश साफ था। आवाज़ उठाओगे तो ग़ायब और मारे जाओगे। सबसे प्रतीकात्मक मामलों में से एक है जलील रेकी काए जो बलूच रिपब्लिकन पार्टी के सूचना सचिव थे। उन्हें 13 फरवरी 2009 को अगवा किया गया और 24 नवंबर 2011 को उनका बुरी तरह यातनाग्रस्त शव तुरबत के पास शिराज मांड में मिला। इसी तरह बलूच स्टूडेंट्स ऑर्गनाइजेशन (आज़ाद) के छात्र नेता संगत सना दिसंबर 2009 में गायब हुए और दो साल बाद उनकी लाश मिली जिस पर भीषण यातना के निशान थे। ये नाम अपवाद नहीं हैं। ये उन सैकड़ों परिवारों की कहानी हैं जो प्रेस क्लबों के बाहर अपने लापता बेटों की तस्वीरें लेकर इंसाफ़ की गुहार लगाते हैं।

यह डरावना सिलसिला 25 जनवरी 2014 को और गहरा गया, जब खुज़दार ज़िले के तोतक गांव के पास ग्रामीणों को बिना नाम वाले सामूहिक कब्रिस्तान मिले, जिनमें 100 से अधिक शव दबे थे। एमनेस्टी इंटरनेशनल ने तुरंत एक स्वतंत्र और निष्पक्ष जांच की मांग की लेकिन कभी कोई ठोस जांच नहीं हुई। आज तक तोतक कब्रें बलूचिस्तान के

अनदेखे नरसंहार की खौफ़नाक निशानी बनी हुई हैं।

दमन सिर्फ गुप्त अपहरणों तक सीमित नहीं रहा। दिसंबर 2023 में हज़ारों बलूच महिलाएं और युवा तुरबत से इस्लामाबाद तक पैदल मार्च पर निकले, अपने लापता परिजनों की रिहाई की मांग करते हुए। राज्य ने लाठीचार्ज, वाटर कैनन और बड़े पैमाने पर गिरफ्तारियों के रूप में कठोर प्रतिक्रिया दी। रिपोर्टों में पुष्टि हुई कि लगभग 290 प्रदर्शनकारियों को हिरासत में लिया गया, हालांकि दबाव के चलते बाद में छोड़ दिया गया। इनमें डॉ. महरांग बलूच और सम्मी दीन बलूच जैसी महिलाएं भी थीं जो बलूच प्रतिरोध की प्रतीक बन चुकी हैं।

यह सिलसिला जुलाई 2024 में फिर दोहराया गया। जब बलूच कार्यकर्ता बलूच राजी मुची सभा के लिए ग्वादर जा रहे थे, तो मस्तुंग के पास अर्धसैनिक बलों ने गोलियां चलाईं, जिसमें कम से कम 14 लोग घायल हुए। अगले ही दिन ग्वादर में दमन और भी ख़ूनी हो गया। मानवाधिकार समूहों ने तीन मौतों और सैकड़ों गिरफ्तारियों की पुष्टि की। एमनेस्टी इंटरनेशनल ने तुरंत बयान जारी कर पाकिस्तान से बलूच विरोधों पर उसके बार-बार होने वाले दंडात्मक दमन को खत्म करने की अपील की लेकिन हिंसा जारी रही। जनवरी 2025 तक हालात और बिगड़ गए। बलूच यकजेहती कमेटी ने सिर्फ एक महीने में 88 नए ग़ायब होने के मामले दर्ज किए, जिनमें सबसे ज़्यादा 43 मामलेसिर्फ मकरान से थे। इसी लहर के दौरान अग्रिम पंक्ति की आवाज़ें भी निशाना बनीं, जिनमें डॉ. महरांग बलूच की मार्च 2025 में गिरफ्तारी शामिल है। इस पर संयुक्त राष्ट्र के विशेषज्ञों को हस्तक्षेप करना पड़ा और उनकी रिहाई की मांग करनी पड़ी।

दुनिया बलूचिस्तान को सिर्फ पाकिस्तान का आंतरिक मामला मानकर अनदेखा नहीं कर सकती। यह केवल एक प्रांतीय असंतोष का विषय नहीं है। यह मानवाधिकारों का संकट है जो इसी समय घटित हो रहा है। आंकड़े चौंकाने वाले हैं। 2011 से पाकिस्तानी जांच आयोग में 10078 ग़ायब होने के मामले दर्ज हुए, जिनमें से 2752 केवल बलूचिस्तान से हैं। स्वतंत्र कार्यकर्ताओं का कहना है कि असली संख्या इससे कहीं ज़्यादा है। हर मामला सिर्फ़ एक लापता इंसान नहीं, बल्कि एक टूटा हुआ परिवारए खामोश किया गया समाज और हाशिये पर धकेला गया समुदाय है।

आगे का रास्ता

आगामी मानवाधिकार परिषद की बैठक में अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को पाकिस्तान से ये मांग करनी चाहिए। जबरन ग़ायब करने को आईसीपीपीईडी के अनुरूप अपराध घोषित किया जाए। कार्य समूह को बिना किसी रोक-टोक के बलूचिस्तान जाने और फॉलो-अप विज़िट करने की अनुमति दी जाए। तोतक सामूहिक कब्रों और 2006 से अब तक के सभी 'मारो और फेंको' मामलों की जांच के लिए एक स्वतंत्र आयोग गठित किया जाए। उन बलूच परिवारों को सुरक्षा दी जाए, जो संयुक्त राष्ट्र के मंचों से अपनी बात रखते हैं ताकि उनके ख़िलाफ़ कोई प्रतिशोध न लिया जाए।

दिल्ली आर.एन.आई. नं. 40474/83
पंजाब केसरी
दिल्ली कार्यालय :
फोन आफिस: 011-30712200, 45212200,
प्रसार विभाग: 011-30712224
विज्ञापन विभाग: 011-30712229
सम्पादकीय विभाग: 011-30712292-93
मैगजीन विभाग: 011-30712330
फैक्स : 91-11-30712290, 30712384, 011-45212383, 84
Email: Editorial@punjabkesari.com

स्वत्वाधिकारी दैनिक समाचार लिमिटेड, 2-प्रिंटिंग प्रेस कॉम्पलैक्स, नजदीक वजीरपुर डीटीसी डिपो, दिल्ली-110035 के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक अनिल शारदा द्वारा पंजाब केसरी प्रिंटिंग प्रेस, 2-प्रिंटिंग प्रेस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से मुद्रित तथा 2, प्रिंटिंग प्रेस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से प्रकाशित।

हिंसा के परिणाम कभी भी अच्छे नहीं निकलते हैं।
-मार्टिन लूथर

उपराष्ट्रपति केवल संसद के ऊपरी सदन के सभापति ही नहीं होते, वह सांविधानिक पद सोपान में दूसरे सबसे ऊंचे पद पर भी आसीन होते हैं। ऐसे में नए उपराष्ट्रपति से यह उम्मीद की जा सकती है कि उनकी शालीनता और संगठनात्मक अनुभव संसदीय शुचिता का संबल बनेंगे।

नए उपराष्ट्रपति

राजनीति में कुछ चुनाव ऐसे होते हैं, जो केवल पदों की पूर्ति भर नहीं होते, अलबत्ता ये व्यापक राजनीतिक संकेतों और रणनीतियों के प्रतीक बन जाते हैं। सीपी राधाकृष्णन का उपराष्ट्रपति चुना जाना कुछ ऐसा ही है। जब राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) ने उन्हें अपना उम्मीदवार चुना, तो यह फैसला कइयों के लिए अप्रत्याशित था, क्योंकि चर्चा में तमाम वरिष्ठ नेताओं के नाम थे, लेकिन प्रधानमंत्री मोदी और भाजपा नेतृत्व ने उन्हें चुनकर राजनीति में सरप्राइज फैक्टर वाली अपनी रणनीतिक शैली का पुनः परिचय दिया। पूर्व उपराष्ट्रपति जगदीप धनखड़ ने जिन हालात में पद छोड़ा, उसके बाद बनी जिन विशेष परिस्थितियों में यह चुनाव हुआ, उसमें राधाकृष्णन का जीतना महत्वपूर्ण है। हालांकि, उनका चुनाव जीतना बिल्कुल अप्रत्याशित नहीं है। खासकर, बीजू जनता दल (बीजद), भारत राष्ट्र समिति (बीआरएस) और शिरोमणि अकाली दल जैसे क्षेत्रीय राजनीतिक दलों द्वारा चुनाव से किनारा कर लेने से उनकी जीत तय मानी जा रही थी। लंबे समय से भाजपा से जुड़े रहे राधाकृष्णन तमिलनाडु में पार्टी अध्यक्ष रह चुके हैं। ऐसे में उनका उपराष्ट्रपति चुना जाना भाजपा के निष्ठावान कार्यकर्ताओं को संदेश तो देता ही है, उनकी कर्तव्यनिष्ठ, सादगीपूर्ण और ईमानदार छवि अन्यथा भी उन्हें उच्च सांविधानिक पद के लिए उपयुक्त बनाती है। दरअसल, वह एक ऐसे नेता हैं, जो सहमति निर्माण में विश्वास रखते हैं, जैसा कि उनके राज्यपाल काल में भी देखा जा सकता है। ऐसे में, उनके नेतृत्व में राज्यसभा की कार्यवाही अधिक समावेशी और उत्पादक हो सकती है, खासकर जब पक्ष और विपक्ष के बीच तकरार के चलते संसद के कामकाज ठप होने की एक निंदनीय परंपरा-सी बनती दिख रही हो। दूसरी तरफ, राधाकृष्णन का उपराष्ट्रपति बनना, भाजपा की दक्षिण की राजनीति में बदलाव का संकेत बन सकता है। तमिलनाडु की राजनीति लंबे समय तक द्रविड़ पार्टियों-द्रमुक और अन्नाद्रमुक के इर्द-गिर्द घूमती रही है, जहां भाजपा अब भी सीमांत

खिलाड़ी ही है। यह 1984 के बाद पहला अवसर है, जब तमिलनाडु से कोई उपराष्ट्रपति बना है। इससे भाजपा को यह दिखाने का अवसर मिलेगा कि तमिलनाडु या दक्षिण भारत की आवाज अब राष्ट्रीय स्तर पर सर्वोच्च मंचों पर सुनी जाएगी। लिहाजा राधाकृष्णन की जीत आसन्न चुनावों में भाजपा के लिए नई संभावनाओं के द्वार खोल सकती है। हालांकि, उपराष्ट्रपति केवल संसद के ऊपरी सदन यानी राज्यसभा के सभापति ही नहीं होते, वह सांविधानिक पद सोपान में दूसरे सबसे ऊंचे पद पर भी आसीन होते हैं। ऐसे में अपने पूर्ववर्ती से बिल्कुल उलट स्वभाव के नए उपराष्ट्रपति से यह उम्मीद की जा सकती है कि उनकी शालीनता और संगठनात्मक अनुभव संसदीय शुचिता के संबल बनेंगे।

किस ओर जा रहा नेपाल

सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स पर से प्रतिबंध हटाने के बावजूद हिंसा के बीच अंततः ओली को इस्तीफा देना पड़ा। काठमांडो के लिए जरूरी है कि वह शीघ्र ही प्रदर्शनकारियों की शिकायतों को दूर करे, क्योंकि किसी देश में जब आंतरिक विद्रोह की स्थितियां इस स्तर पर पहुंच जाती हैं, तब अंतरराष्ट्रीय शक्तियां भी इसमें अपने हित देखने लगती हैं।

लगता है कि नेपाल के पूर्व प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली भी बांग्लादेश की शेख हसीना के रास्ते पर चल पड़े हैं, और उनकी राजनीतिक दिशा उथल-पुथल के साथ समाप्त हो रही है। देश में व्याप्त भ्रष्टाचार, कोविड के बाद की स्थिति से निपटने में ढिलाई और 26 सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स पर अचानक लगे प्रतिबंध से उपजी जेनरेशन जी की नाराजगी सड़कों पर फूट पड़ी।

इस हिंसा में करीब दो दर्जन लोगों की जान जा चुकी है। भीड़ ने मंत्रियों, सांसदों और यहां तक कि पूर्व प्रधानमंत्रियों के घरों को आग लगा दी, जिससे कई लोग सुरक्षित स्थानों की ओर भागने को मजबूर हो गए। वरिष्ठ नेताओं को भी नहीं बख्शा गया-नेपाली कांग्रेस के एक पूर्व प्रधानमंत्री हमले में घायल हो गए, जबकि सत्तारूढ़ नेपाल कम्युनिस्ट पार्टी (यूएमएल) और कांग्रेस के कार्यकर्ताओं को भीड़ के गुस्से का सामना करना पड़ा।

केएस तोमर
राजनीतिक विश्लेषक

पुलिस की भारी तैनाती के बीच, सेना ने हस्तक्षेप किया और प्रदर्शनकारियों से आगजनी और तोड़फोड़ बंद कर बातचीत का आह्वान किया है। नेपाल की सबसे बड़ी चुनौती सिर्फ हिंसा को दबाने में ही नहीं, बल्कि उसके नेतृत्वविहीन चरित्र में भी है। प्रदर्शनकारियों के पास बातचीत के लिए कोई पहचान योग्य नेतृत्व नहीं है। सोशल मीडिया पर प्रतिबंध का मूल विवाद पहले ही पृष्ठभूमि में चला गया है। अब नौकरियां, जवाबदेही और राजनीतिक सड़ांध से मुक्ति की बड़ी मांग की जा रही है।

फिलहाल, विशेषज्ञ सेना द्वारा सत्ता हथियाए जाने की आशंकाओं को खारिज करते हुए जोर देकर कहते हैं कि लोकतंत्र को तत्काल कोई खतरा नहीं है। लेकिन जब तक नई सरकार इस बेचैन पीढ़ी की शिकायतों को दूर करने का कोई रास्ता नहीं खोज लेती, काठमांडो की सड़कों पर आग की लपटें पहले से भी ज्यादा तेज होकर लौट सकती हैं। नेपाल हमेशा से एक ऐसा देश रहा है, जहां राजनीतिक लड़ाइयां सड़कों पर लड़ी जाती हैं। एक बार फिर वही अशांति लौट आई, लेकिन

इस बार, शाही निरंकुशता या सांविधानिक गतिरोध के कारण नहीं, बल्कि युवाओं की डिजिटल जीवनरेखा-सोशल मीडिया को बंद करने के सरकार के अचानक लिए गए फैसले के कारण अशांति फैली।

ओली प्रशासन ने सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स पर प्रतिबंध को 'डिजिटल विनियमन' कहकर उचित ठहराया, लेकिन लाखों लोगों ने उसे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और संपर्क पर हमला समझा। एक ऐसे देश में, जहां 90 फीसदी से ज्यादा इंटरनेट उपयोगकर्ता समाचार, धन-प्रेषण, पर्यटन प्रचार और यहां तक कि दैनिक व्यापार के लिए इन प्लेटफॉर्म्स पर निर्भर हैं, यह प्रतिबंध असुविधा से कहीं अधिक सामूहिक घुटन जैसा महसूस हुआ।

पूर्व प्रधानमंत्री ओली ने विरोध प्रदर्शनों को अपहृत करने और हिंसा भड़काने के लिए 'चरमपंथी तत्वों' को दोषी ठहराया। लेकिन आलोचकों का तर्क है कि सरकार के भीतर सबसे बड़ा डर अपनी पोल खुलने का था। अनियंत्रित सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पहले से ही सत्तारूढ़ नेताओं से जुड़े भ्रष्टाचार के आरोपों से भरे हुए थे, और उन पर प्रतिबंध लगाना नकारात्मक बयानों को दबाने का एक आसान तरीका लग रहा था, लेकिन नागरिकों ने इस कदम को कानूनी जरूरत नहीं, बल्कि सेंसरशिप समझा। दरअसल, एक नियामक आदेश राजनीतिक वज्रपात बन गया।

शुक्र है कि इस बार कोई भारत विरोधी आरोप नहीं लगाया गया है। काठमांडो में अपनी पोस्टिंग के दौरान, मैंने कम्युनिस्टों द्वारा भारत-विरोधी भावनाओं को बढ़ावा दिए जाते देखा। लेकिन इस बार ओली ने भारत पर उंगली उठाने से परहेज किया। यह एक महत्वपूर्ण बदलाव है, जो भारत-नेपाल संबंधों के लिए शुभ संकेत है। भारत ने अशांति की आशंका के चलते अपनी सीमा चौकियों की सुरक्षा बढ़ा दी है।

ये विरोध प्रदर्शन गंभीर समस्याओं को दर्शाते हैं। पहला, नेपाल के युवाओं के लिए सोशल मीडिया ही एकमात्र वास्तविक सार्वजनिक मंच है। इसे बंद करने का मतलब था, उनकी आवाज को दबाना। दूसरा, सोलह वर्षों में चौदह सरकारें, शासन में व्याप्त भारी भ्रष्टाचार, कोविड के बाद अर्थव्यवस्था के पटरी पर लौटाने के अधूरे वादे और बढ़ती कीमतों ने पहले ही लोगों का भरोसा खत्म कर दिया था। उस पर से इस प्रतिबंध ने आग में घी डालने का काम किया। तीसरा, सोशल मीडिया पर प्रतिबंध से पहले ही #NepoKid और #NepoBabies जैसे हैशटैग ट्रेंड कर रहे थे, जो स्थापित राजनीतिक वंशों और व्यापारिक अभिजात वर्ग के खिलाफ गुस्से का प्रतीक थे।

चौथा, यह विद्रोह बिना किसी नेतृत्व के स्वाभाविक रूप से तेजी से फैल गया, जिससे सुरक्षा बलों के लिए इसे नियंत्रित करना कठिन हो गया। पांचवां, इससे पहले इंटरनेट कानूनों को सख्त करने के प्रयासों से संदेह पैदा हुआ कि राज्य अधिनायकवादी रणनीति की ओर बढ़ रहा है। छठा, राजशाही समर्थक ताकतें, जो हाशिये पर थीं, मुख्यधारा में लौट रही हैं। कुछ महीने पहले, एक विशाल राजशाही समर्थक रैली हुई थी, जिसे राजनीतिक अस्थिरता और भ्रष्टाचार से तंग आ चुके नागरिकों का भारी समर्थन मिला। विश्लेषकों का मानना है कि ऐसे तत्वों ने विरोध प्रदर्शनों में घुसपैठ की, तथा डिजिटल विद्रोह को संगठनात्मक ताकत दी है।

वर्षों से वहां की सरकारों ने जनता का विश्वास खत्म कर दिया है, और भ्रष्टाचार तथा अभिजात्य वर्ग के पक्षपात की पृष्ठभूमि में सुधार के नारे खोखले लगते हैं। जब तक उनका प्रशासन पारदर्शिता और जवाबदेही नहीं दिखाता, सड़कों पर गुस्सा कम नहीं होगा।

यह आक्रोश केवल प्रतिबंध के विरोध में नहीं, बल्कि बिना किसी संवाद के व्यापक नियम लागू करने वाली सरकार के विरोध में है।

इस्तीफा देने से पहले ओली प्रशासन ने सोशल मीडिया से प्रतिबंध हटा लिया था, लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी थी। अब, जब तक नई सरकार शासन में संरचनात्मक विफलताओं का समाधान नहीं करती, तब तक नेपाल में विरोध, दमन और अस्थिरता का चक्र चलता रहेगा। इस बार यह चक्र सड़कों और साइबरस्पेस, दोनों पर चल रहा है।

edit@amarujala.com

जीवन धारा

महर्षि अरविंद

हर युग में इन्सान ने महसूस किया है कि उसके अंदर ऐसी सूक्ष्म शक्ति है, जो भौतिक सीमाओं को पार कर सकती है। यह शक्ति है अंत:नियंता, जो हमेशा स्वतंत्र और आनंद से भरी हुई है।

जीवन के सुख-दुख बाहरी घटनाओं की गूंज मात्र हैं

हम इन्सान होने के नाते, ज्यादातर परिस्थितियों के गुलाम हैं, और बाहरी दुनिया की संवेदनाओं तक सीमित हैं। हमारी मानसिक गतिविधियां इन बाहरी संवेदनाओं पर निर्भर करती हैं, यहां तक कि हमारी बुद्धि भी भौतिक दुनिया की सीमाओं से आगे नहीं जा पाती। जीवन के सुख-दुख बाहरी घटनाओं की गूंज मात्र हैं। यह गुलामी हमारे शरीर के वर्चस्व के कारण है। उपनिषद में कहा गया है, 'स्वयंभू ने शरीर के द्वार बाहर की ओर खोल दिए हैं, इसलिए इन्सान की आत्मा बाहर की ओर देखती है, न कि अपने भीतर। कोई-कोई बुद्धिमान व्यक्ति, जो अमरता की इच्छा रखता है, अपनी नजरें भीतर की ओर मोड़ता है और अपने भीतर की आत्मा को देखता है।'

सामान्य रूप से, जिस बाह्य, भौतिक दृष्टि से हम मनुष्य जीवन का अवलोकन करते हैं, उसमें शरीर हमारा मुख्य सहारा है।

हम यूरोपीय लोगों को कितना ही भौतिकवादी कहें, सच तो यह है कि सभी इन्सान भौतिकवादी हैं। शरीर धार्मिक जीवन को पूरा करने का एक साधन है। एक रथ है, जिसे कई घोड़े खींचते हैं, और हम इसी शरीर-रथ पर सवार होकर दुनिया के रास्तों पर चलते हैं। लेकिन शरीर को गलत महत्व देने के कारण हम अपनी शारीरिक बुद्धि को इतना बढ़ावा देते हैं कि पूरी तरह से बाहरी गतिविधियों और सतही चीजों में उलझ जाते हैं। इस अज्ञानता का परिणाम है कि हम जीवन भर गुलामी और अधीनता में रहते हैं। सुख-दुख, अच्छा-बुरा, समृद्धि और खतरा, हमें अपनी मानसिक स्थिति को उनके हिसाब से ढालने के लिए मजबूर करते हैं, और हम अपनी इच्छाओं की लहरों पर बहते रहते हैं। हम आनंद के लालच और दुख से डर के कारण दूसरों पर निर्भर हो जाते हैं। दूसरों से अपने सुख-दुख लेने के कारण हमें अंतहीन दुख और अपमान सहना पड़ता है।

इन्सान का शरीर और उसकी सीमाएं उसे नियंत्रित करती हैं, जैसे वह जेल में हो। चाहे बाहरी ताकतें, जैसे दुश्मन हों या दोस्तों के बीच रहना हो, शरीर एक जेल की तरह है, और हमारी शरीर-केंद्रित सोच (अज्ञानता) वह दुश्मन है, जो हमें कैद रखता है। यह कारावास की स्थिति मनुष्य की चिरस्थायी है। लेकिन इतिहास और साहित्य में हर जगह इन्सानों की आजादी पाने की तीव्र इच्छा दिखती है। हर युग में इन्सान ने महसूस किया है कि उसके अंदर ऐसी सूक्ष्म शक्ति है, जो भौतिक सीमाओं को पार कर सकती है। यह शक्ति है अंत:नियंता, जो हमेशा स्वतंत्र और आनंद से भरी हुई है। धर्म का उद्देश्य इस स्वतंत्रता और शुद्ध आनंद की स्थिति को प्राप्त करना है। यह वही उद्देश्य है, जिसे विज्ञान 'विकास' कहता है।

मनुष्य और पशु के बीच असली अंतर तर्क-शक्ति में नहीं है। पशुओं में भी निर्णय लेने की क्षमता होती है, लेकिन वह विकसित नहीं होती। असली अंतर यह है कि पशु पूरी तरह शरीर के अधीन होता है, जबकि इन्सान शरीर पर विजय पाने और आंतरिक स्वतंत्रता की कोशिश में अपनी मानवता को दर्शाता है। यह स्वतंत्रता ही धर्म का मुख्य लक्ष्य है, जिसे 'मुक्ति' कहते हैं।

आंतरिक आवाज सुनें

सूत्र

जीवन में सफलता पाने के लिए निरंतर बाहरी परिस्थितियों से लड़ना होता है। कठिन प्रयास करने के बाद मनचाहा लक्ष्य पा लेना ही सफलता नहीं है। यह कोई अंतिम मंजिल नहीं है। अगर आप सुविधा भोगी हो जाते हैं, तो एक समय बाद अंतहीन दुख आपको घेर सकते हैं। अपनी आंतरिक आवाज सुनें और कर्म करते रहें।

दूसरा पहलू

95 साल के हो चुके आह्न को दक्षिण कोरिया ने पकड़कर चार दशक तक जेल में रखा, पर वह अपने देश में अंतिम सांस लेना चाहते हैं।

उत्तर कोरिया में क्यों मरना चाहता है यह योद्धा

आह्न हाक-सोप बेंत के सहारे अपने घर के फर्श पर बैठे। एक ऐसा इन्सान, जो कभी जूडो का दीवाना था, दुश्मन देश दक्षिण कोरिया में चार दशक से ज्यादा जेल में रहे। उम्र के असर से आवाज भले ही लड़खड़ाती है, पर वह अब भी जोश से बताते हैं कि उन्हें अमेरिका से नफरत क्यों है? साथियों, संघर्ष, साम्राज्यवाद, उपनिवेश और आजादी जैसे उनके शब्दों से साम्यवाद के प्रति उनकी निष्ठा का अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं।

चो सांग-हुन

95 वर्षीय आह्न कहते हैं, 'मैं पूंजीवाद नाम की इस चीज को अब भी समझने का प्रयास कर रहा हूं।' उनके आसपास की दीवारों पर पेपरमैसी से बनी आकृतियां अंकल सैम और स्टैच्यू ऑफ लिबर्टी का मजाक उड़ाते हुए उन्हें धन-लोलुप, मशीनगनधारी, खून का प्यासा युद्ध-प्रेमी बता रही थीं। वह कहते हैं, 'दक्षिण कोरिया के लोगों को एहसास नहीं है कि वे गुलाम हैं और उनके नेता अमेरिकी मंजूरी के बिना कुछ नहीं कर सकते।' लाखों लोगों की जान लेने के बाद 72 साल पहले कोरियाई युद्ध समाप्त हुआ था। आह्न उस वक्त युवा थे और उत्तर कोरिया की तरफ से लड़े थे। युद्ध के दौरान दक्षिण कोरिया ने उन्हें गिरफ्तार कर 42 वर्षों तक जासूसी के आरोप में जेल में रखा। 90 के दशक के मध्य में रिहा हुए आह्न कोरियाई प्रायद्वीप से अमेरिकी सेना को हटाने के अभियान को जारी रखने के लिए दक्षिण कोरिया में ही रह गए। लेकिन अब आह्न अंतिम सांस लेने के लिए उत्तर कोरिया लौटना चाहते हैं।

आह्न के आसपास दीवारों पर बनी आकृतियां अंकल सैम और स्टैच्यू ऑफ लिबर्टी का मजाक उड़ाते हुए उन्हें खून का प्यासा बता रही थीं।

वह कहते हैं, 'दक्षिण कोरिया, जो कि अमेरिकी उपनिवेश है, में मैं मरना नहीं चाहता। मैं अपनी बची हुई सांसें स्वतंत्र देश कोरिया में लेकर अपने पुराने साथियों के साथ दफनाया जाना चाहता हूं।'

उत्तर और दक्षिण कोरिया के बीच कटुता बहुत बढ़ चुकी है, लेकिन आह्न और उनका छोटा-सा समूह अब भी इस प्रयास में लगा है कि दोनों कोरियाई देश सुलह कर लें और उनकी स्वदेश वापसी हो जाए। उनकी सेहत अच्छी रहती है, तो समूह में जाते हैं और व्हील चेयर से ही भाषण देते हैं। वह कहते हैं, 'दक्षिण कोरिया, जो कि अमेरिकी उपनिवेश है, में मैं मरना नहीं चाहता। मैं अपनी बची हुई सांसें स्वतंत्र देश कोरिया में लेकर अपने पुराने साथियों के साथ दफनाया जाना चाहता हूं।' आह्न ने जेल से रिहा होने के बाद बेटी जियोंग मी-सूक को गोद लिया था। वह भी अमेरिका विरोधी पेपरमैसी बनाकर घर पर लगाती है। हाल ही में बीमारी की वजह से अस्पताल में भर्ती हुए आह्न ने एक वीडियो में कहा, 'मुझे अफसोस है कि मैं वह काम नहीं कर पाया, जिसके लिए यहां आया था। कृपया समझें कि मैं उत्तर कोरिया का रहने वाला हूं।'

©The New York Times 2025

आंकड़े

सौर ऊर्जा

भारत में ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत बढ़ रहे हैं। बीते कुछ वर्षों में सौर ऊर्जा के क्षेत्र में बड़े स्तर पर प्रगति हुई है।

2018	25.2
2022	63.3
2023	73.3
2024	97.9
2025	119.02

आंकड़े सौर ऊर्जा क्षमता के गीगावाट में, 2025 के जुलाई तक के हैं। | स्रोत : CEA

स्वामी रामतीर्थ कहते थे, 'मैं सूर्य हूं, संसार रूपी बुढ़िया के नखरे और हावभाव मुझे मुग्ध नहीं कर सकते। गंगा किनारे भजन करने का अलग ही आनंद है।'

इस अलमस्ती का क्या कहना

स्वामी रामतीर्थ जी का जन्म पंजाब प्रांत के मुरलीवाला गांव में हुआ था। जन्म के कुछ ही दिन बाद उनकी मां का देहांत होने पर बुआ ने उनका पालन-पोषण किया। बुआ भगवान की परम भक्त थीं। उन्हें भी मंदिर और सत्संग लेकर जाती थीं। इसका असर यह हुआ कि उनके ऊपर भगवान के नाम की मस्ती छा गई। गांव की शिक्षा के बाद वह गुजरांवाला आए और वहां भगत धन्नाराम की देखरेख में शिक्षा शुरू हुई।

कॉलेज की पढ़ाई के दौरान उन्हें कई बार भूखा ही रहना पड़ता था, लेकिन भगवान के नाम का जप उन्होंने नहीं छोड़ा। हर संकट में वह मस्त रहते। ईश्वर कृपा और अप्रतिम मेधा की वजह से उन्हें छात्रवृत्ति मिलने लगी। स्नातकोत्तर करने के बाद वह अपने ही कॉलेज में प्रोफेसर बन गए, लेकिन उनके अंदर तो श्रीकृष्ण भक्ति का रस बह रहा था। वह कहते थे, 'मैं सूर्य हूं, संसार रूपी बुढ़िया के नखरे और हावभाव मुझे मुग्ध नहीं कर सकते।' छुट्टियों में मथुरा-वृंदावन जाते थे। एक दिन उनके अंदर ऐसा भक्ति भाव जगा कि उन्होंने नौकरी छोड़ दी और भगवान की भक्ति में रम गए। लोगों ने उन्हें विश्व धर्म परिषद में शामिल कर लिया और आग्रह कर अमेरिका भेज दिया। वहां भी उन्होंने लोगों को भक्ति का पाठ पढ़ाया, लेकिन ढाई वर्ष बाद वह अपने देश लौट आए और गंगा किनारे भजन करने लगे। वह कहते थे, इस अलमस्ती का क्या कहना!

अंतर्यात्रा
संकलित

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 10 सितंबर, 1950

अमेरिकी जापान से चले जाएं, जापानियों का कर रहे अपमान

अमरीकी जापान से चले जावें
जापान म जापानियों का अपमान

संवाद समिति ने कहा कि जापानी जनता अमेरिकी शासन से अब तंग आ गई है और वह चाह रही है कि उनके देश से अमेरिकी अब चले जाएं। जापान में अमेरिकियों की आलोचना करना अपराध समझा जाता है।

वंचितों की सत्ता में भागीदारी अनिवार्य हो

राजनीतिक दल बयानबाजी से आगे बढ़कर सामाजिक न्याय को शासन के मुख्य एजेंडे में प्राथमिकता दें, जिससे समाज के अंतिम व्यक्ति तक लाभ पहुंच सके।

केसी त्यागी, पूर्व सांसद

मुद्दा

आम चुनाव, 2024 के बाद सामाजिक न्याय का मुद्दा तीव्रता से राष्ट्रीय विमर्श के केंद्र में आ गया है। इसका प्रमुख कारण केंद्र सरकार द्वारा जातिगत जनगणना कराने का निर्णय लिया जाना है। कुछ राजनीतिक दल एवं सामाजिक संगठन भी इसकी मांग कर रहे थे। सरकार के निर्णय के बाद, बिहार देश का पहला राज्य है, जहां इस वर्ष विधानसभा चुनाव होना है। उत्तर भारत में विशेषकर बिहार और उत्तर प्रदेश-इन दो राज्यों में जातिगत जनगणना की मांग सर्वाधिक मुखर रही है। सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से ये दोनों राज्य भारतीय लोकतंत्र में निर्णायक भूमिका निभाते हैं।

पिछले कुछ वर्षों में इन राज्यों में सामाजिक न्याय की बहस ने राजनीतिक आख्यानों को एक नई दिशा दी है। बिहार विधानसभा चुनाव की तैयारी के साथ ही सामाजिक न्याय की चर्चाएं पुनः केंद्रीय मुद्दा बन गई हैं, लेकिन विपक्ष लगातार सत्ता पक्ष पर सामाजिक न्याय नीतियों के अपर्याप्त क्रियान्वयन को लेकर तीखी आलोचना करता आ रहा है। यद्यपि पिछड़ा वर्ग के नाम पर राजनीतिक प्रतिनिधित्व में बढ़ोतरी हुई है, परंतु इनमें

अपेक्षाकृत शिक्षित, समृद्ध और प्रभावशाली जातियों का वर्चस्व बना हुआ है, जबकि अतिपिछड़ी जातियां आज भी हाशिये पर हैं। यह संरचनात्मक बहिष्करण उन्हें नीति निर्माण, संसदीय विमर्श और महत्वपूर्ण विधायी समितियों से भी बाहर रखता है। इस कारण, उनकी विशिष्ट सामाजिक-आर्थिक जरूरतें और समस्याएं राष्ट्रीय विकास के एजेंडे में उपेक्षित ही रह जाती हैं।

जातिगत वर्गीकरण के उद्देश्य से भारत सरकार ने रोहिणी आयोग का गठन किया था। आयोग की रिपोर्ट राष्ट्रपति को भी सौंप दी गई है, पर सरकार ने अब तक रिपोर्ट संसद में प्रस्तुत नहीं की है, जिसे सार्वजनिक करने की मांग समय-समय पर उठती रही है। पिछड़ी, विशेषकर अतिपिछड़ी जातियां भारतीय राजनीति में हाशिये पर बनी हुई हैं। इसका एक मुख्य कारण यह है कि इस वर्ग के भीतर बहुलता, विविधता व असमानताएं गहरे स्तर पर हैं। हर जाति की विशिष्ट सामाजिक-आर्थिक व सांस्कृतिक समस्याएं हैं, जिन पर न तो राष्ट्रीय राजनीति में पर्याप्त विमर्श हुआ है, और न ही इस वर्ग के अपने नेतृत्व ने ठोस वैचारिक पहल की है। वर्तमान में राजनीतिक विमर्श का एक बड़ा हिस्सा इस वर्ग के इर्द-गिर्द अवश्य केंद्रित हो गया है, पर यह विमर्श केवल चुनावी लाभ व संख्यात्मक समीकरणों तक सीमित प्रतीत होता है। परिणामस्वरूप, अपने जीवन में वास्तविक परिवर्तनकारी बदलाव लाने की अपेक्षा रखने वाला यह वर्ग, राज्य व राजनीतिक अभिजात वर्ग की प्रतिबद्धता पर आज गंभीर प्रश्नचिह्न है।

अतिपिछड़े समुदाय संख्या की दृष्टि से भारतीय राजनीति का बड़ा हिस्सा हैं, लेकिन इनके पास आज भी सशक्त सिविल सोसाइटी, व्यापक संगठनात्मक ढांचा या कोई ठोस बौद्धिक थिंक टैंक नहीं है। संसद जैसे सर्वोच्च लोकतांत्रिक मंच पर भी, जहां विभिन्न क्षेत्रों, जातियों और धर्मों से प्रतिनिधि पहुंचते हैं, इनकी आवाज लगभग सुनाई नहीं देती। हालांकि, इस वर्ग के उभरने की संभावनाएं हैं। इस वर्ग की पहली प्राथमिकता आरक्षण या राजनीति नहीं है, बल्कि इनकी समस्याएं बिल्कुल ही बुनियादी और छोटी-छोटी हैं; जैसे-चूंकि ये लोग प्रायः छोटे और खुदरा व्यापार से जुड़े हुए हैं, अतः ये रोजगार के लिए भयमुक्त वातावरण चाहते हैं; बैंक से कम ब्याज पर आर्थिक सहायता चाहते हैं; आवास की सुविधा चाहते हैं; शिक्षा हेतु विशेष सहायता, छात्रवृत्ति और छात्रावास की सुविधाएं चाहते हैं; स्वास्थ्य हेतु बुनियादी सुविधाएं चाहते हैं; राजनीति में मुख्यतः पंचायत स्तर तक प्रतिनिधित्व चाहते हैं; साथ ही राज्य स्तर पर पहचान और आत्म-सम्मान की अपेक्षा रखते हैं।

इन समूहों के लिए विशेष योजनाएं चलें, इन्हें बाजार में टिके रहने के लिए उचित प्रशिक्षण और कौशल विकास उपलब्ध हो, ताकि हाशिये पर पड़े इन सामाजिक समूहों का निरंतर आर्थिक उत्थान संभव हो सके। इसका उद्देश्य उनकी वर्गीय स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए समग्र आर्थिक विकास कार्यक्रमों को आगे बढ़ाना है। साथ ही राज्य को इन वर्गों की मानो सामाजिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए लोकतांत्रिक संस्थाओं को जनता के प्रति जवाबदेही सुनिश्चित करनी चाहिए, ताकि इन वंचित तबकों में भी इन संस्थाओं के प्रति विश्वास उत्पन्न हो सके। राजनीतिक दलों को भी केवल लोकलुभावन बयानबाजी से आगे बढ़कर सामाजिक न्याय को शासन के मुख्य एजेंडे के रूप में प्राथमिकता देनी चाहिए, जिससे समाज के अंतिम व्यक्ति तक लाभ पहुंच सके।

भविष्य में संपूर्ण भारतीय राजनीति पिछड़े और अतिपिछड़े वर्गों पर केंद्रित होने की संभावना प्रबल है, क्योंकि यह समूह भारतीय राजनीति का सबसे बड़ा मतदाता वर्ग बन चुका है, जो न केवल क्षेत्रीय राजनीति बल्कि राष्ट्रीय राजनीति को भी निर्णायक रूप से प्रभावित करने की स्थिति में आ गया है। अतः राष्ट्रीय राजनीति को अब इन समुदायों के कल्याण, सुरक्षा और विकास के इर्द-गिर्द केंद्रित होना पड़ेगा और सत्ता तथा विशेषाधिकारों में उनकी समान भागीदारी सुनिश्चित करनी होगी। अन्यथा, ये वर्ग किसी भी सरकार की स्थिरता को प्रभावित करने की भूमिका निभा सकते हैं।

-साथ में पंकज कुमार

हिन्दुस्तान
1936
सत्य • सार्थक • सदैव

ओली का इस्तीफा

पड़ोसी देश नेपाल में प्रधानमंत्री केपी शर्मा 'ओली' के इस्तीफे के बाद हालात के सामान्य होने की जितनी आशा है, उतनी ही आशंका इस बात की भी है कि कहीं यह नवोदित लोकतंत्र बांग्लादेश की तरह अस्थिरता और अराजकता की खोह में न भटक जाए। नेपाल से आ रही खबरों और दृश्यों से इतना तो साफ हो गया है कि नौजवान पीढ़ी (जेन जेड) का आक्रोश सिर्फ सोशल मीडिया के नियमन को लेकर नहीं है, बल्कि यह समूचे राजनीतिक वर्ग व तंत्र के खिलाफ है। राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, पूर्व प्रधानमंत्री और विभिन्न दलों के नेताओं के घरों व दफ्तरों में आगजनी की दुखद घटनाएं इसी बात की तस्दीक करती हैं। कोलंबो और ढाका में सत्ताधारी दल के नेता निशाने पर थे, लेकिन काठमांडू में विपक्षी नेताओं पर भी हमले की वारदातें बताती हैं कि लोगों की निराशा कितनी गहरी है। साल 2008 में गणराज्य बनने के बाद से अब तक नेपाल में 13 प्रधानमंत्री बन चुके हैं और इसी से स्पष्ट हो जाता है कि वहां के राजनीतिक वर्ग की क्या प्राथमिकताएं रहीं! इसलिए ताजा उथल-पुथल के पीछे भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, महंगाई, बेरोजगारी जैसे कारक गिनाए जा रहे हैं, तो इसको सिरे से नकारा नहीं जा सकता।

इसमें कोई दोराय नहीं कि दुनिया भर में, खासकर विकासशील देशों में शिक्षा और जागरूकता के प्रसार के साथ-साथ लोगों, विशेषकर नौजवान पीढ़ी की अपेक्षाएं बढ़ रही हैं। विकसित देशों के पास संसाधनों की कोई कमी नहीं, इसलिए वे अपनी कल्याणकारी योजनाओं के जरिये अपने नौजवानों की अपेक्षाओं का प्रबंधन कर लेते हैं। लेकिन आर्थिक रूप से कमजोर मुल्कों की सरकारों के लिए यह एक बड़ी चुनौती बनती जा रही है। ऐसे में, वे सुशासन के जरिये ही अपने लोगों के विश्वास को बनाए रख सकती हैं और पारदर्शिता इसकी पहली शर्त है। विडंबना यह है कि अपने पड़ोसी देशों के हालात से भी ओली सरकार ने कोई सबक नहीं सीखा। गौर कीजिए, श्रीलंका के पूर्व राष्ट्रपति विक्रमसिंघे हाल ही में गिरफ्तार किए गए थे और पाकिस्तान के पूर्व प्रधानमंत्री इमरान खान भ्रष्टाचार के मामले में अभी जेल में हैं। थाईलैंड की शीर्ष अदालत ने पूर्व प्रधानमंत्री थाकसिन शिनावात्रा को कल ही कदाचार के मामले में एक साल की कैद की सजा सुनाई है।

श्रीलंका, बांग्लादेश के बाद अब नेपाल में सरकार को अपदस्थ करने के लिए हिंसा का सहारा लेना चिंताजनक इसलिए है कि कहीं यह लोकप्रिय संस्कृति न बन जाए।

श्रीलंका, बांग्लादेश के बाद अब नेपाल में सरकार को अपदस्थ करने के लिए जिस तरह से हिंसक विरोध या विद्रोह का सहारा लिया गया, वह चिंताजनक इसलिए है कि इस उप-महाद्वीप में कहीं यह लोकप्रिय संस्कृति न बन जाए। दक्षिण एशियाई देशों में भारत को छोड़कर कोई भी मुल्क लोकतंत्र होने का दावा नहीं कर सकता। ऐसे में, भारत के लिए यह विशेष चिंता की बात है कि पड़ोसी देशों की अराजकता की आंच को वह अपनी चौहद्दी में प्रवेश करने से रोके। नेपाल से चूंकि हमारा सबसे करीबी रिश्ता रहा है और दोनों देशों में नागरिकों की आवाजाही भी पूरी तरह खुली हुई है, इसलिए यह चुनौती और गंभीर है। अगर वहां जल्द शांति कायम नहीं होती, तो बिहार, उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड के सरहदी इलाकों पर विशेष निगरानी की आवश्यकता होगी। निस्संदेह, नेपाल में आज जो कुछ हो रहा है, इसके लिए केपी शर्मा 'ओली' मुख्य रूप से जिम्मेदार हैं। अपने शासन की खामियों से ध्यान भटकाने के लिए वह अक्सर भारत विरोधी उग्र राष्ट्रवाद का कार्ड खेलते रहे, आज उनकी सत्ता उसी चरम राष्ट्रवादी अराजकता की शिकार हो गई है। उनकी सरकार के इस पतन में दुनिया के शासकों के लिए कई अहम सबक हैं, अगर वे सीख सकें।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 10 सितंबर, 1950

सुरक्षा परिषद में वाग्युद्ध

सुरक्षा परिषद में भी कोरियाई रणक्षेत्र के समान भयंकर युद्ध हो रहा है, अंतर केवल इतना है कि एक स्थान में वाग्युद्ध हो रहा है, तो दूसरे में शस्त्रों से लड़ाई। यदि ऐसी स्थिति नहीं होती, तो सुरक्षा परिषद को आज हम दूसरे ही रूप में देखते और उसके आदेश से कोरिया का युद्ध बन्द हो गया होता।

इस कटु सत्य से आज कौन आंखें मूंद सकता है कि सुरक्षा परिषद, जो कि संसार की सबसे अधिक जिम्मेदार संस्था समझी जाती है, उत्तरदायित्व, विवेक तथा संयम के उस वातावरण में कार्य नहीं कर रही, जिसमें उसे करना चाहिये। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि रूस ने 44वीं बार अपने निषेधाधिकार का प्रयोग किया है। संयुक्त राज्य अमरीका ने प्रस्ताव रखा था कि उत्तरी कोरिया को कोई देश सहायता न दे। प्रस्ताव में संयुक्त राष्ट्र संघ के आदेश की अवज्ञा करने के लिए भी उत्तरी कोरिया की निन्दा की गई थी। प्रस्ताव के पक्ष में 9 मत आये। युगोस्लाविया तटस्थ रहा तथा रूस ने विपक्ष में मत दिया।

जब संयुक्त राष्ट्र संघ की ओर से उत्तरी कोरिया आक्रमणकारी देश घोषित किया जा चुका है, तब अमरीकी प्रस्ताव युक्तिसंगत था, लेकिन निषेधाधिकार के प्रहार से यह भी वंचित न रहा। इसके बाद सुरक्षा परिषद में रूस के उस प्रस्ताव पर विचार प्रारम्भ हुआ, जिसमें कोरिया की 'शांतिपूर्ण जनता पर बर्बर तथा अमानुषिक बम-वर्षा' की निन्दा करते हुए अमरीका को इस प्रकार की बमबारी बन्द करने को कहा गया था। श्री मलिक ने अमरीका के इस कार्य को हिटलर के 'पूर्ण युद्ध' की कार्रवाई के समान बताया। इस प्रस्ताव पर भी पहले प्रस्ताव के समान मत आये और यह अस्वीकृत हो गया।

जहां तक प्रस्ताव को भारत का समर्थन मिलने का प्रश्न है, श्री बेनेगल नरसिंह राव ने स्थिति स्पष्ट कर दी। उन्होंने कहा कि कोरिया में बम-वर्षा के समाचारों से भारत में बड़ा क्षोभ फैला है और इस संबंध में प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू भी अपनी भावना को दृढ़ता से प्रकट कर चुके हैं। लेकिन बिना जांच किये हुए यह कैसे स्वीकार किया जा सकता है कि रूसी अभियोग बिलकुल सत्य है। हां, इस बात का अवश्य ध्यान रखा जाना चाहिए कि बम-वर्षा के बारे में अन्तर्राष्ट्रीय नियमों का पूर्ण पालन किया जाये।

बगावत से बेपटरी न हो जाए नेपाल

नेपाल में कोई मोहम्मद यूनुस या रानिल विक्रमसिंघे जैसा चेहरा अंतरिम सरकार की जिम्मेदारी संभाल सकता है। इसमें वही सफल होगा, जिसकी छवि साफ-सुथरी होगी।

यहां स्कैन करें

एस डी मुनि | पूर्व राजदूत व प्रोफेसर, जेएनयू

दो दिनों के जन-विद्रोह में नेपाल ने वह सब कुछ देखा, जिसे किसी भी लोकतंत्र के लिए शुभ नहीं माना जाता। फिर चाहे सांविधानिक भवनों को आग से हवाले करना हो या सरकारी इमारतों पर कब्जा करना या मंत्रियों को सड़क पर दौड़ाना- ये सब संकेत थे कि हालात हाथ से निकल चुके हैं और इसका एकमात्र हल सत्ता परिवर्तन है। आखिरकार मंगलवार दोपहर प्रधानमंत्री केपी शर्मा 'ओली' ने पद छोड़ने का एलान कर दिया। देर शाम राष्ट्रपति के इस्तीफे की अपुष्ट खबर भी आने लगी।

दरअसल, फिलीपींस, इंडोनेशिया, श्रीलंका और बांग्लादेश में हुए जन-विद्रोहों की अगली कड़ी नेपाल है। कुछ मामलों में यहां के हालात कहीं अधिक गंभीर हैं, क्योंकि विरोध-प्रदर्शनों में कई जानें जा चुकी हैं। मौत की इतनी खबरें किसी अन्य आंदोलन से नहीं आई थीं। बांग्लादेश में बेशक कुछ जानें गई थीं, लेकिन वह आंदोलन से पहले की बात थी, और बाद के दिनों में जो मृत्यु हुई, उसकी वजह कुछ और थी।

श्रीलंका और बांग्लादेश की तरह नेपाल में भी विरोध-प्रदर्शन का जिम्मा 'जेनरेशन-जेड' ने संभाला, यानी वे युवा, जो 1997 से 2012 के बीच पैदा हुए हैं और जिनको इंटरनेट, सोशल मीडिया व स्मार्टफोन के युग में पली-बढ़ी पीढ़ी माना जाता है। ऊपरी तौर पर यह आंदोलन फेसबुक, एक्स, इंस्टाग्राम, वाट्सएप जैसे 26 सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म को बंद करने के सरकारी फरमान के खिलाफ दिख रहा था, लेकिन असली वजहें रहीं- गठबंधन सरकार की अक्षमता और उसका भ्रष्टाचार। प्रदर्शनकारी इस मांग पर अड़े रहे कि ओली और उनके अन्य नेता अपना रवैया बदलें, अन्यथा पद छोड़कर चले जाएं।

वास्तव में, पूरे दक्षिण एशिया की यही स्थिति है। तमाम हुकूमतें अपने दायित्वों का ईमानदारी से निर्वहन नहीं कर रहीं, जिसके कारण जनता की आकांक्षाएं पूरी नहीं हो पा रहीं। लोगों की तकलीफें जब बढ़ती हैं, तो उनमें नाराजगी पनपती ही है, और धीरे-धीरे यही गुस्सा उन्हें विद्रोह करने को मजबूर करता है। श्रीलंका, बांग्लादेश और नेपाल में यह आक्रोश हकीकत बन चुका है, जबकि पाकिस्तान व म्यांमार में कुछ हद तक यह आकार लेता दिख रहा है। युवाओं को रोजगार नहीं मिल रहा, उनकी पढ़ाई-लिखाई बाधित हो रही है और दूसरे देशों में पलायन के लिए लोग मजबूर हो रहे हैं।

नेपाल में भाई-भतीजावाद और परिवारवाद ने भी हालात बदतर बनाए हैं। नेपाली कांग्रेस के अध्यक्ष शेर बहादुर देउबा साल 1995 के बाद से पांच बार प्रधानमंत्री बन चुके हैं, फिर भी उनकी पत्नी आरजू राणा देउबा ओली सरकार (जो नेपाली कांग्रेस और सीपीएन-यूएमएल के गठबंधन से बनी थी) में विदेश मंत्री थीं। उन्होंने हालिया आंदोलन के बाद अपना इस्तीफा दिया है। उनके बेटे जयवीर सिंह देउबा के लिए तो मानो सरकारी खजाना खुला हुआ था। यही काम पुष्प कमल दहाल प्रचंड ने किया है और यही आरोप केपी शर्मा 'ओली' पर भी है। इन तीनों नेताओं पर अपने कुनबे को आगे बढ़ाने और पैसे बटोरने के आरोप हैं, और दुर्भाग्य से करीब दो दशकों से नेपाल की राजनीति इन्हीं तीन नेताओं के इर्द-गिर्द घूमती रही है। इनकी फितरत भ्रष्टाचार करना और किसी न किसी तरह से सत्ता में बने रहना रही है। यहां तक कि खुद इनकी पार्टी के लोग इनसे आजीज आ चुके थे।

अब इस देश की दिशा क्या होगी? विकल्पहीनता की बात बेमानी है, क्योंकि ऐसे किसी आंदोलन से कोई न कोई विकल्प तैयार होता ही है। श्रीलंका में 2022 के आंदोलन के बाद रानिल विक्रमसिंघे को कार्यवाहक राष्ट्रपति बनाया गया था, जबकि 2020 के चुनाव में उनकी पार्टी यूएनपी एक भी सीट नहीं जीत सकी थी, वह खुद तक हार गए थे, लेकिन बाद में कम्युलेटिव नेशनल वोट के आधार पर यूएनपी को आवंटित राष्ट्रीय सूची के माध्यम से संसद पहुंच सके। हो सकता है कि नेपाल में भी कोई अंतरिम सरकार बने, जो अगले चार-छह महीनों में चुनाव कराने की घोषणा करे। इस तरह, जो आगामी चुनाव होगा, उसमें उभरने वाले नए नेतृत्व में लोगों का भरोसा हो सकता है।

नेपाल में फौज शायद ही सत्ता संभालने के लिए आगे आएगी। दरअसल, दक्षिण एशिया में पाकिस्तान ही एक ऐसा देश है, जहां का फौजी नेतृत्व सत्ता संभालने का इच्छुक दिखता है। हालांकि, पाकिस्तानी सेना अब यह समझ गई है कि लोग उसे पसंद नहीं करते, इसलिए अब वह यह काम अपने किसी 'मुखौटे' के जरिये करती है, जो कहने के लिए लोकतांत्रिक रूप से देश का प्रतिनिधित्व करता है। श्रीलंका और बांग्लादेश में भी विद्रोह के बावजूद फौज ने ऐसा कोई प्रयास नहीं किया था। वास्तव में, दक्षिण एशिया का यही चरित्र है कि यहां किसी सेना प्रमुख के लिए शासन स्थापित करना आसान नहीं। अगर वह जैसे-तैसे सरकार बना भी ले, तो शायद ही टिक सकता है।

ऐसी सूरत में नेपाल में कोई मोहम्मद यूनुस या रानिल विक्रमसिंघे जैसा चेहरा अंतरिम सरकार की जिम्मेदारी संभाल सकता है। कार्यवाहक सरकार में वही राजनेता शामिल हो सकेंगे, जिनकी छवि साफ-सुथरी होगी। मुमकिन है, प्रदर्शन करने वाले किशोरों-नौजवानों के नुमाइंदे भी इस अंतरिम सरकार का हिस्सा बनें।

इस पूरे प्रकरण में चीन की कोई स्पष्ट भूमिका नहीं दिख रही। अगर कोई बाहरी कारक जिम्मेदार है भी, तो वे उन सोशल मीडिया मंचों के कर्ता-धर्ता हो सकते हैं, जिनको नेपाल सरकार ने प्रतिबंधित किया था, क्योंकि इससे उनकी आमदनी प्रभावित हो रही थी। जाहिर है, ये अमेरिकी मंच हैं, और श्रीलंका व बांग्लादेश में सत्ता-परिवर्तन के पीछे हमने अमेरिका का हाथ देखा है। हालांकि, अभी नेपाल को लेकर दावे से अमेरिकी दखलंदाजी की बात नहीं कही जा सकती, क्योंकि ऐसा कोई प्रमाण अब तक सामने नहीं आया है।

इस पूरे घटनाक्रम का भारत पर भी असर पड़ सकता है। हालांकि, हमारी सरकार ने बयान जारी करके शांति से मसले का समाधान निकालने की वकालत की है, लेकिन इस उथल-पुथल से सीमावर्ती इलाकों में पड़ने वाले प्रभाव से वह गाफिल नहीं है। 1996 से 2006 तक चले माओवाद्री विद्रोह के समय हमने देखा था कि किस तरह से लोग भागकर भारत आए थे। इस बार भी ऐसा कुछ हो सकता है। संभव यह भी है कि अस्थिरता की सूरत में चीन या अमेरिका जैसी बड़ी ताकतों का यहां हस्तक्षेप बढ़ जाए। यह स्थिति हमारे हित में नहीं होगी, लिहाजा नेपाल के नए घटनाक्रम पर हमारी पैनी नजर स्वाभाविक है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

हॉकी में एशियाई बादशाहत से बढ़ी ओलंपिक की उम्मीदें

यहां स्कैन करें

मनोज चतुर्वेदी | वरिष्ठ खेल पत्रकार

देश में भले ही हॉकी के प्रति लोगों में क्रिकेट जैसी दीवानगी न हो, पर इस खेल का लोगों का दिल से नाता जरूर है। इस खेल में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कोई भी सफलता मिलने पर खेलप्रेमियों में खुशी की लहर दौड़ जाती है। पिछले दिनों बिहार के राजगीर में हुई एशियाई हॉकी चैंपियनशिप में भारतीय टीम चैंपियन बनने में सफल रही। यह सफलता उसे आठ वर्षों बाद मिली है। पिछली बार यह खिताब दक्षिण कोरिया के नाम रहा था। इस बार भारत दक्षिण कोरिया को ही हराकर एशियाई हॉकी का चौथी बार शहंशाह बना है।

हॉकी से भारतवासियों के दिली जुड़ाव की वजह 1928 के ओलंपिक में पहली बार स्वर्ण जीतने के बाद लगातार छह ओलंपिक में स्वर्ण पदक जीतना रही है। लेकिन 1975 में विश्व कप जीतने के बाद से भारत का हॉकी में प्रदर्शन काफी समय तक गिरावट वाला ही रहा। हालात यहां तक बिगड़े कि 2008 के बीजिंग ओलंपिक के लिए भारत क्वालिफाई तक नहीं कर सका। लेकिन पिछले एक दशक से सुधार आने की शुरुआत हुई और पिछले दो ओलंपिक खेलों- टोक्यो 2020 और पेरिस 2024 में कांस्य पदक जीतकर हम अपनी खोई प्रतिष्ठा को पाने में सफल रहे हैं। अब एशिया कप खिताब जीतने से यह साफ है कि हम सही दिशा में हैं। भारत के लिए इस सफलता के मायने इसलिए भी हैं कि वह अगले साल अगस्त में होने वाले विश्व कप के लिए भी क्वालिफाई हो गया है। भारत की यह सफलता इसलिए भी संतुष्टि देने वाली है कि पिछले दिनों वह एफआईएच प्रो लीग में कमजोर प्रदर्शन करके नौ टीमों के बीच आठवें स्थान पर रहा और किसी तरह 'रेलीगेट' होने से बच पाया था। यही नहीं, भारत ने एशिया कप में भी उम्मीदों को धुंधला दिया था। लेकिन, कहा जाता है कि अंत भला तो सब भला। भारत ने पहले सुपर फोर में चीन को और फिर फाइनल में दक्षिण कोरिया को धोकर देश में खुशी की लहर पैदा कर दी।

राजगीर जैसे छोटे से शहर में एशिया कप हॉकी के सफल आयोजन से बिहार, झारखंड और ओडिशा में खेल-संस्कृति मजबूत होगी।

भारत की इस सफलता में देश के मौजूदा हॉकी संचालकों का भी हाथ है। सौभाग्य से हॉकी इंडिया की कमान दिलीप टिर्की के हाथों में है, जो खुद अपने समय के बेहतरीन फुल बैक रहे हैं। इसी का नतीजा है कि दक्षिण अफ्रीकी क्रेग फुल्टोन लंबे समय से टीम के कोच बने हुए हैं। एफआईएच प्रो लीग में खराब प्रदर्शन के बाद भी उन्हें बदलने के बारे में नहीं सोचा गया। अन्यथा करीब एक दशक पहले भारतीय हॉकी में एक दौर था, जब कोचों को फटाफट बदला जा रहा था। इसके कारण टीम समझ ही नहीं पा रही थी कि किस तरह से अपनी तैयारी करे। लेकिन अब यह स्थायित्व टीम की प्रगति में अहम भूमिका निभा रहा है।

एशियाई हॉकी चैंपियनशिप का आयोजन राजगीर जैसे छोटे शहर में करने से निश्चय ही बिहार को फायदा मिलेगा। असल में, बिहार में खेल संस्कृति कोई बहुत अच्छी नहीं है। मगर इस तरह की चैंपियनशिप के आयोजन से उसे ही नहीं, पड़ोसी प्रदेश ओडिशा और झारखंड को भी फायदा हो सकता है। असल में इन सभी क्षेत्रों में आदिवासी जमाने से हॉकी खेलते रहे हैं और उन्होंने माइकल किंडो जैसे खिलाड़ी दिए हैं। इस तरह के आयोजनों से इस क्षेत्र के युवाओं को खेल को अपनाने की प्रेरणा मिल सकती है। वैसे भी, देश में पिछले काफी समय से छोटे शहरों-कस्बों से ही ज्यादा खिलाड़ी निकल रहे हैं। राजगीर जैसे छोटे स्थान पर खेल सुविधाएं बनने से इन क्षेत्रों के खिलाड़ियों को प्रशिक्षण पाने में आसानी होगी। देश में खेल लहर पैदा करने के लिए ऐसे प्रयास बहुत जरूरी हैं।

दुनिया की दिग्गज टीमों में शुमार होने के लिए प्रदर्शन में निरंतरता बेहद जरूरी है। इसकी कमी अभी भी दिखती है। भारत यदि अगले दो सालों में आयोजित होने वाले विश्व कप, ओलंपिक और एशियाई खेलों में पोडियम पर चढ़ने के साथ कम से कम दो स्वर्ण जीत ले, तो इस खेल का देश में कायापलट होना संभव है। भारतीय टीम ने पिछले दिनों ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ उसके घर में खेली गई सीरीज में अच्छा प्रदर्शन किया। उसी तरह वह एफआईएच प्रो लीग में अच्छा प्रदर्शन करे, तब ही ओलंपिक में पदक का रंग बदलने और विश्व कप में लंबे समय बाद पदक जीतने की उम्मीदें बन सकती हैं।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

जीवन से मत भागिए

हम कभी भी अकेले नहीं होते, लोगों से और अपने विचारों से घिरे रहते हैं। जब लोग दूर भी होते हैं, तब भी संसार को अपने विचारों के परदे से ही देखते हैं। ऐसा कोई क्षण नहीं होता, या ऐसे क्षण विरल ही होते हैं, जब विचार न हो। हमें मालूम ही नहीं है कि एकाकी होने का अर्थ क्या है? समस्त साहचर्य से, सारी निरंतरता से, सभी शब्दों और छवियों से मुक्त होना क्या होता है? हम अकेले हैं, किंतु एकाकी होना हम नहीं जानते। अकेलेपन की टीस हमारे हृदय को भर देती है।

अकेलापन, गहरा अलगाव, हमारे जीवन का अंधेरा साया है। उससे दूर भागने की चेष्टा हम हर प्रकार से करते हैं, पलायन की सभी जानी-पहचानी राहों पर हम दौड़ लगाते हैं, किंतु अकेलापन हमारा पीछा करता ही रहता है और उससे हम कभी मुक्त नहीं होते। अलगाव हमारे जीवन का ढंग बन गया है; हम शायद ही किसी अन्य के साथ संयुक्त होते हैं, क्योंकि हम अपने भीतर टूटे हुए, छिन्न-विच्छिन्न और घायल हैं। हम स्वयं में पूर्ण नहीं हैं तथा किसी और से संयुक्त होना तभी संभव है, जब अपने भीतर एकत्व हो।

हम एकांत से भयभीत रहते हैं, क्योंकि वह हमारी अपर्याप्तता, हमारे अपने अस्तित्व की दरिद्रता का द्वार खोल देता है; किंतु यह एकांत ही है, जो अकेलेपन के गहराते घाव को भरता है। एकाकी चलना, विचार से, अपनी इच्छाओं के सिलसिले से अबाधित, मन की पहुंच के बाहर हो जाना है। यह मन ही है, जो हमें अलग-थलग, विभाजित करता है और सहसंवाद को काट देता है। मन को समग्र बनाया नहीं जा सकता; यह स्वयं को संपूर्ण नहीं बना सकता, क्योंकि वह प्रयास ही अलगाव की प्रक्रिया है। यह उस अकेलेपन का ही हिस्सा है, जिसे कुछ भी ढक नहीं सकता। हमारा मन अनेक चीजों से निर्मित है, और जिसे बनाया-जोड़ा गया है, वह कभी एकाकी नहीं हो सकता। एकाकीपन विचार का परिणाम नहीं है। केवल तभी, जब विचार पूर्णतः स्थिर होता है, एकाकीपन से एकाकीपन की ओर उड़ान होती है।

एक महिला कह रही थीं कि वह बहुत क्षुब्ध, बेचैन महसूस कर रही हैं, किंतु क्षुब्ध होना उनको अच्छा नहीं लगता; अनिश्चितता की पीड़ादायक अवस्था से वह बचना चाहती हैं। अपनी बेचैनी से वह इतनी आशंकित क्यों हैं? क्षुब्ध होने से क्या मतलब है और उसको लेकर आप इतनी आशंकित क्यों हैं? आपका इतना आग्रह क्यों है कि आपको शांति से ही रहना चाहिए? आप इसे समस्या क्यों बना रही हैं?

शांतिपूर्वक रहने की मांग स्वयं ही द्वंद्व है। हम में से बहुत से लोग अपने चारों ओर दीवार खड़ी कर लेना चाहते हैं, ताकि अभेद्य रह सकें, किंतु सदैव किसी रंध्र से जीवन प्रवेश पा लेता है।

शांतिपूर्वक रहने की मांग स्वयं ही द्वंद्व है।...हम में से बहुत से लोग अपने चारों ओर दीवार खड़ी कर लेना चाहते हैं, ताकि अभेद्य रह सकें, किंतु दुर्भाग्यवश सदैव किसी रंध्र से जीवन प्रवेश पा लेता है।

जे कृष्णमूर्ति

वीपी मलिक | पूर्व सेनाध्यक्ष

हजरतबल में एक पट्टिका को लेकर विवाद समझ से परे है। तीन शेरों वाला यह प्रतीक न तो 'बुतपरस्ती' है और न ही इसका कोई धार्मिक अर्थ है, फिर कुछ राजनेता उपद्रवियों का समर्थन क्यों कर रहे हैं?

अनुलोम-विलोम

नेपाल का संकट

असल वजह नई पीढ़ी में बढ़ती नाराजगी

नेपाल की सड़कों पर लोगों की उमड़ी नाराजगी एक ऐसी कहानी बयां करती है, जो सत्ता व जनता के बीच तनाव, तकनीक की ताकत, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और नई पीढ़ी के उबलते गुस्से को उजागर करती है। 4 सितंबर, 2025 को नेपाल सरकार ने फेसबुक, इंस्टाग्राम, यू-ट्यूब, वाट्सएप, एक्स समेत 26 सोशल मीडिया साइट पर प्रतिबंध लगा दिया था। सरकार ने अपने फैसले को राष्ट्रीय सुरक्षा की जरूरत और फर्जी खबरों व साइबर अपराधों पर नियंत्रण का हवाला देकर उचित ठहराया। मगर इस फैसले ने देश के नौजवानों को सड़कों पर उतरने के लिए मजबूर कर दिया। भ्रष्टाचार, असमानता व बेरोजगारी के खिलाफ पहले से सुलग रहा आक्रोश प्रतिबंधों के बाद ज्वालामुखी की तरह फट पड़ा। नतीजतन, पहले सरकार को सोशल मीडिया बहाल करके कदम पीछे खींचने पड़े और फिर मंगलवार को प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली को पद छोड़ना पड़ा।

प्रतिबंध का फैसला राष्ट्रीय हितों की आड़ में लिया गया, मगर यह जल्दबाजी में उठाया गया असंवेदनशील कदम साबित हुआ। नेपाल में जहां 2008 में लोकतांत्रिक गणराज्य की स्थापना के बावजूद भ्रष्टाचार और अस्थिरता की शिकायतें थम नहीं रही हैं, वहीं सोशल मीडिया जनता की सबसे मुखर आवाज बन चुका है। इसे बंद करना अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर सीधा प्रहार था और सरकार की प्राथमिकताओं पर सवाल खड़े करता था। हालांकि, मंगलवार के विरोध-प्रदर्शन को देखकर स्पष्ट हो गया कि यह आंदोलन महज सोशल मीडिया की बहाली का संघर्ष नहीं, बल्कि उस व्यवस्था के खिलाफ बगावत का एलान था, जो युवाओं को अवसरों से वंचित रखती है और नेताओं को जवाबदेही से बचाती है। नेपाल में 70 साल से अधिक उम्र के नेताओं पर भ्रष्टाचार के आरोप लग रहे हैं, और युवा पीढ़ी निर्णायक बदलाव की मांग करते हुए सड़कों पर है। 'हामी नेपाल' जैसे स्वतंत्र समूह ने इस आंदोलन को दिशा दी, बिना किसी पारंपरिक राजनीतिक दल के समर्थन या बाहरी एजेंडे के। यह जनता की हताशा और उम्मीद का प्रबल प्रतीक है, जो एक नए नेपाल का सपना देखता है।

नेपाल की घटना पूरे दक्षिण एशिया के लिए सबक है। सरकारों को यह एहसास होना चाहिए कि लोगों की नाराजगी कभी भी उनका तख्तापलट कर सकती है। डिजिटल युग में जनता की आवाज को दबाना असंभव है और सत्ता को जवाबदेह बनाना आज की पीढ़ी का संकल्प। इसमें कहीं कुछ चूक होती है, तो लोग सड़कों पर ही नहीं उतरेंगे, बल्कि सत्ता बदलकर ही दम लेंगे। नेपाल के इस जन-आंदोलन को हमें हल्के में नहीं लेना चाहिए।

आरके जैन 'अरिजीत', शिक्षाविद

यह संकट सुनियोजित साजिश का नतीजा

दक्षिण एशिया आज जिस उथल-पुथल से गुजर रहा है, वह किसी सामान्य जनाक्रोश का परिणाम नहीं, बल्कि सुनियोजित साजिश का हिस्सा जान पड़ता है। श्रीलंका में महिंदा राजपक्षे की सरकार को गिराने के लिए जिस तरह जनता को भड़काकर संसद और सरकारी इमारतों पर कब्जा कराया गया, और फिर बांग्लादेश में भी जिस तरह से सत्ता परिवर्तन करवाया गया, ठीक वैसा ही परिदृश्य नेपाल में भी दिख रहा है। यहां भी आखिरकार प्रधानमंत्री को अपना पद छोड़ना पड़ा है।

काठमांडू में अचानक भड़के विरोध-प्रदर्शनों के बाद जिस तरह से संसद भवन को घेर लिया गया और सोशल मीडिया प्रतिबंध से शुरू हुई मांग प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली के इस्तीफे तक पहुंच गई, वह किसी स्वतःस्फूर्त आंदोलन का संकेत नहीं, बल्कि 'जनांदोलन' के नाम पर रची गई गहरी अंतरराष्ट्रीय साजिश का हिस्सा है। खास बात यह है कि इसमें कम उम्र के युवाओं को शामिल होने दिया गया और इसे 'जेन-जेड' आंदोलन का नाम दिया गया। यानी, युवा आक्रोश को हथियार बनाकर सरकार गिराने की साजिश रची गई। नेपाल पुलिस ने मजबूरन शुरू में रबड़ की गोलियां चलाईं और आंसू गैस के गोले छोड़े, मगर बाद में बगावत बढ़ने पर उसे फायरिंग भी करनी पड़ी। नेपाल में बार-बार इस मांग का उठना कि गठबंधन सरकार को हटना ही होगा, इस बात का प्रमाण है कि नेपाल में अराजकता को सुनियोजित तरीके से हवा दी जा रही है।

यहां यह भी ध्यान देने योग्य है कि प्रधानमंत्री ओली लंबे समय से चीन के करीबी माने जाते रहे हैं। भारत की सीमाओं से सटे देशों में धीरे-धीरे सत्ता परिवर्तन करवाकर भारत विरोधी शक्तियों को मजबूत करना एक बड़े खेल का हिस्सा प्रतीत होता है। इसमें न केवल विदेशी शक्तियां शामिल हैं, बल्कि भारत के भीतर बैठे वे राजनीतिक गुट और तथाकथित बुद्धिजीवी भी सक्रिय हैं, जो हर विदेशी नैरेटिव को समर्थन देकर अपने स्वार्थ की सिद्धि करना चाहते हैं। भारत सरकार इस षड्यंत्र को भली-भांति समझ रही है और आंतरिक अराजक तत्वों की पहचान कर उन्हें कानून के दायरे में ला रही है। मगर यह काम केवल सरकार के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता। हर नागरिक का कर्तव्य है कि वह अपने आसपास ऐसे लोगों की पहचान करे और उन्हें कानून के हवाले करे। साफ है, दक्षिण एशिया में फैलाया जा रहा यह अराजकता मॉडल भारत को घेरने और अस्थिर करने की दीर्घकालिक योजना का हिस्सा है। ऐसे समय में केवल एकजुटता, राष्ट्रवाद और सतर्कता ही भारत व उसके पड़ोस को इस षड्यंत्रकारी जाल से बचा सकती हैं!

सुभाष बुड़ावन वाला, टिप्पणीकार

संपादकीय जागरण

(12) बुधवार, 10 सितंबर, 2025 : आश्विन कृष्ण – 3 वि. 2082

जीवन की सार्थकता के लिए आत्मबोध आवश्यक है

संकट में नेपाल

राजशाही के खात्मे के बाद से राजनीतिक अस्थिरता से दो-चार होता रहा नेपाल इस बार अराजकता से भी घिर गया है। चिंताजनक यह है कि इस अराजकता का अंत होता नहीं दिख रहा है। सोशल मीडिया कहे जाने वाले डिजिटल प्लेटफार्म पर पाबंदी के खिलाफ नेपाल के युवाओं ने जो विरोध प्रदर्शन शुरू किया, वह जिस तरह इस पाबंदी को हटा लिए जाने के बाद भी जारी रहा, उससे यही स्पष्ट होता है कि नई पीढ़ी का आक्रोश केवल डिजिटल मीडिया पर पाबंदी को लेकर नहीं था। इसकी पुष्टि इससे होती है कि सड़कों पर उतरे युवाओं ने अपने नेताओं के भ्रष्टाचार का उल्लेख कर उनके इस्तीफे की मांग करनी शुरू कर दी। इसके आसार नहीं थे कि उनका आक्रोश इतना उग्र रूप ले लेगा कि प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली इस्तीफा देने के लिए बाध्य हो जाएंगे, लेकिन उनके दमनकारी रवैये से ऐसा ही हुआ। उनके सत्ता से बाहर हो जाने के बाद यह प्रश्न उठ खड़ा हुआ है कि इस पड़ोसी देश का राजनीतिक भविष्य क्या होगा? नेपाल के हालात काफी कुछ बांग्लादेश के घटनाक्रम की याद दिला रहे हैं। वहां भी छात्रों ने आरक्षण नीति से आक्रोशित होकर शेख हसीना सरकार के खिलाफ जो आंदोलन छेड़ा, वह उन्हें सत्ता से बेदखल करने का जरिया बना। नेपाल में जो स्थिति बनी, उसके लिए प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली अपने अलावा अन्य किसी को दोष नहीं दे सकते। उनकी मनमानी नीतियां ही उन्हें ले डूबीं। नेपाल के लिए चिंता का विषय केवल यह नहीं कि वहां भावी अंतरिम सरकार किस रूप में गठित होगी? उसके लिए चिंता की बात यह भी है कि भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन अराजकता की राह से कैसे लौटे? नेपाल के युवाओं का आक्रोश समझ आता है, लेकिन यदि उसकी अभिव्यक्ति हिंसा से होगी तो वह संकट को और बढ़ाएगी। यह शुभ संकेत नहीं कि आक्रोशित युवा सेना की भी नहीं सुन रहे हैं। उन्हें यह देखना होगा कि नेपाल में वैसी स्थितियों का निर्माण न होने पाए, जैसी बांग्लादेश में निर्मित हुईं और जिनके नतीजे में वहां एक वर्ष बाद भी अनिश्चितता व्याप्त है। नेपाल कोविड महामारी के बाद से ही आर्थिक संकटों से घिरा है। राजनीतिक अस्थिरता ने इस संकट को और अधिक बढ़ाया। नेपाल के नेता कुछ भी दावा करें, सत्ता के लोभ में उन्होंने लोकतंत्र के साथ जैसे मनमाने प्रयोग किए, उनसे लोगों को निराशा ही हाथ लगी। यह सही समय है कि नेताओं की नई पीढ़ी नेपाल का नेतृत्व करने आगे आए और अपने पुराने नेताओं की गलतियों से सबक सीखे। भारत को नेपाल की चिंताजनक स्थितियों से सतर्क रहना होगा। उसे यह भी देखना होगा कि अस्थिरता के साथ अराजकता से घिरे नेपाल में विदेशी ताकतों और विशेष रूप से चीन का हस्तक्षेप न बढ़ने पाए।

दूरगामी निर्णय

प्रदेश सरकार जनता की सुविधाओं का ध्यान रखने में कोई कसर नहीं छोड़ना चाह रही। इस दिशा में मंगलवार को कैबिनेट का निर्णय दूरगामी साबित होगा। सरकार ने मुख्यमंत्री फेलोशिप योजना स्वीकृत करते हुए 121 फेलोज का चयन करने का निर्णय लिया है। इन्हें लोक नीति और सुशासन विषय पर दो वर्षों का प्रशिक्षण दिया जाएगा। यह कदम न केवल राज्य में सुशासन को सुदृढ़ करेगा, बल्कि नीति-निर्माण और उसके क्रियान्वयन में भी नवीनता और पारदर्शिता लाएगा। कैबिनेट ने कुल 25 प्रस्ताव स्वीकृत किए हैं, जो विकास और लोक सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण हैं। इनमें 3303 अतिरिक्त राजस्व कर्मचारी पदों का सृजन, गांव में सोलर स्ट्रीट लाइट परियोजना को पूरा करने और 176 थानों में सीसीटीवी कैमरे लगाने जैसे निर्णय महत्वपूर्ण हैं। इससे पुलिस-प्रशासन की कार्यशैली में सुधार होगा, साथ ही पारदर्शिता भी बढ़ेगी। आंगनबाड़ी सेविका और सहायिका का मानदेय बढ़ाने के साथ ही बिहार जीविका गोधन संरक्षण एवं प्रबंधन योजना के क्रियान्वयन की जिम्मेदारी जीविका को देने से महिलाएं और अधिक सशक्त बनेंगी। यह दुग्ध उत्पादन बढ़ाने में भी सहायक होगा। अगर यह योजना सफल रही तो देश के अन्य राज्यों के लिए भी अनुकरणीय साबित होगा। हालांकि, यहां यह भी ध्यान रखना होगा कि सरकार जिस अच्छी मंशा से सुधार और सुविधाओं का विस्तार कर रही है, वह उसी रूप में समय से जनता तक पहुंचे। यदि इन्हें सही ढंग से लागू किया गया तो ये राज्य के विकास में मील का पत्थर साबित होंगी।

सरकार जिस मंशा से सुधार और सुविधाओं का विस्तार कर रही, उसका लाभ जनता को मिले, यह सुनिश्चित करना होगा।

कह के रहेंगे — माधव जोशी

जागरण जनमत — कल का परिणाम

क्या नेपाल सरकार की ओर से डिजिटल मीडिया बैन करने का फैसला सही है?

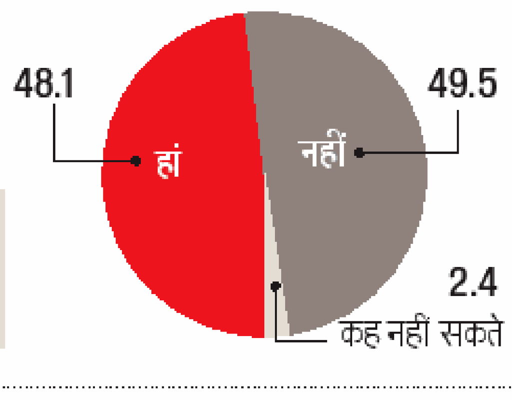

आज का सवाल

क्या नेपाल का घटनाक्रम भारत के लिए चिंता का विषय है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

बिहार के पिछड़ेपन के गुनहगार

सुरेंद्र किशोर

विकास की होड़ में पीछे रह गए बिहार ने वापसी तो की है, पर आजादी के बाद से उसे जिस उपेक्षा का सामना करना पड़ा, उसकी क्षतिपूर्ति संभव नहीं

बिहार का विकास और उसकी बदहाली इन दिनों चर्चा में है। विपक्षी खेमे से जुड़े राजद और कांग्रेस जैसे दल राज्य के पिछड़ेपन के लिए सत्तारूढ़ राजग सरकार को जिम्मेदार बता रहे हैं। उनके इस आरोप की पड़ताल की जाए तो बिहार की मौजूदा स्थिति के लिए सबसे अधिक दोषी राजद और कांग्रेस जैसे दल ही दिखेंगे। स्वतंत्रता के बाद से ही कांग्रेस के नेतृत्व वाली केंद्र सरकारों ने बिहार के साथ सौतेला व्यवहार किया। याद रहे कि अविभाजित बिहार के दक्षिणी हिस्से में देश के करीब 40 प्रतिशत खनिज संसाधन उपलब्ध थे। यही कारण है कि टाटा जैसे कारोबारी समूह ने यहां कारखाने लगाए। उत्तर बिहार की जमीन को जापान की भूमि की तरह ही उपजाऊ माना जाता है, पर केंद्र सरकार ने ऐसे प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर राज्य को प्रगति के पथ पर अग्रसर करना उचित नहीं समझा। न तो उत्तर बिहार में सिंचाई और बांध आदि का पर्याप्त इंतजाम हुआ और न ही खनिज पदार्थों के उपयोग का प्रबंध किया गया। इसके विपरीत आजादी के तत्काल बाद रेल भाड़ा समानीकरण नियम लाकर केंद्र सरकार ने खनिज संपन्न बिहार के लिए लाभ की स्थिति को सीमित कर दिया।

भाड़ा समानीकरण नियम तब समाप्त हुआ, जब लोकसभा में कांग्रेस को बहुमत मिलना बंद हो गया, पर इस बीच बिहार को करीब 10 लाख करोड़ रुपये के लाभ से वंचित रहना पड़ा। समझिए कि 1950 से 1990 तक 10 लाख करोड़ रुपये की राशि से बिहार का कितना विकास हो चुका होता? भाड़ा समानीकरण का यही अर्थ था कि रेलगाड़ी के जरिये धनबाद से खनिज पटना पहुंचाने में जितना भाड़ा लगता था, उतना ही भाड़ा मुंबई या चेन्नई तक पहुंचाने में लगता। पहले यह स्थिति नहीं थी। कहा गया कि समानीकरण इसलिए किया गया ताकि उद्योगीकरण का लाभ समान रूप से सभी राज्यों तक पहुंचे। सिर्फ उन्हीं राज्यों को नहीं, जहां खनिज पदार्थ अधिक पाए जाते हैं। समानीकरण के बाद टाटा जैसी किसी कंपनी के लिए मुंबई या गुजरात से बिहार आकर पूंजी निवेश करने की मजबूरी नहीं रह गई। केंद्र सरकार को चाहिए था कि रेल भाड़ा समानीकरण के एवज में उत्तर बिहार के खेतों को विकसित करने के काम के लिए साधन मुहैया कराती, लेकिन ऐसा भी नहीं हुआ। तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू का ध्यान उस समय पंजाब पर केंद्रित रहा।

नेहरू सरकार ने 1955 में सिंचाई के मद में पूरे देश के लिए करीब 29,106 लाख रुपये का आवंटन किया था। इस राशि में से सिर्फ पंजाब को 10,952 लाख रुपये मिले। उन्हीं दिनों कोसी बांध निर्माण योजना पर भी काम होना था।

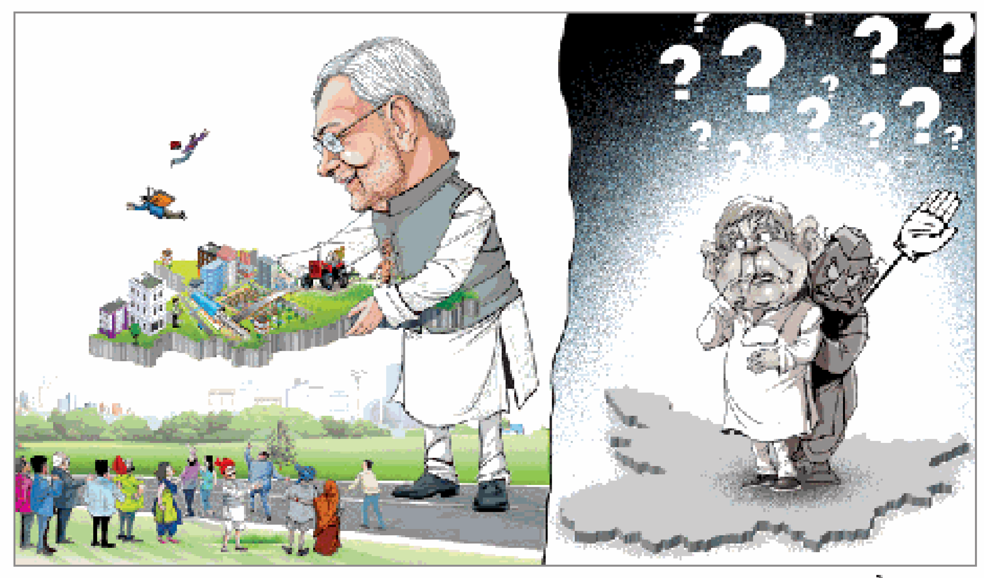

अवधेश राजपूत

पंडित नेहरू ने बिहार से कह दिया कि हमारे पास पैसे नहीं हैं, इसलिए कोसी में निर्माण के काम में स्वयंसेवी संगठनों और आम जनता से मदद ली जाए। कांग्रेस राज में बिहार की उपेक्षा के और भी आंकड़े हैं। रिजर्व बैंक बुलेटिन के अनुसार 1993-94 में जम्मू-कश्मीर के लिए प्रति व्यक्ति केंद्रीय सहायता 2,291 रुपये थी। उसी अवधि में बिहार को सहायता राशि प्रति व्यक्ति मात्र 192 रुपये मिली। जबकि तमिलनाडु को 233 रुपये, राजस्थान को 304 रुपये तथा उत्तर प्रदेश को 331 रुपये आवंटित किए गए थे। बिहार की ऐसी उपेक्षा प्रथम पंचवर्षीय योजना काल से ही शुरू हो गई थी। नतीजतन, 1971 में ओडिशा को छोड़कर बिहार देश का सर्वाधिक गरीब राज्य था। आज भी लगभग वही स्थिति है। आजादी के बाद से बिहार में कुछ सरकारी उपक्रम जरूर स्थापित हुए, लेकिन यह किसी से छिपा नहीं रहा कि वे कितने सफल रहे। इसके बजाय खेती में पूंजी लगाई गई होती तो बिहार का कहीं अधिक भला होता।

राजद और कांग्रेस जिस राजग सरकार पर आरोप लगा रहे हैं, उसके शासनकाल में ही प्रदेश का चहुंमुखी विकास हुआ। इस दौरान आंतरिक राजस्व बढ़ना जारी रहा। उसी अनुपात में केंद्र से भी सहायता राशि मिली। 2014 में केंद्र में भी राजग सरकार बनने के बाद विशेष केंद्रीय सहायता सुगम हुई। केंद्र और राज्य सरकारों के साझा प्रयासों से विकास की गति तेज हुई है। बिहार में बिजली घर-घर पहुंच गई है। सड़कों का जाल बिछा दिया गया। रोजगार के अवसर बढ़े हैं। पलायन में कमी आई है। आंकड़े खुद आर्थिक कायाकल्प की गवाही देते हैं। वित्त वर्ष 2005-06 में बिहार का बजट 26 हजार 328 करोड़ रुपये था जो, 2025-26 में बढ़कर 3 लाख 16 हजार 895 करोड़ रुपये हो गया। विकास की होड़ में पीछे रह गए बिहार ने वापसी तो की है, लेकिन आजादी के बाद उसे जिस उपेक्षा का सामना करना पड़ा, उसकी क्षतिपूर्ति संभव नहीं।

जनता के मन पर नीतीश कुमार के सुशासन की छाप स्पष्ट दिखती है। राज्य में 2005 से ही लगातार उनकी सरकार बनी हुई है। आगामी विधानसभा चुनाव से पहले 2024 के लोकसभा चुनाव में भी बिहार में राजग को भारी बढ़त मिली। गत वर्ष नवंबर में बिहार के चार विधानसभा उपचुनाव में चारों सीटों पर राजग की विजय हुई। उनमें से तीन सीटें पहले राजद-माले के पास थीं। इन दलों से सीटें छीनना कोई मामूली बात नहीं मानी जाती, लेकिन यह भी संभव हो गया। आगामी विधानसभा चुनाव की पृष्ठभूमि में बिहार के अधिकांश मतदाता विकास की ही बातें करते हैं। लालू प्रसाद-राबड़ी देवी के 15 साल के शासनकाल को याद करके ही उन्हें सिहरन होने लगती है। वे उन दिनों की वापसी कतई नहीं चाहते। राजनीतिक समीकरणों की बात करें तो लालू प्रसाद का जांचा परखा एमवाइ यानी मुस्लिम-यादव का मजबूत वोट बैंक बरकरार है। मुस्लिम वोट तो शायद ही छिटके, लेकिन यादवों का एक छोटा सा वर्ग अब राजद के प्रति पहले जैसा उत्साहित नजर नहीं आता। भाकपा-माले का साथ महागठबंधन की ताकत बढ़ा रहा है। जबकि कांग्रेस का नेतृत्व निष्क्रिय है तो वह राजद पर बहुत ज्यादा निर्भर है। कुछ छिटपुट क्षेत्रीय दलों और प्रभावशाली निर्दलीय उम्मीदवार राजग या महागठबंधन में से किसे कितना नुकसान पहुचाएंगे, यह तो भविष्य में ही पता चलेगा। हालांकि यह जरूर दिख रहा है कि बिहार के इस चुनाव में धनबल का ऐसा असर दिखने जा रहा है, जैसा पहले कभी नहीं दिखा। यह भी देखना होगा कि प्रवर्तन एजेंसियां इस पर अंकुश लगाने में कितनी सफल होंगी?

(लेखक वरिष्ठ स्तंभकार एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

response@jagran.com

बंगाल का समानांतर सेंसर बोर्ड

राजीव सचान

क्या बंगाल फाइल्स के विरोधी यह चाहते हैं कि फिल्म उनकी कथा-पटकथा के हिसाब से बनती?

एक और ऐसी फिल्म चर्चा में है, जिसे लेकर विवाद है। विवाद का कारण फिल्म की विषयवस्तु है। फिल्म बंगाल फाइल्स इस कारण विवादों में है, क्योंकि वह जिन्ना के डायरेक्ट एक्शन डे के आह्वान के बाद कलकत्ता की भयानक मारकाट (इसे ग्रेट कोलकाता किलिंग भी कहते हैं) के इर्द-गिर्द घूमती है। इस फिल्म में अगस्त 1946 की कलकत्ता और नोआखाली की भयावह हिंसा के साथ ही उस समय की राजनीतिक-सामाजिक परिस्थितियों को भी दिखाया गया है। यह वह कालखंड था, जब भारत आजादी के साथ बंटवारे की ओर भी बढ़ रहा था। 1946 में जिन्ना पाकिस्तान की मांग पर अड़े थे और कांग्रेस नेता बंटवारे से बचने में। इसी समय ब्रिटिश सरकार ने कैबिनेट मिशन भेजा था।

कैबिनेट मिशन ने अंतरिम सरकार के गठन के लिए जो प्रस्ताव तैयार किया, उससे जिन्ना आगबबूला हो उठे। उन्होंने डायरेक्ट एक्शन डे का एलान कर दिया। यह हिंसा की खुली धमकी थी। इस धमकी को अंजाम देने की शुरुआत कलकत्ता से हुई। इसका प्रमुखता से चित्रण बंगाल फाइल्स में है, लेकिन ऐसा पहली बार नहीं किया गया। कोलकाता हिंसा पर कई किताबें भी लिखी जा चुकी हैं। लाइफ पत्रिका ने 'कलकत्ता के गिद्ध' शीर्षक वाले 9 सितंबर, 1946 के अंक में कलकत्ता हिंसा की रोंगटे खड़े करने वाली तस्वीरें छापी थीं। इनमें लाशों के ढेर के सामने एक मुंडेर पर बैठे गिद्ध भी दिखते हैं।

कुछ वर्ष पहले मार्च 2014 में दस-भागों वाले टीवी सीरियल 'संविधान' को राज्यसभा टीवी पर दिखाया गया था। इस डाक्यूड्रामा के निर्माण में तत्कालीन उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी का योगदान था। इसका निर्देशन श्याम बेनेगल ने किया था। 'संविधान' के पहले ही भाग में कोलकाता और नोआखाली की हिंसा का संक्षिप्त चित्रण है। यह इसीलिए किया गया, क्योंकि जिन्ना के डायरेक्ट एक्शन डे से उपजी हिंसा के साये में ही संविधान निर्माण का कार्य आगे बढ़ा। सीरियल में अंतरिम सरकार के गठन के विरोध में जिन्ना को ऐसा उकसावे वाला भाषण देते हुए दिखाया गया है, 'अब हमने भी अपना हथियार तैयार कर लिया है और हम इसका इस्तेमाल भी करना जानते हैं। आज मैं हिंदुस्तान के सारे मुसलमानों से डायरेक्ट एक्शन की अपील करता हूं। आने वाले जुमे, 16 अगस्त से हम आर-पार की सीधी लड़ाई लड़ेंगे और हथियार तभी रखेंगे, जब मंजिले मकसूद सामने दिखाई देगी यानी हमारा प्यारा पाकिस्तान।.. मैं यहां उसूल-इखलाक की बात नहीं करूंगा। आप सभी लोग जानते हैं कि मुझे गांधी की अहिंसा-वहिंसा में कोई यकीन नहीं है।....'

बंगाल फाइल्स फिल्म के समर्थन में जुटे लोग ● फाइल

जिन्ना के भाषण के बाद स्क्रीन पर प्रकट होती हैं सीरियल की एंकर स्वरा भास्कर। वे बताती हैं, 'कैबिनेट मिशन वापस लौट गया और हिंसा के बादल चारों ओर मंडराने लगे। वायसराय वेवेल ने सारे गवर्नरों को बुलाकर पुलिस व्यवस्था को चाक-चौबंद करने को कहा, पर बंगाल के गवर्नर ने वेवेल को खबर दी कि बंगाल के मुस्लिम लीगी प्रधानमंत्री एचएस सुहरावर्दी के कहने पर उन्होंने 16 अगस्त से सारे पुलिस महकमे को छुट्टी पर भेज दिया है। 16 अगस्त, 1946 भारत के इतिहास के काले दिनों में शामिल होने जा रहा था। जिन्ना साहब की पुकार पर 16 अगस्त की सुबह हथियारबंद लोग सड़कों पर उतर आए और हत्याओं का सिलसिला शुरू हो गया।..' क्या यह बताने की जरूरत है कि जिन्ना की पुकार पर हत्याओं का सिलसिला किसने शुरू किया होगा? नहीं न! इसके बाद स्वरा भास्कर की आवाज के साथ कलकत्ता हिंसा के कुछ दृश्य स्क्रीन पर उभरते हैं। आगे नोआखाली की भीषण हिंसा और वहां गांधीजी के जाने के दृश्य हैं।

फिल्म बंगाल फाइल्स में विवेक रंजन अग्निहोत्री ने कलकत्ता हिंसा का चित्रण अपनी तरह से किया है। यदि उन्होंने कुछ गलत किया होता तो फिल्म सेंसर बोर्ड में अटकती या फिर किसी हाई कोर्ट या सुप्रीम कोर्ट ने उस पर रोक लगा दी होती। अदालत का दरवाजा खटखटाने के बाद भी ऐसा नहीं हुआ, फिर भी पश्चिम बंगाल में इस फिल्म की रिलीज पर अघोषित पाबंदी है। यह इसलिए है, क्योंकि सत्तारूढ़ तृणमूल कांग्रेस को फिल्म रास नहीं आई। वह फिल्म पर पाबंदी नहीं लगा सकती थी, इसलिए उसने अघोषित प्रतिबंध का रास्ता चुना। उसकी ओर से मल्टीप्लेक्स वालों को धमकाया गया कि यदि उन्होंने बंगाल फाइल्स दिखाई तो उनकी खैर नहीं। उन्होंने अपनी खैर मनाई। बंगाल में बंगाल फाइल्स पर अघोषित पाबंदी यही बताती है कि राज्य में सत्तारूढ़ तृणमूल कांग्रेस ने अपना समानांतर सेंसर बोर्ड कायम कर लिया है। तृणमूल कांग्रेस उन दलों में शामिल है, जिसे संविधान खतरे में दिखाई दे रहा है, लेकिन वह करणी सेना की तरह व्यवहार कर रही है। बंगाल फाइल्स पर आपत्ति अकेले तृणमूल कांग्रेस को ही नहीं, अन्य अनेक लोगों और खासकर सेक्युलर-लिबरल किस्म के लोगों को भी है। क्या वे यह चाहते थे कि बंगाल फाइल्स उनके हिसाब से बनाई जाती? पता नहीं वे क्या चाहते हैं, लेकिन उनके पास बंगाल फाइल्स न देखने की भी सुविधा है और उसे खराब फिल्म बताने की भी।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

निराशा का शमन

सकारात्मक सोच हमारे कार्य करने की क्षमता को बढ़ाता है। हमें रचनात्मक बनाता है। हमारे भीतर नवीन सामर्थ्य का संचार करता है। यह आशा की सुंगध लेकर आता है, जिससे हमें अपने कार्यों में सफलता प्राप्त होती है। इसके उलट यदि हम निराशा के जाल में फंस जाते हैं तो प्रगति की दिशा से भटक जाते हैं। तब हम जहां हैं, वहां से भी नीचे फिसल जाएंगे। निराशा हमारे संकल्पों पर ग्रहण की कालिमा लगा देती है। उसके पश्चात स्वप्न टूटने लगते हैं। हम बिखरने लगते हैं। कोई भी कार्य ठीक गति से नहीं होता। जीवन में हताशा एवं नैराश्य दस्तक देने लगते हैं।

स्मरण रहे कि आशा की किरण ही सफलता के आंगन को आलोकित करती है। एक बुजुर्ग इसी आशा में पेड़ लगाता है कि कल को आने वाली पीढ़ी इसके फलों का आस्वादन करेगी। वह यह सोचे कि उसे अब ज्यादा दिनों तक जीवित नहीं रहना है तो वह क्यों फलदार पेड़ लगाए? ऐसी स्थिति में तो वह निराशा के कूप में डूबकर तड़पने लगेगा। निराशा का तिमिर उसे कचोटने लगेगा। अगर वह निराशा की ऐसी पतवार थामे चलेगा तो मझधार में ही डूब जाएगा। जबकि आशा की सुधा जीवन को लालित्य प्रदान करती है। वह उसे आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है। निराशा का अंधकार हमारी क्षमताओं को लीलता है। हम अपनी सामर्थ्य को भूल जाते है। निराशा हमें भयाक्रांत करती है और समय के साथ उससे जुड़े भय और गहरे होते जाते हैं। इस कारण संभव दिख रही सफलता भी असंभव लगने लगती है।

जीवन में नैराश्य का मर्दन अत्यंत आवश्यक है। अन्यथा हम उन्नति नहीं कर पाएंगे। निराशा का जन्म नकारात्मकता से होता है। नकारात्मकता ही निराशा को पोषित करती है। जीवन में नकारात्मकता से दूर रहकर ही निराशा का शमन किया जा सकता है। सकारात्मकता का आवरण ही निराशा के प्रहारों से हमें बचा सकता है।

ललित शौर्य

पाठकनामा

pathaknama@pat.jagran.com

समय की आवश्यकता एनआरसी

'आधार पर आदेश' शीर्षक से प्रकाशित संपादकीय टिप्पणी में सुप्रीम कोर्ट द्वारा बिहार में आधार को मतदान हेतु मान्य प्रमाण पत्र की सूची में शामिल करने के आदेश की समीक्षा की गई है। उक्त आदेश में इस तथ्य की उपेक्षा कर दी गई है कि बड़ी आसानी से फर्जी आधार बनवाया जा सकता है। इस मामले में आधार की वैधानिकता की जांच चुनाव आयोग पर छोड़ दी गई है। आधार को मतदान का आधार बनाने से फर्जी मतदान की आशंका बहुत हद तक बढ़ सकती है, क्योंकि घुसपैठियों ने बड़े पैमाने पर नकली आधार कार्ड बनवा लिए है। ऐसी स्थिति में भारत का नागरिक होने पर ही मतदान करने की शर्त का उल्लंघन होना स्वाभाविक है, जो लोकतंत्र की शुचिता के साथ अन्याय होगा। इस विकट स्थिति में भारतीय नागरिकता रजिस्टर (एनआरसी) की आवश्यकता और महत्ता स्वप्रमाणित हो जाती है। भारतीय नागरिकता को साबित करने का इससे बेहतर तरीका नहीं हो सकता। अतः प्राथमिकता के साथ इसे अनिवार्यतः लागू किया जाना चाहिए। लोकतंत्र में फर्जी मतदान को रोकने की महती जिम्मेदारी चुनाव आयोग पर है, किंतु आधार को अनुमति दिए जाने से अब वह स्वयं असहज स्थिति में पहुंच गया है। फर्जी मतदान चुनाव परिणामों को अप्रत्याशित तरीके से प्रभावित कर सकता है। इसलिए नागरिकता के दायरे को सुनिश्चित किए बगैर चुनाव कराना किसी भी स्थिति में सही नहीं ठहराया जा सकता।

मोहित सोनी, कुक्षी-मध्य प्रदेश

सतर्क होने की आवश्यकता

घर के पड़ोस में क्या कुछ हो रहा है, उसपर नजर बनाए रखना जरूरी होता है। हमारे घर में घुसने का रास्ता हमारे पड़ोसियों के रास्तों से ही गुजरता है। कोई भी घटनाक्रम ऐसे ही नहीं होता है, बल्कि पूरी तरह से सुनियोजित होता है और जब भी पड़ोस में ऐसा कुछ हो तो हमें सतर्क हो जाना चाहिए। बांग्लादेश व नेपाल की घटनाएं मात्र संयोग नहीं हैं। किसी भी देश में अस्थिरता अक्सर बाहरी ताकतों की साजिश का नतीजा होती है, चाहे वो जियोपालिटिकल हित हो, जैसे अमेरिका या पाकिस्तान का हस्तक्षेप, या फिर आंतरिक भ्रष्टाचार का फायदा उठाकर फैलाई गई अराजकता। अर्थशास्त्र में चाणक्य (कौटिल्य) ने जिन सात अंगों की चर्चा की, उनमें मित्र से अभिप्राय पड़ोसियों से मित्रता से ही था। चाणक्य की सलाह नेपाल में हाल ही में हुए उग्र आंदोलन और कुछ माह पहले बांग्लादेश में हुए आंदोलन के संदर्भ में प्रासंगिक है। बांग्लादेश में 2024 के जुलाई-अगस्त में छात्रों के नेतृत्व में शुरू हुए विरोध प्रदर्शन ने पूरे देश को हिला दिया था, जिसके परिणामस्वरूप शेख हसीना की सरकार गिर गई और उन्हें देश छोड़कर भागना पड़ा। वह आंदोलन शुरू में सरकारी नौकरियों में आरक्षण के खिलाफ था, लेकिन जल्द ही भ्रष्टाचार, बेरोजगारी और सत्ता के दुरुपयोग के खिलाफ बड़े जन आंदोलन में बदल गया। नेपाल में भी युवा पहले इंटरनेट मीडिया पर प्रतिबंध से उग्र हुए थे।

हिमांशु कुमार झा, मधुबनी, बिहार

लोकतंत्र में समावेशी भागीदारी

2008 में राजशाही से मुक्ति पाकर नेपाल ने लोकतंत्र को अपनाया, लेकिन इन 17 वर्षों में वहां 13 सरकारें आईं। वर्तमान में प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली ने प्रधानमंत्री पद से इस्तीफा दे दिया है, उपद्रव का माहौल है। युवा सड़कों पर उतर आए हैं। व्यापक असंतोष है। इस असंतोष का तात्कालिक कारण इंटरनेट मीडिया पर प्रतिबंध लगाया जाना है। इंटरनेट मीडिया पर असंतोष की अभिव्यक्ति हो रही थी। लोकतांत्रिक सरकार बेरोजगारी दूर करने में नाकाम थी। वहीं भ्रष्टाचार चरम स्थिति में पहुंच गया था, एक तरह से नेताओं ने लोकतंत्र को कुलीनतंत्र में बदल दिया था। चीन के इशारे पर मौजूदा नेपाल सरकार ने भारत से संबंध खराब कर लिए। नेपाल के वर्तमान घटनाक्रम के बाद यह कहा जा सकता है कि भारत के पड़ोस के किसी भी देश में पूर्णतया लोकतांत्रिक सरकारें नहीं हैं। चुनाव होते हैं, परंतु केवल चुनाव ही लोकतंत्र नहीं है, अपितु लोकतंत्र में समावेशी भागीदारी एवं अधिकतम लोगों की संतुष्टि निहित है और अब तो वहां राजशाही की मांग होने लगी है, जो लोकतंत्र के पहरुओं के लिए चिंतन का विषय है। यह आंदोलन भी बांग्लादेश के प्रदर्शनों की तरह ही लगता है, युवा नेतृत्व, इंटरनेट मीडिया का इस्तेमाल और भ्रष्टाचार के खिलाफ गुस्सा। बांग्लादेश की पटकथा नेपाल में दोहराई जा रही है।

मुकेश कुमार मनन, पटना

X पोस्ट

यह माना जा सकता है कि केपी शर्मा ओली नेपाल के लिए बहुत कारगर प्रधानमंत्री नहीं रहे, लेकिन प्रदर्शनकारी नेपाल में जिस तरह से तोड़फोड़ और आगजनी कर रहे हैं, वह बहुत शर्मनाक है। ओली के इस्तीफे के बावजूद भी वे रुकने का नाम नहीं ले रहे।

स्मिता प्रकाश@smitaprakash

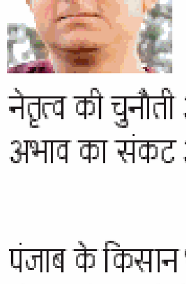

यह विडंबना ही है कि नेपाल के लोगों ने माओवादियों के नेतृत्व में राजशाही से मुक्ति पाने का अभियान चलाया, लेकिन नए सत्ताधीश भी राजाओं से बेहतर साबित नहीं हुए। अब वैकल्पिक नेतृत्व की चुनौती और बढ़ गई है। इस मोड़ पर नेतृत्व के अभाव का संकट और खतरनाक हो सकता है।

राहुल पंडिता@rahulpandita

पंजाब के किसान भारी संकट में हैं। वे फसल बीमा योजना के दायरे में नहीं आते। बर्बाद हुई उपज के लिए उनके पास कोई कारगर बीमा कवर नहीं। खेतों में जिस कदर गाद भर गई है, उसे निकालने के लिए जितने बड़े पैमाने पर मशीनरी की आवश्यकता है, उसे निजी क्षेत्र ही उपलब्ध कराने में सक्षम है। कृषि सुधारों पर दुष्प्रचार बहुत टीस देने जा रहा है। तुषार गुप्ता@Tushar15_

जनपथ

नेता सत्ता के नशे में हो जाएं भ्रष्ट,
जनता का विश्वास तब हो जाता है नष्ट।
हो जाता है नष्ट ट्रस्ट नेता से टूटे,
तो पक्का है भाग्य वहां नेता का फूटे।
जनता का रुख देख नहीं जब शासक चेता,
तब भड़का नेपाल दिख रहे पिटते नेता!

– ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व.पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त

जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5, C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पाटलिपुत्रा, पटना - 800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प. बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्रा * दूरभाष : 0612-2277071, 2277072, 2277073

E.mail : patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097* इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर वी.एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि.नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 26 अंक 150

****

{ संपादकीय }

नई दिल्ली, बुधवार 10 सितम्बर 2025

संस्थापक-सम्पादक : स्व. मायाराम सुरजन

नेपाल में फिर राजनैतिक उथल-पुथल

भारत के पड़ोसी देश नेपाल में हालात लगातार बिगड़ते जा रहे हैं। सोशल मीडिया पर प्रतिबंध के सरकार के फरमान के बाद युवाओं ने सोमवार को विरोध प्रदर्शन शुरु किया, जिसने हिंसक रूप ले लिया और एक ही दिन में कम से कम 20 नौजवानों के मारे जाने की खबर है। कुछ समय पहले बांग्लादेश और श्रीलंका इन दो पड़ोसी देशों में आंदोलन हुए थे, जिसमें अराजक भीड़ ने राष्ट्रपति निवास को निशाना बनाकर तोड़-फोड़, लूटमार मचाई थी, अब वैसे ही दृश्य नेपाल से सामने आ रहे हैं। राजधानी काठमांडू समेत कई इलाकों में आगजनी, तोड़फोड़ और पथराव की घटनाएं हुई हैं। राष्ट्रपति रामचंद्र पौडेल के निजी आवास पर प्रदर्शनकारियों ने कब्जा कर तोड़फोड़ की और आग लगा दी। इसके अलावा प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली की पार्टी के नेता रघुवीर महासेठ और माओवादी अध्यक्ष प्रचंड के घरों पर भी हमला हुआ। गृहमंत्री रमेश लेखक, कृषि मंत्री रामनाथ अधिकारी, स्वास्थ्य मंत्री समेत पांच मंत्री इस्तीफा दे चुके हैं। नेपाली सेना के प्रमुख जनरल अशोक राज सिग्देल ने प्रधानमंत्री के पी ओली को सत्ता छोड़ने की सलाह दी थी, जिसके बाद मंगलवार दोपहर श्री ओली ने इस्तीफा दे दिया। वैसे इससे पहले उनके इलाज के लिए दुबई जाने की खबर थी। प्रधानमंत्री के अलावा राष्ट्रपति ने भी अपना पद छोड़ दिया है।

गौरतलब है कि केपी शर्मा ओली की कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ नेपाल (एकीकृत मार्क्सवादी-लेनिनवादी) नेपाली कांग्रेस के समर्थन से सत्ता में है, लेकिन अब नेपाली कांग्रेस की तरफ से भी सत्ता से अलग होने या अपनी सरकार बनाने का दावा करने के संकेत नहीं मिले हैं। इस बीच काठमांडू के मेयर बालेन शाह को सोशल मीडिया पर सत्ता संभालने के लिए कहा जा रहा है, जिनकी लोकप्रियता युवाओं के बीच तो है, लेकिन क्या नेपाल जैसे चुनौतियों से भरे देश को संभालने की क्षमता क्या उनमें होगी, यह बड़ा सवाल है।

गौरतलब है कि 2008 में राजशाही के खात्मे के बाद से नेपाल लोकतंत्र को सुचारू करने के लिए जूझ रहा है। राजनैतिक अस्थिरता, मतलब के गठजोड़, सत्ता की चाहत यह सब नेपाल में लोकतंत्र को ठीक से जड़ पकड़ने नहीं दे रहे हैं। जिन लोगों के हाथों में भी सत्ता रही है, वे राजशाही का विरोध तो कर रहे हैं, लेकिन अपने नेतृत्व को भरोसेमंद नहीं बना पा रहे हैं। कमजोर अर्थव्यवस्था, महंगाई, बेरोजगारी और भ्रष्टाचार इन सबसे जनता त्रस्त होती जा रही है। खासकर आज की पीढ़ी जिसे जेन-ज़ी कहा जाता है, उसने राजशाही के दुष्प्रभाव नहीं देखे, लेकिन जिस लोकतांत्रिक सरकार को वह देख रही है, वो उसकी उम्मीदों पर पूरी नहीं उतरी है। इसलिए इस समय नेपाल में भ्रष्टाचार के खिलाफ युवाओं का गुस्सा सबसे अधिक फूटा है। सोशल मीडिया पर प्रतिबंध पर नाराजगी तो केवल आवरण है, उसके भीतर आम युवा के गुस्से का लावा उबल रहा है। इसलिए, सरकार ने प्रतिबंध वापस ले लिए, फिर भी आंदोलन शांत नहीं हो रहा है।

सोमवार से सोशल मीडिया पर हैशटैग नेपोकिड ट्रेंड में है। इस हैशटैग के साथ नेपाल के नौजवान अपने नेताओं के बच्चों की लग्ज़री कारें, ब्रैंडेड कपड़े, महंगी घड़ियां और विदेशी दौरे के वीडियो और फोटो वायरल कर रहे हैं। इन नौजवान का संदेश है कि आम आदमी ज़िंदा रहने के लिए संघर्ष कर रहा है और नेताओं के बच्चे हर सुख-सुविधा भोग रहे हैं। सोमवार को जब नौजवान संसद परिसर तक में पहुँच गए थे, तो इनका नारा था- हमारे टैक्स और तुम्हारी रईसी। इन सारे के नारों से जाहिर है कि आम का युवा, जिसके पास सोशल मीडिया के जरिए पूरी दुनिया की खबरें पहुंचती हैं, वह अब सत्ता की मनमानी या दमन को अपनी किस्मत मानकर चुपचाप सहता नहीं है, बल्कि उसके खिलाफ आवाज़ उठाता है। इस तरह के लगभग नेतृत्व विहीन आंदोलनों का भविष्य क्या होता है, इनमें किस तरह की अराजकता फैलती है, राष्ट्र की सुरक्षा पर सवाल खड़े होते हैं, ये सारी बातें चिंता की तो हैं, लेकिन इतिहास गवाह है कि इन चिंताओं की आड़ में युवा पीढ़ी के रोष को खारिज किया जाए तो इसके परिणाम और घातक हो सकते हैं।

फिलहाल नेपाल का राजनैतिक भविष्य एक बार फिर डांवाडोल दिख रहा है। बेशक प्रत्यक्ष तौर पर सोशल मीडिया प्रतिबंध और अप्रत्यक्ष तौर पर भ्रष्टाचार के खिलाफ आंदोलन खड़ा हुआ और इसमें युवा ही आगे रहे, लेकिन इसके पीछे क्या वैश्विक ताकतों का भी हाथ है, इसका विश्लेषण भी होना चाहिए। नेपाल के साथ चीन जल्द ही 10 दिन का संयुक्त सैन्य अभ्यास करने जा रहा है। भारत की सीमा से लगे नेपाल में चीन, पाकिस्तान और बांग्लादेश तीनों की गतिविधियों पर खुफिया एजेंसियों की निगाहें बनी रहती हैं, क्योंकि अन्य सीमाओं की अपेक्षा नेपाली सीमा का इस्तेमाल इनके लिए आसान रहता है। नेपाल में एकदम से जो आंदोलन के जरिए हिंसा भड़की है और सरकार अस्थिर हुई है, उसकी टाइमिंग पर भी सवाल उठते हैं, क्योंकि इस समय बिहार में चुनाव की हलचल है। सीमांत प्रदेश होने के कारण नेपाल की घटनाओं का असर बिहार पर पड़ना स्वाभाविक है। इस बात को लेकर सतर्क रहने की जरूरत है कि कहीं नेपाल के हालात का इस्तेमाल बिहार चुनाव को प्रभावित करने के लिए न किया जाए।

वैसे नेपाल में सोशल मीडिया पर प्रतिबंध लगाने के सरकार के फैसले की भारत के मीडिया में काफी आलोचना हुई। नेपाल को लोकतंत्र और अभिव्यक्ति की आजादी का पाठ कई नामचीन एंकरों ने पढ़ा दिया, लेकिन मणिपुर, जम्मू-कश्मीर जैसे राज्यों में न जाने कितने बार, कितने-कितने दिनों के लिए इंटरनेट काटा गया, तब यहां के लोगों के अधिकार मीडिया को याद नहीं आए। खैर, फिलहाल नेपाल पर अतिरिक्त सावधानी से काम लेने की जरूरत है। श्रीलंका, बांग्लादेश, पाकिस्तान और अब नेपाल भारत से लगे तमाम देशों में जिस राजनैतिक अस्थिरता या सैन्य तंत्र के हावी होने का सिलसिला चल रहा है, वो याद दिलाता है कि आजाद होते साथ जो मजबूत लोकतंत्र देश को मिला, उसकी बदौलत हम कितने चैन से रह रहे हैं।

क्या यही चुनाव आयोग का काम है?

बेशक, यह कहना तो शायद बहुत जल्दबाजी होगी कि बिहार में विशेष सघन पुनरीक्षण या एसआइआर की घोषणा के बाद से विपक्षी पार्टियों ही नहीं बल्कि सामाजिक व जनतांत्रिक अधिकार संगठनों द्वारा भी ''वोट की चोरी'' के जरिए चुनाव में हेरा-फेरी की जो आशंकाएं जतायी जा रही थीं और जनता के बीच जाकर जतायी जा रही थीं, उनका अंतत: निराकरण हो गया है। फिर भी एसआइआर के ही मामले में सुप्रीम कोर्ट के 8 सितंबर के आदेश के बाद, इतना तो निश्चियपूर्वक कहा ही जा सकता है कि इन आशंकाओं के दरवाजे एक हद तक बंद कर दिए गए हैं। यह हुआ है सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले के जरिए कि एसआइआर की प्रक्रिया पहचान के लिए प्रमाण के रूप में भारतीय चुनाव आयोग द्वारा जिन 11 दस्तावेजों को अधिसूचित किया गया है, आधार कार्ड / नंबर को उनके समकक्ष, 12वां दस्तावेज माना जाएगा।

सभी जानते हैं कि बिहार में विवादास्पद एसआइआर प्रक्रिया की शुरूआत का एलान करते हुए, चुनाव आयोग ने यह निर्धारित किया था कि मतदाता सूचियों के पुनरीक्षण के अब तक के सभी उदाहरणों के विपरीत, मताधिकार के सभी दावेदारों को नामांकन फर्म भरना होगा और जिनका समुचित नामांकन फार्म निर्धारित तिथि तक अधिकारियों को प्राप्त नहीं होगा, वे खुद ब खुद मताधिकार की दावेदारी से बाहर हो जाएंगे। पुन: जिन मतदाताओं का नाम 2003 की मतदाता सूचियों में नहीं था, उन्हें नामांकन फार्म के साथ अपनी पहचान के प्रमाण के रूप में उक्त 11 साक्ष्यों में से कोई एक पेश करना था। इन साक्ष्यों से आधार, स्वयं चुनाव आयोग द्वारा जारी किए गए मतदाता पहचान कार्ड और राशन कार्ड जैसे व्यक्ति की पहचान को प्रमाणित करने वाले ठीक उन्हीं साक्ष्यों को बाहर रखा गया था, जो सबसे ज्यादा लोगों को पास उपलब्ध हैं और सबसे ज्यादा उपयोग में आते हैं।

हैरानी की बात नहीं है कि विशेष सघन पुनरीक्षण के लिए तय की गयी इस प्रक्रिया विशेष और खासतौर पर उसके लिए सभी मतदाताओं से नये सिरे से फार्म भरवाए जाने और 2003 की मतदाता सूचियों में जिन लोगों का नाम नहीं था, उन सबसे उनकी स्थानीयता को दर्शाने वाले साक्ष्य मांगे जाने और सचेत रूप से आधार समेत सबसे आम-फहम दस्तावेजों के साक्ष्यों की इस सूची से बाहर रखे जाने से, व्यापक रूप से इस कसरत के मकसद को लेकर आशंकाएं पैदा हुई थीं। कहीं यह मतदाता सूचियों के पुनरीक्षण के नाम पर, चोर दरवाजे से राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर या एनआरसी लाने की यानी मतदाता सूची में स्थान दिए जाने को, नागरिकता की जांच के साथ जोड़ने की कोशिश तो नहीं थी? हमारे संविधान में नागरिकता का विषय, आम तौर पर चुनाव आयोग के विचार क्षेत्र में नहीं आता है। इसलिए, मतदाता सूची तैयार करने की प्रक्रिया को, नागरिकता जांच के साथ जोड़ना कतई असंवैधानिक है। वास्तव में, बिहार में एसआइआर प्रक्रिया को सर्वोच्च अदालत में दी गयी अनेक चुनौतियों में एक महत्वपूर्ण मुद्दा, इस प्रक्रिया की संवैधानिकता का है, जिस पर अदालत को अभी विचार करना ही है।

बहरहाल, एसआइआर प्रक्रिया को लेकर विचार की प्रक्रिया में, शुरूआत से ही सर्वोच्च न्यायालय का यह स्पष्ट रुख था कि पहचान के लिए स्वीकार्य दस्तावेजों में चुनाव आयोग को आधार जैसे दस्तावेजों को शामिल करना चाहिए, जिससे इस प्रक्रिया में लोगों को ज्यादा परेशान नहीं होना पड़े।

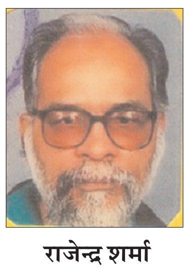

राजेन्द्र शर्मा

हैरानी की बात नहीं है कि विशेष सघन पुनरीक्षण के लिए तय की गयी इस प्रक्रिया विशेष और खासतौर पर उसके लिए सभी मतदाताओं से नये सिरे से फार्म भरवाए जाने और 2003 की मतदाता सूचियों में जिन लोगों का नाम नहीं था, उन सबसे उनकी स्थानीयता को दर्शाने वाले साक्ष्य मांगे जाने और सचेत रूप से आधार समेत सबसे आम-फहम दस्तावेजों के साक्ष्यों की इस सूची से बाहर रखे जाने से, व्यापक रूप से इस कसरत के मकसद को लेकर आशंकाएं पैदा हुई थीं।

दुर्भाग्य से चुनाव आयोग भी शुरूआत से आधार आदि दस्तावेजों को स्वीकार नहीं करने पर अड़ा हुआ था। इन हालात में, जब अदालत आदेश के बजाए, सुझाव की विनम्र भाषा का प्रयोग करते हुए, चुनाव आयोग से आधार आदि को शामिल करने की सलाह पर रुक गयी, चुनाव आयोग ने इस सलाह को जैसे अनसुना ही कर दिया।

दूसरी ओर, चूंकि अदालत इस संबंध में एकदम स्पष्ट थी कि आधार जैसे दस्तावेजों को अस्वीकार करने की चुनाव आयोग की जिद के पीछे कोई वास्तविक तर्क था ही नहीं, उसने इस प्रकरण की अलग-अलग सुनवाइयों में, कम से कम तीन बार, तरह-तरह से अपने इस मंतव्य को दोहराया कि चुनाव आयोग इन दस्तावेजों को स्वीकार करे। यहां तक कि एसआइआर की प्रक्रिया में पूरे 65 लाख लोगों के नाम बिल्कुल अपारदर्शी तरीके से काटे जाने के पहलू पर अपने फैसले में भी अदालत ने, जिन लोगों के नाम इस तरह काटे गए थे, उनकी अर्जियों पर पुनरीक्षण की प्रक्रिया के हिस्से के तौर पर विचार किये जाने का आदेश देते हुए, दस्तावेज के रूप में आधार के स्वीकार किए जाने के स्पष्ट आदेश भी दिये थे।

लेकिन, चुनाव आयोग ने इसके बाद भी अपनी जिद नहीं छोड़ी। उसने तिकड़मबाजी से सुप्रीम कोर्ट के निर्णय को विफल करने की कोशिशें जारी रखीं। अदालत के उक्त निर्णय की पृष्ठभूमि में, जब चुनाव आयोग की मशीनरी में शामिल कुछ अधिकारियों ने आधार को प्रमाण के रूप में स्वीकार करने की कोशिश की, चुनाव आयोग ने न सिर्फ इसे गलत बताया बल्कि संबंधित अधिकारियों के खिलाफ कार्रवाई भी की। और जिन मतदाताओं ने आधार का साक्ष्य के रूप में उपयोग करते हुए, मतदाता सूची में अपना नाम शामिल किए जाने की मांग की, उनके द्वारा पेश किए गए साक्ष्य को नामंजूर ही कर दिया गया। हैरानी की बात नहीं है कि 8 सितंबर की ताजातरीन सुनवाई में अदालत में इन मामलों को उठाया गया और एसआइआर की प्रक्रिया को चुनौती देने वाली पार्टियों के वकीलों ने इसे सर्वोच्च न्यायालय की अवमानना बताते हुए, अदालत से बलपूर्वक आग्रह किया कि आधार के संबंध में अपने मंतव्य का पालन सुनिश्चित करे।

ठीक इसी पृष्ठभूमि में सुप्रीम कोर्ट को इस बार अपना स्वर बदलना पड़ा और आधार के संबंध में अपने मंतव्य के लिए, पहले की तरह सुझाव की भाषा का प्रयोग छोड़कर, आदेश की भाषा का प्रयोग करना पड़ा। जाहिर है कि इसके बाद चुनाव आयोग के पास आधार को अन्य ग्यारह प्रमाणों की तरह, बारहवां प्रमाण मानने से बचने की कोई गुंजाइश नहीं रह गयी है। यानी बिहार के 90-95 फीसदी मतदाता, आधार के सहारे अपनी पहचान तथा पते को प्रमाणित करने की शर्त काफी आसानी से पूरी कर सकते हैं। यह, एसआइआर प्रक्रिया के माध्यम से, मतदाताओं की एक अच्छी-खासी संख्या को मताधिकार से ही वंचित किए जाने की संभावनाओं के दरवाजे, बहुत हद तक बंद कर देता है।

याद रहे कि एसआइआर प्रक्रिया के जरिए, मतदाता सूचियों की साशानुकूल छंटाई का यह खतरा बहुत ही वास्तविक है। यह संयोग ही नहीं है कि बिहार में, जहां से इस एसआइआर प्रक्रिया की शुरूआत हुई है, एक ओर अगर समूचा विपक्ष इस प्रक्रिया पर, उसके तहत बड़ी संख्या में मतदाताओं के नाम काटे जाने, इस प्रक्रिया के हिस्से के तौर पर जल्दबाजी में तैयार की गयी कच्ची या ड्रस्ट मतदाता सूचियों में गड़बड़ियों तथा त्रुटियों की भरमार पर लागातार सवाल उठा रहा है और इन सवालों को जनता के बीच भी लेकर जा रहा है, तो दूसरी ओर साशाधारी गठजोड़ न सिर्फ इन गड़बड़ियों, त्रुटियों तथा बड़ी संख्या में नाम काटे जाने पर चुप्पी साधे हुए है बल्कि विशेष रूप से भाजपा तो जोर-शोर से, और आलोचकों पर हमला कर, चुनाव आयोग की तमाम करनियों-अकरनियों का बचाव करने में ही लगी हुई है। यहां तक कि आरएसएस भी खुलकर विवादास्पद एसआइआर के बचाव में उतर आया है। हाल ही में जोधपुर में संपन्न आरएसएस से संबद्ध संगठनों की तीन दिनी सालाना बैठक के बाद, उसके प्रवक्ता सुनील आंबेकर ने कहा कि, 'कार्यकुशल चुनावी प्रक्रियाएं जनतंत्र की रीढ़ होती हैं और एसआइआर जैसी पहलें इस आधार को मजबूत करने में मदद करती हैं।' सचाई यह है कि बढ़ती ''बाहरी'' घुसपैठ की जिस तरह की निराधार आशंकाओं तथा डैमोग्राफी में बदलाव की चिंताओं को, मोहन भागवत के पिछले ही दिनों के तीन दिवसीय महत्वाकांक्षी व्याख्यान में स्वर दिया गया था और उससे पहले प्रधानमंत्री मोदी द्वारा अपने स्वतंत्रता दिवस के संबोधन में उछाला गया था, उन्हें ही और पहले से स्वर देते हुए, एसआइआर प्रक्रिया के अंतर्गत बड़ी संख्या में मतदाताओं के नाम काटे जाने को, रोहिंगिया, बंगलादेशी घुसपैठियों आदि की मौजूदगी का संकेतक बताने की कोशिश की जा रही थी। यह सब चुनाव आयोग के नाम पर, कथित सूत्रों के हवाले से किया जा रहा था। यह दूसरी बात है कि सूत्रों और इशारों में धारणाएं बनाने का यह खेल शुरू करने के बाद, नाम काटे जाने के औपचारिक कारण के स्तर पर, चुनाव आयोग ऐसे दावों से पीछे ही हट गया।

नरेंद्र मोदी के निजाम में वैसे तो तमाम संवैधानिक निकायों, संस्थाओं तथा एजेंसियों को घसीटकर, उनकी मान्य भूमिकाओं से काफी दूर पहुंचा दिया गया है। पर चुनाव आयोग, संविधान में सौंपी गयी अपनी भूमिका से जितनी दूर चला गया है, वह हैरान कर देने वाला है। जो चुनाव आयोग बड़ी संख्या में हाशियावर्ती मतदाताओं की छंटाई के अपने आग्रह को पूरा करने के लिए, आधार को पहचान का साक्ष्य मानने से इंकार करने पर आखिर-आखिर तक बजिद था, उसी चुनाव आयोग के बंगलूरु सेंट्रल के महादेवपुरा विधानसभाई क्षेत्र में एक लाख से ज्यादा वोटों की हेराफेरी के आरोपों पर मुंह सिलकर बैठ जाने के बाद, अब उसी कर्नाटक में अलंद विधानसभाई क्षेत्र में, 2023 के विधानसभाई चुनाव से पहले लगभग 6 हजार मतदाताओं के नाम फर्जीवाड़े के जरिए कटवाए जाने के दोषियों की सीआइडी जांच, चुनाव आयोग द्वारा पुलिस द्वारा मांगा गया डॉटा न देने के जरिए, दो साल से रोक कर रखे जाने का मामला सामने आया है। क्या यही चुनाव आयोग का काम है?

(लेखक साप्ताहिक पत्रिका लोक लहर के संपादक हैं।)

विदेश नीति का श्राद्ध-पक्ष

एक दिन अमेरिका कुछ कहता है और हम वाह वाह करते दिखते हैं-हम मायने मीडिया भर नहीं सरकार भी। अगले दिन राष्ट्रपति ट्रम्प हमारे प्रधानमंत्री को ग्रेट बताते हुए भी उनकी जमीन खोदने में कोई कसर नहीं छोड़ते तो बाकी सब तो अमेरिका और ट्रम्प विरोधी तलवार तान लेते हैं लेकिन प्रधानमंत्री मुंह नहीं खोलते। पहलगाम की नृशंस हत्याओं के बाद जब भारत बदले की कार्रवाई में आपरेशन सिंदूर शुरू करता है और ठीकठाक सफलता मिलती लगती है तभी अमेरिका की तरफ स युद्धविराम घोषित हों जाता है। हमारी सरकार अभी भी आपरेशन सिंदूर जारी रहने का दावा करती है और मोदी जी को छोड़कर बाकी सब ट्रम्प को झूठा बोल चुके हैं। ट्रम्प भी खास हैं क्योंकि वे इस बात को तीस से ज्यादा बार दोहरा चुके हैं और भारत प्रिय न बना तो उस पाकिस्तान को ही गोद में बैठा लिया जो आपरेशन सिंदूर के समय खुले रूप में आतंकी और फौजी मेल का प्रदर्शन कर चुका है। वे उस आसिम मुनिर को भोज खिलाने से लेकर बार बार मान सम्मान दे रहे हैं जिसने पाकिस्तानी लोकतंत्र और वहां की अवाम की दुर्गति कर रखी है। ट्रम्प रूस से मोहब्बत और दुश्मनी दिखाते हैं तो चीन को धमकाकर पाँव पीछे खींच लेते हैं।

अब ट्रम्प महाबली अमेरिका की और उसकी विदेश नीति की क्या दुर्गति कर चुके हैं यह दुनिया देख और भुगत रही है। हम भी उनके सनक भरे फैसलों को भोग रहे हैं और शुरू से इनकी आशंका होने के बावजूद न तो तैयार थे और न अब कोई उपाय करते लगते हैं। एक दिन स्वदेशी का राग अलापा जाता है तो अगले दिन हम जापान और चीन के आगे समर्पण की मुद्रा में आ जाते है। और जब तक हमारे व्यवसायी अमेरिकी आयात पर बंदिश से निपटने की तैयारी करें तब तक ट्रम्प वापस मोदी जी की महानता और दोस्ती का राग अलापते है। और एक बार हम, यानि सिर्फ मीडिया ही नहीं खुद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी भी उनके ट्वीट का जबाब देने में देरी नहीं करते। और सचमुच में उनके लिखे की स्याही सूखी भी न थी कि अमेरिका से और ज्यादा सीमा शुल्क लगाकर रूसी टेल आयात का खेल खत्म करने की धमकी आ जाती है। हमें कुछ सूझता ही नहीं और हमारी कमर टूटती लगती है। साफ लगता है कि यह विदेश नीति का श्राद्ध पक्ष जैसा चल रहा है।

और याद करने में हर्ज नहीं है कि बहुत स्पष्ट आदर्शों और मूल्यों पर आधारित भारत की विदेश नीति को कभी कमजोर दुनिया के देश तो आदर्श मानते ही थे मजबूत देश भी आदर देते थे और बुनियादी नीतियों का सम्मान करते थे। इस नीति को भारत ने अस्सी के दशक तक चलाया और भारत और उसके प्रधानमंत्री की गिनती दुनिया को प्रभावित करने वालों में होती थी। आज ठीक उलटी स्थिति आ गई है। सरकार बीच बीच में स्वदेशी का नारा लगाती है और विदेश नीति में सीधे चीन के आगे समर्पण कर चुकी है। जब स्वदेशी हमारे राष्ट्रीय आंदोलन केन्द्रीय मुद्दा था और खादी समेत अनेक आंदोलनों से इसे आगे बढ़ाया गया। तब भारत विश्व गुरु या दुनिया की न जाने कौन से नंबर की आर्थिक शक्ति बनने का दावा नहीं करता था। और न तब दुनिया के हर ऐरे गैरे नेता से दिखावटी सम्मान पाकर देश की राजनीति में उसका इस्तेमाल एक व्यक्ति का प्रचार और वोट बढ़ाने के लिए किया जाता था। अमेरिका या ब्रिटेन के चुनाव में दखल देकर किसी को जितवा-हरवा देने का भ्रम भी हमारे नेताओं को नहीं था।

विदेश नीति का मतलब दूसरे देशों से कुछ बुनियादी उसूलों के आधार पर दोस्ती रखना और अपने देश के हितों की रखवाली और आगे बढ़ाने का काम था। जब से विदेश नीति के केंद्र में देशहित की जगह एक व्यक्ति का हित आ गया है, विदेश नीति कहीं है भी इसका पता नहीं है। दुनिया में घटनाएं अपने हिसाब से चलती है और कभी हमारे अनुकूल होंगी तो कभी प्रतिकूल। लेकिन हमारी विदेश नीति को देशहित के हिसाब से सतत काम करना होता है।

अरविन्द मोहन

विदेश नीति का मतलब दूसरे देशों से कुछ बुनियादी उसूलों के आधार पर दोस्ती रखना और अपने देश के हितों की रखवाली और आगे बढ़ाने का काम था। जब से विदेश नीति के केंद्र में देशहित की जगह एक व्यक्ति का हित आ गया है, विदेश नीति कहीं है भी इसका पता नहीं है। दुनिया में घटनाएं अपने हिसाब से चलती है और कभी हमारे अनुकूल होंगी तो कभी प्रतिकूल। लेकिन हमारी विदेश नीति को देशहित के हिसाब से सतत काम करना होता है।

ट्रम्प ने सोच समझकर ही सीमा शुल्क का सवाल उठाया जिसे वे अमेरिकी अर्थव्यवस्था का प्रभुत्व वापिस करने का अपना मंत्र बताते रहे हैं। चीन समेत सारी दुनिया के आयात पर उन्होंने कर लगाया और जाने क्या बात होती रही कि रूस से तेल खरीदकर निर्यात करने के हमारे फैसले को उन्होंने मुद्दा बनाया और हमारे सामानों पर सीधे पचास फीसदी का जुरमाना ठोंक दिया। वियतनाम, कंबोडिया जैसे छोटे देशों ने अमेरिकी माल पर कर घटाकर अपने निर्यात को बचा लिया-बढ़ाने का अवसर पा लिया। दूसरी ओर चीन और यूरोपीय देशों ने जबाबी कर-वृद्धि का मूड दिखाकर अमेरिका को झुका दिया। चीन ने सबसे बड़ा कमाल किया और ट्रम्प का अहंकार भी नीचे आया। अब वह मजबूत अमेरिका विरोधी जमावड़ा बनाने में लगा है और हम उससे बार बार पिटकर भी उसकी शरण में पहुँच गए हैं। हम सीधे दंडवत की मुद्रा में उस चीन और रूस के आगे लेट से गए जिन्होंने आपरेशन सिंदूर में पाकिस्तान का साथ दिया। चीनी रक्षा उपकरणों का इस्तेमाल भी भारत के खिलाफ हुआ था।।

मामला सिर्फ राष्ट्रहित की जगह एक व्यक्ति के अहंकार और प्रचार-प्रसार की भूख का नहीं है। मोदी जी इन यात्राओं में अपने विदेश मंत्री एस जयशंकर को लेकर भी नहीं गए। विदेश सचिव रहे जयशंकर खानदानी कूटनीति वाले हैं और जब विदेश मंत्री बनाए गए थे तब काफी गुणगान होता था। आज चीन, रूस और जापान के शासन प्रमुख तो अपने विदेश मंत्रियों के साथ बैठे और सामने मोदी जी रक्षा सलाहकार अजीत दोभाल और विदेश सचिव के साथ बैठे थे। सच कहें तो यह जयशंकर और सरकार तथा इसकी विदेश और रक्षा नीति के लिए सबसे महत्वपूर्ण बन गए रक्षा सलाहकार के टकराव का भी है। दोनों के साथ दोनों के पुत्र भी अलग अलग मोर्चा संभाले हैं जिनकी चर्चा अच्छे संदर्भ में काम ही होती है। अस्सी साल की उम्र और मोदी के पूरे कार्यकाल में रक्षा सलाहकार पद पर जमे दोभाल खुद को क्या समझते हैं यह महत्वपूर्ण नहीं है लेकिन सारी असफलताओं के बावजूद आज भी संभवत दूसरे सबसे ताकतवर व्यक्ति बने हुए हैं यह महत्वपूर्ण है। डोकलाम, चुसार से लेकर पुलवामा और पहलगाम तक हमारी सुरक्षा और खुफिया एजेंसियों की कितनी असफलताऐं हैं उन्हें गिनने न देकर रक्षा सलाहकार की कुर्सी पर बने रहना और विदेश मंत्री तक को बेमानी करना काम बड़ा कौशल नहीं है। दुनिया में इतने लंबे समय तक कोई रक्षा सलाहकार नहीं टिकता जबकि सीबीआई, एनआईए, प्रवर्तन निदेशालय, आयकर विभाग से लेकर दिल्ली पुलिस तक बेमतलब मुकदमों से पटे हैं और एक दो फीसदी मामले भी नहीं ठहराते।

पुलवामा के बाद से भी दोभाल साहब और जयशंकर किस काम में जुटे रहे हैं इसे लेकर काफी कुछ कहा जाता है। पर वे देश की सुरक्षा और हितों के काम पर मुस्तैद रहते तो ये नतीजे क्यों आते। जाहिर तौर पर उनकी प्राथमिकताऐं और ताकत अलग किस्म के हैं। और यह बिजनेस हाउसेज की लाबिइंग का काम हो सकता है। इस बारे में बहुत जानकारियां न हैं न बाहर आ सकती हैं। पर इतना सबको मालूम है कि रूस से सस्ता तेल आयात करने और उसे ऊंची कीमत पर निर्यात करने के जिस खेल को लेकर ट्रम्प चिढ़े हुए हैं उसका लाभ भारत सरकार या भारत के लोगों को मिलने की जगह एक दो व्यावसायिक घरानों को ही मिला। सस्ता तेल आने से उपभोक्ताओं को कोई राहत नहीं मिली। गौतम अदानी का अमेरिकी मुकादमा भी मुद्दा रहा है।

पर जब नंबर एक नेता को फ़ोटो खिंचाने, वोट के लिए प्रचार करने से फुरसत न हों और विदेश मंत्री बनाम रक्षा सलाहकार की लड़ाई एक दूसरे को आउट करने वाली हों तथा व्यावसायिक घरानों लाबीइंग प्रभावी होती जा रही हों तब विदेश नीति, देश के हित की कौन चर्चा कर सकता है। पर यह स्थिति दुर्भाग्यपूर्ण है इतना कहने में कोई हर्ज नहीं है।

आपके पत्र

नेपाल का ऑनलाइन लॉकडाउनः आज़ादी पर सवाल

नेपाल जैसे छोटे लोकतांत्रिक देश ने हाल ही में ऐसा बड़ा निर्णय लिया है जिसने पूरी दुनिया को चौंका दिया। सरकार ने 26 सोशल मीडिया और संदेश मंचों पर अचानक रोक लगाने का आदेश दिया। इसमें फेसबुक, व्हाट्सएप, इंस्टाग्राम, यूट्यूब और एक्स जैसे सबसे लोकप्रिय मंच शामिल हैं। यह फैसला जितना अचानक लिया गया, उतना ही गहरी बहस भी शुरू कर दी कि क्या यह कदम नागरिक अधिकारों पर हमला है या देश की डिजिटल सुरक्षा के लिए जरूरी था।

सरकार का कहना है कि सोशल मीडिया कंपनियों को पहले ही चेतावनी दी गई थी कि वे नेपाल में अपना स्थानीय कार्यालय खोलें, प्रतिनिधि नियुक्त करें और शिकायत निवारण की व्यवस्था सुनिश्चित करें। लेकिन कंपनियों ने इसका पालन नहीं किया। सरकार के अनुसार, इस कारण अफवाहें, भ्रामक खबरें और साइबर अपराध तेजी से बढ़ रहे थे। इसे रोकने के लिए ही यह बड़ा कदम उठाया गया।

लेकिन इस फैसले का विरोध भी तेजी से हो रहा है। पत्रकार संगठन, मानवाधिकार समूह और आम नागरिक इसे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर हमला मान रहे हैं। उनका तर्क है कि सोशल मीडिया केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि यह अब नागरिकों की आवाज़ और लोकतंत्र का आधार बन चुका है। जब इतने बड़े स्तर पर मंच बंद कर दिए जाएंगे, तो जनता की संवाद और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर गहरा असर पड़ेगा।

नेपाल में लाखों परिवार ऐसे हैं जिनके सदस्य विदेशों में काम कर रहे हैं। उनके लिए व्हाट्सएप और फेसबुक ही परिवार से जुड़े रहने का सबसे आसान माध्यम हैं। इस प्रतिबंध से उनकी रोज़मर्रा की जिंदगी कठिन हो जाएगी। यही नहीं, छोटे व्यापारी और ऑनलाइन कारोबार करने वाले लोग भी सोशल मीडिया के माध्यम से ग्राहकों तक पहुंचते थे। इंस्टाग्राम, यूट्यूब और फेसबुक पर विज्ञापन देकर वे अपने उत्पाद बेचते थे। अब यह सब प्रभावित होगा।

सरकार का तर्क बिल्कुल गलत नहीं है। सोशल मीडिया पर अफवाहें, फर्जी खबरें और साइबर अपराध तेजी से फैल रहे हैं। इससे सामाजिक तनाव और हिंसा भी भड़क सकती है। सरकार को यह हक़ है कि वह नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करे और कंपनियों को जिम्मेदार बनाए। लेकिन समस्या का हल सीधे मंचों को बंद करना नहीं होना चाहिए।

दुनिया के कई देशों ने सोशल मीडिया कंपनियों पर नियम लागू किए हैं। भारत ने 2021 में नए सूचना प्रौद्योगिकी नियम बनाए, जिनमें कंपनियों को शिकायत अधिकारी नियुक्त करना और सामग्री पर तुरंत कार्रवाई करना अनिवार्य किया गया। यूरोपियन संघ ने भी डिजिटल सेवा कानून लागू किया। लेकिन कहीं भी इस तरह का पूर्ण प्रतिबंध नहीं लगाया गया। नेपाल का कदम इसलिए कठोर और जल्दबाज़ी भरा लगता है।

अंतत: यह निर्णय एक चेतावनी भी है कि सोशल मीडिया का महत्व अब केवल मनोरंजन या सूचना तक सीमित नहीं है। यह लोकतंत्र, रोजगार, सामाजिक संवाद और वैश्विक पहचान का अहम हिस्सा बन चुका है। इसे सही ढंग से नियंत्रित करना, नियम लागू करना और नागरिकों की आवाज़ सुरक्षित रखना ही भविष्य की दिशा है।

नेपाल को चाहिए कि वह इस निर्णय का पुनर्विचार करे और ऐसा समाधान निकाले जो कानून का पालन सुनिश्चित करे, अफवाहों और साइबर अपराध पर रोक लगाए, और साथ ही जनता की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को भी सुरक्षित रखे। यही लोकतंत्र की सच्ची ताकत है।

-डॉ प्रियंका सौरभ

ललित सुरजन की कलम से

यात्रा वृत्तांत: दूसरी चीन यात्रा: कुछ नए अनुभव

शंघाई में होनपु नामक नदी है, जो शहर के भीतर यू आकार में बहती है और इस तरह महानगर को तीन हिस्सों में बांटती है। बीच में एक जगह नदी तट पर कोई दो किलोमीटर लंबा घाट विकसित किया गया है, जो सैलानियों के आकर्षण का मुख्य केन्द्र है। पास में ही वाहनों के लिए प्रतिबंधित एक सड़क है, जिस पर चहलकदमी करते हुए आप आजू-बाजू के मॉल व मैगा स्टोर्स में और कुछ नहीं तो विंडो शॉपिंग कर सकते हैं। इस बाजार में दुनिया के हर प्रसिद्ध ब्राण्ड का माल आपको मिल जाएगा। चीन विश्व की दूसरी आर्थिक महाशक्ति बन चुका है और उसे न तो केएफसी या मेकडोनाल्ड से डर लगता है और न वालमार्ट से। इस सड़क पर घूमते हुए मन में सवाल उठा कि यहां जो महंगे-महंगे सामान बिक रहे हैं इनको आखिर खरीदता कौन है। समझ आया कि देश में निश्चित रूप से ऐसा धनिक वर्ग तैयार हो चुका है, जिसके पास यह सामर्थ्य है। दूसरे-नौजवानों को भी यह बाजार लुभा रहा है।

(देशबन्धु में 27 दिसम्बर 2012 को प्रकाशित)

https://lalitsurjan.blogspot.com/2012/12/blog-post_27.html

पावन प्रसंग

दु:ख का कारण अंतहीन कामनाएं

मानव शरीर में मन का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण है। सूक्ष्म शरीरी मानव-मन में विविध प्रकार की विचार-लहरियां उद्भूत होती हैं। उठने वाली विचारों की लहरें शुभ भी होती हैं और अशुभ भी। यदि शुभत्व से परिपूर्ण विचार लहरें अशुभत्व से ओत-प्रोत हैं तो जीवन के विकास की जो दिशाएं हैं, वे धूमिल हो जाती हैं।

मानव को चाहिए कि वह अपने मन का उपयोग सम्यक प्रकार से करे। मन उसका अपना है और जब मन उसका अपना है तो उसके अपने मन पर उसका अधिकार होना ही चाहिए। मन चंचल है, भागता-दौड़ता रहता है, तरह-तरह के विचार इसमें उभरते रहते हैं, क्या करें, हम तो इस मन के मारे मर गये? बड़ा नटखट यह मन। इस मन ने हमें परेशान करके रख दिया है। इस तरह के शिकवों और शिकायतों का कोई औचित्य नहीं है। अरे, मन आपका है, किसी दूसरे का नहीं। फिर क्या कारण है कि आप अपने मन से इतने परेशान हो गये? यदि इसे साधने का हमारा अभ्यास निरंतर बना रहता है तो ऐसा कोई कारण नहीं है कि मन पर आप शासन न कर पाएं। जब भी अनावश्यक कामनाएं मन में उभरती हैं, उन पर विराम लगाने का प्रयास तुरंत करना चाहिए।

मानव की कामनाएं आकाशवत अनंत हैं। जिस तरह से आकाश का अंत नहीं है, उसी तरह से कामनाओं का भी अंत नहीं है। हमारे यहां षट्द्रव्यों का वर्णन है। प्रत्येक द्रव्य को लोक प्रमाण कहा है, जबकि आकाश द्रव्य को लोकालोक प्रमाण कहा है। इच्छाओं, कामनाओं को अनंत आकाश की तरह अनंत बताया है। संसार में कोई भी व्यक्ति इच्छाओं से, कामनाओं से शून्य नहीं है। प्रत्येक की कोई-न-कोई चाह, कोई-न-कोई कामना होती ही है। जो आवश्यक है, उसकी पूर्ति के लिए प्रयत्न भी किये जाते हैं, लेकिन आवश्यक की आड़ में अनावश्यक कामनाओं को मन में पाल लेने का अर्थ अपने मस्तिष्क को विविध प्रकार के तनावों से आवृत करना है।

प्रशस्त और अप्रशस्त दो तरह की कामनाएं होती हैं। मन में यदि देव, गुरु और धर्म की सेवा की कामना जगती है, किसी रोते हुए को मुस्कान सौंपने का भाव जगता है, किसी की परिचर्या का भाव उभरता है, संत-दर्शन एवं उनके प्रवचन का लाभ लेने की इच्छा होती है, तप करके कर्मों को जर्जरित करने की चाह पैदा होती है, प्रभु-स्मरण और स्वाध्याय के लिए यदि मन समुत्सुक बनता है तो अच्छी बात है। यदि इसके विपरीत कामना का प्रादुर्भाव होता है तो हम स्वयं को उससे बचाइये। यदि भीतर में यह जागरूकता है तो फिर हम कभी भी दु:खी नहीं बन सकते।

अप्रशस्त कामनाएं कभी भी सुखद नहीं हो सकतीं। अप्रशस्त, अनावश्यक कामनाओं से समूचा जीवन यंत्रणामय बन जाता है। किसी को देखकर उसका अंधानुकरण एवं महत्वाकांक्षाओं को मन में पालकर 'और, और का' भाव संजोए हुए रात-दिन भागते-दौड़ते रहना, अपने ही हाथों अपने सुख को दफन कर देना है। हमारे पास रहने के लिए एक-दो मकान हैं तो फिर अमुक तरह के दो-चार बंगले 'और' हो जाएं, इस 'और' 'और' का क्या अर्थ है? दुकान है, फैक्टरी है और ठीक तरह से चल रही है तो फिर 'और' दो-चार होनी चाहिए, इस तरह का दृष्टिकोण अनुपयुक्त है।

विश्व-विजेता सिकन्दर के नाम से हम अपरिचित नहीं हैं। सिकन्दर के पास भौतिक दृष्टि से कोई अभाव नहीं था, पर वह अपने मन में उमरने वाली 'और' कामनाओं पर नियंत्रण नहीं कर पाया। उसकी कल्पना थी कि मैं सारे विश्व को जीत लूं।

-कांतिलाल मांडोत

प्रकाशक, मुद्रक : राजीव रंजन श्रीवास्तव द्वारा पत्रकार प्रकाशन प्रा. लि. के लिए 506, आई.एन.एस. बिल्डिंग, 9, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित एवं बीएफएल इंफोटेक लि., सी 9, सेक्टर-3, नोएडा से मुद्रित। सम्पादक : राजीव रंजन श्रीवास्तव, (पी.आर.बी. एक्ट के तहत समाचार चयन के लिए जिम्मेदार)। आर.एन.आई. नं. DELHIN/2008/24216. दिल्ली कार्यालय :फोन: 011-23718195,23357784, फैक्स: 011-43581404, नोएडा कार्यालय: फोन: 0120-4114404 फैक्स: 0120-4273770
ई-मेल: deshbandhudelhi@gmail.com वेब: www.deshbandhu.co.in

चिंतन

आंदोलन के पीछे केवल सोशल मीडिया बैन नहीं

नेपाल में जो हो रहा है, उसे किसी भी सूरत में सही नहीं ठहराया जा सकता। सोशल मीडिया बैन के खिलाफ शुरू हुए आंदोलन ने पूरी सरकार को ही खदेड़ दिया है। संसद भवन के साथ पीएम, राष्ट्रपति और गृहमंत्री के आवास में तोड़फोड़ और आगजनी हुई। राजधानी काठमांडू में हालात बेहद तनावपूर्ण बने हुए हैं और सुरक्षा बल हालात को काबू में लाने में नाकाम दिख रहे हैं। देश में हिंसक प्रदर्शनों ने हालात को और बिगाड़ दिया है। प्रदर्शनकारियों ने पूर्व पीएम झलनाथ खनाल के घर में आग लगा दी। घर में उनकी पत्नी राज्यलक्ष्मी चित्रकार थीं। वह गंभीर रूप से जल गईं। उन्हें तुरंत कीर्तिपुर बर्न अस्पताल ले जाया गया, जहां उनकी मौत हो गई। पीएम केपी ओली इस्तीफा देकर हेलिकॉप्टर से भागते दिखे। इस सीन ने पिछले साल बांग्लादेश में हुए तख्तापलट की याद दिला दी। जब शेख हसीना को हेलिकॉप्टर से भागना पड़ा था। उससे पहले श्रीलंका में भी ऐसे ही तख्तापलट हुआ था। आंदोलन का कारण 4 सितंबर को नेपाल सरकार द्वारा सोशल मीडिया पर बैन के आदेश को बताया जा रहा है। इसके बाद हामी नेपाल नाम का एनजीओ चलाने वाले सुदान गुरुंग ने इंस्टाग्राम पर युवाओं से स्कूल यूनिफॉर्म और स्कूली बैग लेकर सड़क पर उतरने को कहा। 8 सितंबर को नेपाल की संसद के सामने प्रोटेस्ट शुरू हुआ। ये आंदोलन सिर्फ सोशल मीडिया बैन के खिलाफ नहीं था। हामी नेपाल ने इसका आह्वान करते हुए पोस्ट में लिखा, लंबे अरसे से करप्शन ने हमारे सपने, हमारा फ्यूचर और देश की गरिमा को खत्म किया है। हम देख रहे हैं कि नेता अमीर होते जा रहे हैं और आम लोगों को जीने के लिए तक संघर्ष करना पड़ रहा है, लेकिन अब और नहीं। बस देखते ही देखते आंदोलन ने हिंसक रूप ले लिया। गड़बड़ तब हुई जब सरकार ने आंदोलन को दबाने के लिए गोली चलाने के आदेश दे दिए। जिसमें अब तक 22 लोग मारे गए। बच्चों पर गोली चलवाने की खबर फैलते ही आंदोलन और भी ज्यादा हिंसक हो गया। युवाओं के साथ-साथ आम जनमानस भी आंदोलन से जुड़ गया। प्रदर्शनकारियों ने संसद भवन में आग लगा दी। पूर्व पीएम शेर बहादुर देउबा को घर में घुसकर पीटा। वित्त मंत्री विष्णु पौडेल को काठमांडू में उनके घर के नजदीक दौड़ा-दौड़ाकर पीटा। पूर्व प्रधानमंत्री पुष्प कमल दहल प्रचंड, शेर बहादुर देउबा और संचार मंत्री पृथ्वी सुब्बा गुरुंग के निजी आवासों को भी आग के हवाले कर दिया। प्रधानमंत्री केपी ओली के अलावा सरकार में शामिल 4 मंत्रियों ने इस्तीफा दे दिया है। असल में 90 के दशक से ही नेपाल में राजनीतिक उथल-पुथल रही है। पहले राजशाही, फिर संवैधानिक राजशाही आई और फिर लोकतांत्रिक सरकार आई, लेकिन नेपाल का करप्शन खत्म होना तो दूर बढ़ता चला गया। जिससे आम जनता में रोष बढ़ रहा था। इससे पहले जब एक सरकार के खिलाफ विरोध का माहौल बनता था तो दूसरे नेता आगे आ जाते थे और देश में चुनाव करवाकर केपी ओली, शेर बहादुर देउबा और प्रचंड के बीच सरकार का ट्रांसफर होता रहता था। इस बार गुस्सा इन सभी सीनियर नेताओं को लेकर है। इनमें से कोई भी जनता को भरोसे में नहीं ले पा रहा। ऐसे में अभी यह नहीं कहा जा सकता कि आगे नेपाल की सत्ता कौन चलाएगा। क्या फौज काबिज होगी, कोई अंतरिम सरकार बनेगी या दोबारा चुनाव होंगे, अभी इस पर कुछ भी कह पाना मुश्किल है। हां यह सही है कि सत्ता कैसी भी, किसी की भी हो, युवाओं को अनदेखी नहीं कर पाएगी। यह आंदोलन नेपाली नेताओं के लिए सबक भी है।

फिलहाल
संतोष कुमार भार्गव

धीरे-धीरे नरम पड़ेंगे ट्रंप के तेवर

ट्रंप ने भारत से संबंधों को 'बहुत खास' बताया है। उन्होंने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के साथ अपनी दोस्ती की बात भी कही। जबकि उनकी सरकार ने भारतीय सामानों पर 25 प्रतिशत टैरिफ लगाया है। इसके साथ ही भारत के रूसी तेल खरीदने पर 25 प्रतिशत अतिरिक्त टैरिफ भी थोपा है। इससे कुल टैरिफ 50 प्रतिशत तक पहुंच गया है। 50 फीसदी टैरिफ के बाद जिस तरह का तनाव बन गया था, अब ट्रंप के बदलते सुर को देखते हुए कहा जा सकता है कि भारत और अमेरिका के बीच रिश्तों पर तनाव की बर्फ पिघल रही है। हालांकि टैरिफ पर अभी कोई आधिकारिक बात नहीं हुई है, लेकिन तनाव कम होता दिख रहा है।

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्डह ट्रंप के तेवर नरम पड़ गए हैं। उन्हें एहसास हो गया है कि भारत किसी भी देश के सामने झुकने वाला नहीं है। पूर्व भारतीय राजनयिक केपी फैबियन ने ट्रंप के पोस्टक और उस पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की प्रतिक्रिया का मतलब समझाया है। उन्होंने कहा कि ट्रंप को अब समझ आ रहा है कि उनकी आक्रामक व्यापारिक धमकियां नाकाम साबित हो रही हैं। हाल में ट्रंप ने भारत-अमेरिका संबंधों को 'बहुत-बहुत खास' बताया था। फैबियन ने जोर देकर कहा कि भारत, भारत है। यह एक सभ्यता वाला देश है। भारत किसी भी देश का पिछलग्गू नहीं बन सकता। भारत सबके साथ दोस्ती चाहता है। व्यापार करना चाहता है। लेकिन, भारत किसी की तानाशाही नहीं मानेगा।

यह बात ट्रंप की ओर से भारत-अमेरिका संबंधों पर नरम रुख अपनाने के बाद आई है। ट्रंप ने इन संबंधों को 'बहुत खास' बताया है। उन्होंने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के साथ अपनी दोस्ती की बात भी कही। जबकि उनकी सरकार ने भारतीय सामानों पर 25 प्रतिशत टैरिफ लगाया है। इसके साथ ही भारत के रूसी तेल खरीदने पर 25 प्रतिशत अतिरिक्त टैरिफ भी थोपा है। इससे कुल टैरिफ 50 प्रतिशत तक पहुंच गया है। 50 फीसदी टैरिफ के बाद जिस तरह का तनाव बन गया था, अब ट्रंप के बदलते सुर को देखते हुए कहा जा सकता है कि भारत और अमेरिका के बीच रिश्तों पर तनाव की बर्फ पिघल रही है। हालांकि टैरिफ पर अभी कोई आधिकारिक बात नहीं हुई है, लेकिन तनाव कम होता दिख रहा है। दोनों ही नेताओं के ताजा बयान इस बात के संकेत दे रहे हैं कि दोनों देशों के बीच बिगड़े रिश्ते धीरे-धीरे सामान्य हो सकते हैं। आपको बता दें कि फिलहाल अमेरिका के द्वारा भारत पर लगाया गया 50 प्रतिशत टैक्स जारी है।

वर्तमान में विश्व के तमाम देशों से व्यापार और राजनीतिक संबंध रखना सबके लिए जरूर है। बात अगर भारत और अमेरिका के व्यापारिक संबंधों की कि जाए तो 'एप्पल' ने भारत से 67,000 करोड़ रुपये कमाए हैं। 'अमेजन' ने 40,000 करोड़ रुपये कमाए हैं। 'गूगल' ने 22-23,000 करोड़ रुपये बनाए हैं और 'मेटा' ने भी लगभग इतनी ही कमाई की है। ये सभी अमरीकी कंपनियां हैं और भारत उनका सबसे बड़ा बाजार है। भारत में इनके प्लांट भी सक्रिय होंगे अथवा स्थापित होने की प्रक्रिया में होंगे! ऐसी कई और अमरीकी कंपनियां होंगी, जो भारत में व्यापार कर रही हैं और मोटा मुनाफा कूट रही हैं। इन कंपनियों के सबसे अधिक ग्राहक और उपयोगकर्ता भी भारत में हैं। यह मुनाफा अमरीका में ही जा रहा है।

राष्ट्रपति ट्रंप अब भारत के बारे में क्या सोच रहे हैं? चूंकि अमरीकी कंपनियां भारत में उत्पादन कर रही हैं और माल अमरीकी बाजार में जा रहा है, क्या राष्ट्रपति ट्रंप इन उत्पादों पर भी 50 फीसदी टैरिफ थोपेंगे? बल्कि ट्रंप हररोज टैरिफ पर सफाई दे रहे हैं। भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय के सूत्रों का मानना है कि राष्ट्रपति ट्रंप 100 दिनों के अंतराल में टैरिफ पर पुनर्विचार कर अपने फैसले को वापस ले सकते हैं,

लिहाजा उन्होंने सर्वोच्च अदालत से आग्रह किया है कि वह टैरिफ मामले पर यथाशीघ्र सुनवाई कर उसे 'वैध' करार दे। अदालत नवंबर माह में सुनवाई शुरू करेगी, यह पहले से ही तय है।

राष्ट्रपति ट्रंप इसलिए भी चिंतित हैं, क्योंकि दुनिया दो ध्रुवों के बीच बंटती जा रही है और अमरीका को 'शीत युद्ध' एक बार फिर शुरू होने की आशंका है। अमरीका की ताकत भी बंटती जा रही है। अब देश अमरीका की 'दादागीरी' मानते रहने को तैयार नहीं हैं। राष्ट्रपति ट्रंप और अमरीकी मंत्री अब भी भारत को अपना 'परम मित्र' मानते हैं। अमरीकी विशेषज्ञ भी मानते हैं कि देश के राष्ट्रपतियों ने दशकों की मेहनत, कूटनीति, दूरदर्शिता और देशों की लामबंदी के जरिए जो ताकत अर्जित की थी और अमरीका को सबसे बड़ी 25 ट्रिलियन डॉलर से अधिक की अर्थव्यवस्था तक पहुंचाया था, राष्ट्रपति ट्रंप उस पर पानी फेर रहे हैं। भारत को 50 फीसदी टैरिफ से अमरीका ने दबाव में लाने की रणनीति बनाई, लेकिन भारत दूसरे ध्रुव पर रूस और चीन के साथ मिल गया।

उसके समर्थन में 50 अन्य देश, ब्रिक्स और एससीओ के देश आ खड़े हुए। भारत के वाणिज्य-उद्योग मंत्री पीयूष गोयल ने एक साक्षात्कार में खुलासा किया है कि भारत का ऑस्ट्रेलिया और ओमान के साथ व्यापार का करार शीघ्र ही होने जा रहा है। भारत की 50 अन्य देशों के साथ भी निर्यात की संभावनाओं पर बातचीत जारी है। अमरीका के साथ भी नवंबर तक व्यापार-समझौता होना लगभग तय है। भारत आगामी दो सालों के भीतर विश्व की तीसरी सबसे बड़ी आर्थिक महाशक्ति बन सकता है। सवाल यह है कि ट्रंप को भारत से दिक्कत है अथवा रूस और चीन से?

भारत ने पलट कर अमरीका पर कोई टैरिफ नहीं थोपा है। अमरीकी कंपनियां भारत की सार्वजनिक और निजी कंपनियों से अरबों डॉलर के करार कर रही हैं। अमरीकी राष्ट्रपति के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार रहे अधिकारी ने अमरीका में मंदी की संभावनाओं को लेकर राष्ट्रपति को सचेत किया है। ऐसे भी विश्लेषण सामने आए हैं कि एक-तिहाई उद्योग पहले से ही आर्थिक संकट झेल रहे हैं। ऐसे में भारत के साथ कारोबार कम क्यों किया जा रहा है? टैरिफ का कोई औचित्य नहीं है, क्योंकि रूस के साथ भारत, चीन के अलावा अमरीका और यूरोपीय देश भी तेल और गैस का धंधा कर रहे हैं।

राष्ट्रपति ट्रंप को आरोप लगाने की अपनी आदत को सुधारना चाहिए। उन्होंने अब चीन पर आरोप चस्पां किया है कि वह अमरीका के खिलाफ साजिश रच रहा है। दरअसल बदलते वैश्विक परिदृश्य में अमरीका अकेला पड़ता जा रहा है। अच्छे संबंधों को सिर्फ टैरिफ तक सीमित कर देखना ट्रंप और अमरीका के लिए नुकसानदायक होगा। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद जब शीत युद्ध शुरू हुआ था, तब भी भारत दोनों ध्रुवों से अलग, अपनी गुटनिरपेक्षता के लिए, मजबूती से खड़ा था। बहरहाल जो भी निर्णय लेना है, राष्ट्रपति ट्रंप और अमरीका को लेना है।

अब सवाल है कि भारत को क्या करना चाहिए? अगर ट्रंप नरम पड़ रहे हैं, तो यह नरमी अभी नीतिगत नहीं है। यह तभी वास्तविक होगी जब शर्तों पर बातचीत होगी और टैरिफ राहत पर कागजी कार्रवाई पूरी हो जाएगी। जीजीआई की ओर बहुत अधिक झुकाव अमेरिकी दबाव से राहत पाने में रुकावट का जोखिम पैदा कर सकता है। हालांकि, वाशिंगटन की ओर बहुत अधिक झुकाव, बदले में, भारत के प्रभाव को कम कर देगा। भारत को इस नरमी को खुले मानकों के लिए एक सहारा के रूप में देखना चाहिए, न कि वैश्विक निवेश साझेदारी यानी जीजीआई के दायरे को बंद करने वाले संरेखण के रूप में। दोनों रास्तों में संतुलन बनाकर ही भारत के आगे के विकल्प तय होने चाहिए।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया haribhoomi@gmail.com पर दे सकते हैं।

विशेष
डॉ. जयपाल मेहरा

जिंदगी के लूप में कहीं खो न जाए इंसानियत का जुड़ाव

सुबह उठे, अलार्म बंद किया, मोबाइल पर दस नोटिफिकेशन... फोन उठाया, बाथरूम गए, नहाते-नहाते रील्स देखीं, नाश्ता किया और ऑफिस निकल गए। ऑफिस पहुंचे, कंप्यूटर ऑन किया, चार ईमेल, पांच मीटिंग्स... दोपहर हो गई। लंच टाइम में फोन स्क्रॉल किया, दोस्तों की शादी की तस्वीरें देखीं, किसी के बच्चे का वीडियो देखा... 'लाइक' कर दिया। शाम हुई, घर आए, खाना खाया और सोने से पहले फिर वही मोबाइल... और फिर सो गए। कल फिर यही दोहराना है। जिंदगी का लूप चल रहा है। एक दिन अचानक दिमाग में ख्याल आता है कि ये सब क्यों? अगर मैं आज नौकरी छोड़ दूं, तो कल सुबह मेरी जगह कोई और बैठा होगा। मेरा कंप्यूटर पासवर्ड तक भी कंपनी भूल जाएगी। ऐसा लगता है जैसे जिंदगी एक टूटे हुए रिकॉर्ड की तरह एक ही गाना बजाए जा रही है, और आप उसके बोल याद करके थक चुके हैं। ये कोई नई हैरान करने वाली बात नहीं लिखी है मैंने, हर दस में से आठ लोगों कि यही कहानी है। बुजुर्गों को लगता है कि उनको कोई सुनता नहीं है, युवाओं को लगता है कि उनको कोई समझता नहीं है। यही फीलिंग, यही अकेलापन, धीरे-धीरे अंदर ही अंदर इंसान को खोखला कर देता है। इस टेक्नोलॉजी के इस युग में हमने भावनात्मक संबंधों को कहीं खो दिया है। अंग्रेजी में क्या कहते है उसको, इमोशनल कनेक्शन..हां वहीं।

आजकल हमारे पास 500 फ्रेंड्स हैं फेसबुक पर और 200 कॉन्टैक्ट्स व्हॉट्स ऐप पर, लेकिन क्या कोई है जिसे हम रात 2 बजे बिना सोचे मैसेज कर सकें? हमने डिजिटल दुनिया में सैकड़ों कनेक्शन बना लिए, लेकिन असली दुनिया में उस एक इंसान को खो दिया जिसके साथ दो कप चाय पर दिल की हर बात कह सके। हमारी सबसे बड़ी समस्या यही है कि हम उस कल के लिए टेंशन में हैं जिस कल में शायद हम है ही नहीं। अब क्या पता ऊपर वाले ने हमारी टिकट पहले ही एडवांस बुक कर रखी हो। क्या पता कब, कहां और क्या आखिरी हो। इसलिए आज को जीना सीखो। शाररुख खान की 2003 में आई फिल्म के वो बोल, हर पल यहां..जी भर जीयो... जो है समां.. कल हो ना हो एकदम सटीक बैठते हैं। दुनिया में 800 करोड़ से ज्यादा लोग हैं और इसमें से आपको यह समझाना कि आपके लिए कोई नहीं है... ये गणित के नियमों के भी खिलाफ है! उस एक इंसान को ढूंढिए जो कंधे पर हाथ रखकर कहे कि सब ठीक हो जाएगा यार, एक ऐसी हंसी जो बिना किसी फिल्टर के सुनाई दे और एक ऐसा कान जो बिना हमें जज किए बस सुन ले कि क्या भसड़ मची है और इसे ही कहते हैं इमोशनल कनेक्शन। वो खास इंसान कोई भी हो सकता है जैसे बेस्ट फ्रेंड, पार्टनर, मां-बाप, या कोई आपका अच्छा सहकर्मी। पर इस लूप से भी बड़ा एक सदमा है जो हमारे युवाओं को झेलना पड़ रहा है। कितनी ही बार एक छात्र ये सोचकर हार मान लेता है कि उसका आने वाला कल सिर्फ एक कागज़ के टुकड़े पर निर्भर है। वो सब कुछ अंदर ही अंदर घुटता रहता है, और एक दिन... एक गलत फैसला कर बैठता है। क्या उसके सपनों, उसकी कला, उसकी मेहनत की कीमत सिर्फ 90% है? बिल्कुल नहीं! माँ-बाप को भी चाहिए कि बातचीत को एक रिपोर्ट कार्ड में समेटने और फोन पर.. बेटा टेस्ट में कितनी रैंक आई? याद रखो, बहुत पैसा लगा रहे हैं तुम पर, कुछ बनकर ही घर लौटना कहने कि बजाए बस पूछ लीजिए कि कोई दिक्कत तो नहीं नए शहर में ... कोई बात हो... तो बस इतना याद रखना, हम हैं तुम्हारे साथ, हमेशा। ये बात नहीं है कि पढ़ाई और करियर जरूरी नहीं। बिल्कुल हैं, पर उससे भी ज्यादा जरूरी है आपका बच्चा और उसका मानसिक स्वास्थ्य। कभी - कभी यूं ही बेवजह अपने बच्चों को गले लगा लिया करो क्योंकि इतिहास गवाह है कि बेटों को जीवन में एक बार ही पिता के गले लगने का मौका मिलता है जब वो कामयाब हो जाते हैं और बेटियों को, जब वो विदा होती हैं। तो जब अगली बार फोन लगे तो पहला सवाल नंबरों के बारे में नहीं, उसके बारे में हो। यही वह भावनात्मक जुड़ाव है जो हमें इंसान बनाता है। जब यह टूटता है, तो इंसान टूट जाता है। आत्महत्या के आंकड़े इसी अकेलेपन की चीख हैं। जिंदगी जीने के लिए बहुत छोटी है, लेकिन शिकायत लेकर मरने के लिए बहुत लंबी। हमारी असफलता अंत नहीं है, बल्कि एक नई शुरुआत का संकेत है। हर किसी की एक कहानी होती है। कुछ कहानियां इतिहास बन जाती हैं और कुछ दर्द की मारी, इंसान के साथ ही दफन हो जाती हैं। खुद के साथ ऐसा ना होने दें, दूसरों की सुने और खुद की सुनाएं और परफेक्शन से ज्यादा क्नेकशन बनाएं।

(लेखक स्पोर्ट्स यूनिवर्सिटी में असिस्टेंट प्रोफेसर हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

प्रेम व स्नेह के साथ मार्गदर्शन करती हैं मां जगदंबा

संकलित
दर्शन

इस जगत की प्रत्येक वस्तु, चर या अचर का मूल स्रोत एक निगूढ़ शक्ति है, जो तर्क और बुद्धि की सीमा के परे है! कोई पूछे कि यह शक्ति स्त्रीलिंग है या पुंल्लिंग, तो उत्तर के स्त्रीलिंग होने की संभावना अधिक है। जैसे एक नए जीवन को गढ़ने के लिए सहनशीलता, धैर्य, करुणा और क्षमता एक मां में ही होती है, वैसे ही विश्वमातृत्व की अनंत शक्ति ही इतने महत एवं विशाल जगत को जन्म दे सकती है। नवरात्र में, पहले तीन दिन दुर्गा देवी की उपासना की जाती है, फिर अगले तीन दिन लक्ष्मी देवी की और अंतिम के तीन दिन सरस्वती देवी की! देवी के ये तीन रूप क्रमशः तीन गुणों के प्रतीक हैं-तमोगुण, रजोगुण और सतोगुण। यहां हम आश्चर्य में पड़ सकते हैं कि दुर्गा देवी तम की प्रतीक क्यों? भौतिक जगत में रहते हुए थोड़े-बहुत तमोगुण की भी आवश्यकता होती है। तमस पर्याप्त न हो तो हम ठीक से सो भी नहीं पाएंगे। आज कितने लोग अनिद्रा से ग्रस्त नींद की गोलियों के आदी हैं? क्यों उन्हें ठीक से नींद नहीं आती? क्योंकि उनके शरीर में तमस की कमी है। अतः वे अपने शरीर में कृत्रिम रूप से तमस का निर्माण करते हैं! बीच के तीन दिन, देवी की पूजा लक्ष्मी रूप में होती है-रजोगुण के रूप में, जिसकी आवश्यकता किसी भी कार्य को करने में होती है। पैसा कमाना हो, चाहे कोई इच्छा पूरी करनी हो। शरीर में अत्यधिक या अति न्यून रजोगुण होना भी समस्याएं खड़ी करता है। अत्यधिक रजोगुण होगा तो ठीक से सोच भी नहीं सकते और शांति-विश्रांति भी दूर रहती है! फिर तनाव, चिंता और उच्च रक्तचाप हो जाता है।

पैसा, सेहत और ज्ञान से जुड़े कामों में देर न करें

संकलित
प्रेरणा

एक दिन श्रीकृष्ण उद्धव की भेंट हुई तो श्रीकृष्ण ने उद्धव को एक ब्राह्मण की कहानी सुनाई। श्रीकृष्ण ने बताया कि एक ब्राह्मण ने खेती और व्यापार करके खूब धन कमाया था। वह धनी था, वह बहुत ही कंजूस भी था। धन आया तो उसका मन गलत कामों में लग गया, वह लालची भी था। बुरी आदतों के साथ ही उसे अहंकार भी हो गया, बात-बात पर वह गुस्सा करने लगा। अपने मित्रों से और रिश्तेदारों से भी ठीक से व्यवहार नहीं करता था। ब्राह्मण के व्यवहार की वजह से उसके घर-परिवार के लोग और मित्र लोग दुखी रहने लगे। वह धनी था, लेकिन और धन कमाना चाहता था। कंजूस इतना था कि वह अपने ऊपर भी खर्च नहीं करता था, लेकिन समय के साथ धीरे-धीरे उसका धन खर्च होने लगा। कुछ धन उसके घर-परिवार वालों ने ही छीन लिया। कुछ चोरी हो गया। कुछ चीजें अपने आप नष्ट हो गई। धनी ब्राह्मण का बुरा समय शुरू हुआ तो उसे व्यापार में भी नुकसान हो गया। इसी तरह कुछ ही दिनों में उसका पूरा धन बर्बाद हो गया। अब वह गरीब हो गया तो किसी ने उसकी मदद नहीं की। गरीबी के दिनों में उस ब्राह्मण को अपनी गलतियां याद आने लगीं। वह सोचने लगा कि उसने कभी भी किसी पर धन खर्च नहीं किया। घर-परिवार के लोगों से और मित्रों से बुरा व्यवहार किया। अब मेरी कोई मदद नहीं कर रहा है, ये सब मेरे ही कर्मों का फल है। मैंने कभी भी अपने धन का सही उपयोग नहीं किया।

ओणम उत्सव का समापन

केरल के तिरुवनंतपुरम में मंगलवार को सप्ताह भर चलने वाले ओणम उत्सव के समापन पर ओणम के दौरान कथकली कलाकार प्रस्तुति देते हुए।

आज की पाती

हानिकारक खरपतवार, गाजर घास

गाजर घास (पार्थेनियम हिस्ट्रोफोरस), जिसे तारा घास के नाम से भी जाना जाता है। अमेरिका, एशिया और अफ्रीका में यह एक मुख्य और हानिकारक खरपतवार है। हमारे देश में इसका प्रवेश 1950 में अमेरिका और कनाडा से आयातित गेहूं के साथ हुआ था। 1950 के दशक में पुणे और महाराष्ट्र में इसे सबसे पहले देखा गया। बरसात के मौसम में इस घास की प्रचुर मात्रा में वृद्धि होती है, लेकिन यह पौधा हर तरह के वातावरण में तेजी से उठकर फसलों, मनुष्य और पशुओं के लिए एक गंभीर समस्या है। इसे अक्सर खाली पड़ी जमीनों, सड़कों, रेलवे ट्रैक और बंजर भूमि पर देखा जाता है। गाजर घास एलर्जी संबंधित समस्याओं का मुख्य कारण है। इसके सेवन से पशुओं में खुजली और दूध में कड़वापन आ जाता है। *– मदन यादव, भाटापारा*

ट्रेंड

दौरा किया

बाढ़ और भूस्खलन के बाद की स्थिति का जायजा लेने के लिए आज हिमाचल प्रदेश और पंजाब का दौरा किया और प्रभावित लोगों से बातचीत की। भारत सरकार इस दुखद घड़ी में प्रभावित लोगों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर खड़ी है।

-नरेंद्र मोदी, प्रधानमंत्री

लोकतंत्र की शक्ति

उपराष्ट्रपति चुनाव 2025 में मतदान के लिए सभी माननीय सांसदों का धन्यवाद। अब हम मतगणना और परिणाम की प्रतीक्षा कर रहे हैं। सदस्यों की सामूहिक इच्छाशक्ति हमारे संसदीय लोकतंत्र की सच्ची भावना को दर्शाती है। यही हमारे लोकतंत्र की शक्ति है।

- किरण रिजिजू, केंद्रीय मंत्री

विशेष महसूस कर रहा

धैर्य से लाइन में लगे, 3 घंटे की तपस्या हुई, परन्तु मतदान करने के बाद बहुत ही विशेष महसूस कर रहा हूं। आज लोकतंत्र के इस महान पर्व पर संसद भवन में भारत के उपराष्ट्रपति चुनाव में अपना मतदान किया।

- मनोज तिवारी, भाजपा सांसद

पैरों पर खड़ा करना

हमें पंजाब को फिर से अपने पैरों पर खड़ा करना है। हम जानवरों के लिए चारा, सैनिटरी पैड, गद्दे, तिरपाल, ये सभी चीजें बांट रहे हैं। मैं प्रधानमंत्री को धन्यवाद देना चाहता हूं कि वह यहां आ रहे हैं।

- सोनू सूद, अभिनेता

करंट अफेयर

किम ने नए रॉकेट इंजन के परीक्षण की निगरानी की

उत्तर कोरिया ने मंगलवार को कहा कि उनके नेता किम जोंग उन ने अंतरमहाद्वीपीय बैलिस्टिक मिसाइलों (आईसीबीएम) के लिए डिजाइन किए गए एक नए रॉकेट इंजन के परीक्षण की निगरानी की। आईसीबीएम एक ऐसी मिसाइल होती है जो एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप तक मार कर सकती है। इसे लंबी दूरी की मारक क्षमता वाली मिसाइल कहा जाता है। उत्तर कोरिया की सरकारी 'कोरियन सेंट्रल न्यूज एजेंसी' ने अपनी खबर में बताया कि ठोस ईंधन चलित रॉकेट इंजन का नौवां और अंतिम जमीनी परीक्षण सोमवार को किया गया। यह इंजन कार्बन फाइबर से बना है और 1,971 किलोन्यूटन की ताकत पैदा कर सकता है, जो पहले के मॉडलों की तुलना में अधिक शक्तिशाली है। किम ने एक सप्ताह पहले उस शोध संस्थान का निरीक्षण किया था, जिसने यह इंजन विकसित किया है। इसके बाद ही परीक्षण की यह खबर सामने आई है। उस समय किम के निरीक्षण के दौरान उत्तर कोरिया ने कहा था कि यह इंजन भविष्य में अंतरमहाद्वीपीय बैलिस्टिक मिसाइलों के लिए इस्तेमाल होगा, जिसमें 'ह्वासोंग-20' नामक प्रणाली भी शामिल है। पिछले कुछ वर्षों में उत्तर कोरिया ने कई तरह की अंतरमहाद्वीपीय बैलिस्टिक मिसाइलों का परीक्षण किया है।

ऑफ बीट

संरक्षित सब्जियां क्यों बन सकती हैं जानलेवा

दक्षिणी इटली के एक फूड ट्रक से जुड़ी खाद्य जनित बीमारी हाल ही में दो लोगों की मौत और दर्जनों को अस्पताल पहुंचाने का कारण बनी। इसका कारण संरक्षित सब्जियों में मौजूद क्लॉस्ट्रिडियम बोटुलिनम नामक बैक्टीरिया था, जो बोटुलिज़्म नामक एक घातक बीमारी के लिए जिम्मेदार है। ब्रोकली के एक विशेष खेप को लेकर ब्रिटेन की फूड स्टैंडर्ड्स एजेंसी ने भी हाल ही में चेतावनी जारी की है। आशंका जताई जा रही है कि उसमें भी बोटुलिनम विषाणु हो सकता है। कैसे बनता है यह ज़हर : कैनिंग प्रक्रिया के दौरान भोजन से हवा निकाल दी जाती है और उसे कसकर बंद कर दिया जाता है, जिससे एक ऑक्सीजन-रहित (एनेरोबिक) वातावरण बन जाता है। आमतौर पर यह प्रक्रिया भोजन को लंबे समय तक सुरक्षित रखती है, लेकिन यह वातावरण क्लॉस्ट्रिडियम बोटुलिनम के लिए आदर्श स्थितियां भी पैदा कर सकता है। इस बैक्टीरिया के बीजाणु यानी स्पोर आम तौर पर मिट्टी में पाए जाते हैं और यह उच्च तापमान पर पकाने के बावजूद जीवित रह सकते हैं। खासकर ब्रोकली, हरी फलियां, मक्का, चुकंदर और मटर जैसे कम अम्लीय खाद्य पदार्थों में, यदि कैनिंग प्रक्रिया पर्याप्त गर्म या लंबी नहीं हुई हो, तो ये बीजाणु सक्रिय होकर ज़हर पैदा कर सकते हैं।

अपने विचार
हरिभूमि कार्यालय
टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से hbcgpati@gmail.com पर भेज सकते हैं।

सेना में एकल कमांड

सुधार पर बहस

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ ने एक बार कहा था, परिवर्तन के बिना प्रगति असंभव है। वास्तव में, यथास्थिति बनाए रखना कोई प्रगति नहीं है और अंततः यह आपको दौड़ में पीछे छोड़ देती है। हमारे आसपास की दुनिया बदल रही है - भू-राजनीति तेजी से बदल रही है, इसलिए यह जरूरी है कि नए युग की चुनौतियों का सामना करने के लिए हमारी तैयारी को उन्नत किया जाए, ताकि हम बदलते समय की चुनौतियों का सामना कर सकें। रक्षा तैयारियाँ भी इसका अपवाद नहीं हैं, खासकर जब हमारे प्रतिद्वंद्वी तेज गति से उन्नत हो रहे हैं। दुर्भाग्य से, संगठन की एक प्रिय अवधारणा - रंगमंचीकरण - फाइलों में ही अटकी पड़ी है। लेकिन सेना प्रमुख की हालिया टिप्पणियों ने इसे नई प्रासंगिकता प्रदान की है।

थिएटरीकरण पर सेना प्रमुख के विचार संदेह की कोई गुंजाइश नहीं छोड़तेः भारत को इस सुधार को अपनाना ही होगा, आज नहीं तो कल। जनरल उपेंद्र द्विवेदी का यह कहना कि सशस्त्र बलों का पुनर्गठन ₹अपरिहार्य और समय की आवश्यकता₹ दोनों है, ऐसे समय में आया है जब सेवाओं के भीतर बहस खुलकर सामने आ गई है। संज्ञानात्मक युद्ध के लिए एक एजेंसी—सूचना क्षेत्र का विस्तार—के निर्माण का उनका अतिरिक्त उल्लेख आगे आने वाली चुनौतियों के दायरे को और बढ़ा देता है। मूलतः, थिएटराइजेशन का अर्थ है थलसेना, नौसेना और वायुसेना को एक ही ऑपरेशनल कमांडर के साथ संयुक्त कमान के तहत एकीकृत करना। यह एक समय-परीक्षित संगठनात्मक सुधार है जिसे भारत को लागू करने की आवश्यकता है। यह एक साधारण सत्य पर आधारित हैः युद्ध अब अलग-अलग सेनाओं द्वारा अपने-अपने क्षेत्र की रक्षा के लिए नहीं लड़े जाते,

बल्कि बहु-क्षेत्रीय अभियानों के रूप में लड़े जाते हैं जो भूमि, समुद्र, वायु, साइबर, अंतरिक्ष और सूचना के क्षेत्र में फैले होते हैं। उत्तर में भारत की सीमाएँ और दक्षिण में विशाल समुद्री विस्तार, खंडित दृष्टिकोण के लिए बहुत कम जगह छोड़ते हैं। चाहे वह अग्रिम मोर्चे पर तैनात बीएसएफ और आईटीबीपी हों, साइबर और अंतरिक्ष एजेंसियाँ हों, या इसरो और रेलवे जैसी नागरिक संस्थाएँ हों—अगले युद्ध में समन्वय के लिए एकल कमान बिंदु की आवश्यकता होगी। थिएटराइजेशन ठीक यही प्रदान करना चाहता है।

और फिर भी, इस विचार के पहली बार सामने आने के दो दशक से भी अधिक समय बाद, इसे लागू करना अभी भी मुश्किल बना हुआ है। सेना ने लगातार थिएटराइजेशन का समर्थन किया है, और जनशक्ति को सुव्यवस्थित करने और कमान को तेज करने की इसकी क्षमता को पहचाना है। नौसेना भी इसका समर्थन कर रही है, लेकिन वायु सेना सतर्क रही है। सीमित लड़ाकू स्क्वाड्रनों और उच्च-मूल्य वाली संपत्तियों के साथ, यह संसाधनों को कई थिएटर कमांडों में बाँटने के बजाय केंद्रीकृत नियंत्रण को प्राथमिकता देती है। इसके नेतृत्व का तर्क है कि वायु शक्ति स्वाभाविक रूप से लचीली होती है और इसे कठोर भौगोलिक सीमाओं में नहीं बाँधा जाना चाहिए। उनका तर्क है कि इससे सिद्धांत, पदानुक्रम और संस्थागत पहचान प्रभावित होगी। लेकिन इसके फायदे चुनौतियों से कहीं अधिक हैं। अमेरिका और चीन ने इस सुधार से लाभ उठाया है। अब समय आ गया है कि वायु सेना की शंकाओं का समाधान खोजा जाए और आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ा जाए। थिएटराइजेशन का मतलब किसी एक सेवा को कम करना नहीं है, बल्कि राष्ट्रीय आपातकाल के समय में तुरंत प्रतिक्रिया देने की राष्ट्र की सामूहिक क्षमता को मजबूत करना है।

वैश्विक मंच पर भारतीय सिनेमा

वेनिस से लेकर टोरंटो और बुसान तक, भारतीय सिनेमा अब सिर्फ.एक उत्सव का मेहमान नहीं, बल्कि एजेंडा तय करने वाली एक ताकत बन गया है। पुनर्स्थापनों, प्रीमियर और अंतरराष्ट्रीय परियोजनाओं के साथ, भारत अपनी विरासत को संजो रहा है, समकालीन प्रतिभाओं को प्रदर्शित कर रहा है और बाजारों को आकार दे रहा है।

चैतन्य के प्रसाद
लेखक, पूर्व सिविल सेवक हैं।

भारत विश्व के त्यौहारों के मानचित्र के केंद्र में वापस आ गया है, किसी मौसमी मेहमान के रूप में नहीं, बल्कि एजेंडा तय करने वाली एक ताकत के रूप में। इसकी झलक हर जगह दिखाई दे रही हैः एक नवयथार्थवादी मील का पत्थर, बिमल रॉय की ₹दो बीघा जमीन₹, नए सिरे से पुनर्स्थापित 4ङ में वेनिस लौट रही है, टोरंटो अपने 50वें वर्ष का जश्न दक्षिण एशियाई देशों में रिकॉर्ड उपस्थिति के साथ मना रहा है, जिसमें प्रमुख भारतीय प्रीमियर और ₹शोले₹ का एक भव्य पुनरुद्धार शामिल है; और बुसान का अक्टूबर कैलेंडर पहले से ही प्रोग्रामिंग और एशियाई प्रोजेक्ट मार्केट, दोनों में भारतीय फीचर फि ल्मों और भारतीय समर्थित परियोजनाओं से भरा पड़ा है। कुल मिलाकर, ये कोई अलग-थलग जीत नहीं हैं; ये एक ऐसे देश का उदाहरण हैं जो शिल्प की गहराई, पुनरुद्धार की ताकत, प्रोग्रामिंग संबंधों और अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क को सांस्कृतिक शक्ति में बदल रहा है।

वेनिस में, विरासत का यह मोड़ साफ दिखाई देता है। जब दो बीघा जमीन वेनिस क्लासिक्स की सूची में शामिल होगी, तो यह न केवल उस फि ल्म की विजयी वापसी होगी जिसने कभी भारत की आजादी के बाद की चिंताओं को दुनिया तक पहुंचाया था, बल्कि यह भारत के पुनरुद्धार पारिस्थितिकी तंत्र को भी प्रदर्शित करेगी। यह पुनरुद्धार उच्चतम मानकों वाली अंतर्राष्ट्रीय साझेदारियों के साथ किया गया है, जिसमें रॉय की फि ल्म को कुब्रिक, कीस्लोव्स्की और कोबायाशी की पुनर्स्थापित कृतियों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर रखा गया है। यह एक आदर्श वाक्य है, शिष्टाचार नहीं। यह दशार्ता है कि भारत केवल नई फि ल्मों का निर्यात ही नहीं कर रहा है, बल्कि दुनिया के सबसे सटीक दर्शकों के सामने अपनी स्मृति को संजो रहा है।

टोरंटो का स्वर्ण जयंती संस्करण भारतीय सिनेमा के वर्तमान काल का प्रदर्शन बन गया है। इस वर्ष नीरज घायवान की होमबाउंड (एक भव्य समारोह, मार्टिन स्कॉसेर्सी द्वारा कार्यकारी-निर्मित), अनुराग कश्यप की बंदर (बंदर इन अ केज) और विकास रंजन मिश्रा की बयान जैसी उच्च-स्तरीय भारतीय फि ल्में प्रदर्शित हो रही हैं। टीआईएफएफ क्लासिक्स में, शोले की पुनरुद्धार वर्षगांठ पर प्रमुखता से सुर्खियों में है।

क्यूरेटोरियल की मुख्य बात स्पष्ट हैः समकालीन भारतीय लेखक घर के सामने की जमीन ले रहे हैं, जबकि क्लासिक भारतीय सिनेमा को वैश्विक विरासत के रूप में स्थापित किया जा रहा है। एक ही महोत्सव दोनों को सर्वोच्च दृश्यता के साथ प्रदर्शित कर सकता है, यह इस बात का मापदंड है कि आज विश्व सिनेमाई कल्पना में भारत किस स्थान पर है।

पैमाने का मामला भी है। टीआईएफएफ ने इसे एक रिकॉर्ड वर्ष कहा हैः आधिकारिक चयन में भारत, दक्षिण एशिया और प्रवासी समुदाय से 17 फिल्में और श्रृंखलाएं - भारत से आठ, भारत से परे दक्षिण एशिया से चार और प्रवासी शीर्षक पांच। केवल संख्याएं मायने नहीं रखतीं, लेकिन एक ऐसे महोत्सव में जहां चयन निर्मम होता है, मात्रा दृश्यता बन जाती है, और दृश्यता वितरण और पुरस्कार मार्गों में परिवर्तित हो जाती है। यह एक समूह है, संयोग नहीं।

बुसान, जो अक्सर वह प्रयोगशाला होती है जहां एशियाई सिनेमा की अगली लहर सबसे पहले देखी जाती है, इस वर्ष भारतीय कहानियों में भी गहराई से निवेशित है। आधिकारिक चयन में पहले से ही विभिन्न वर्गों में कई भारतीय फीचर शामिल हैंः संजू सुरेंद्रन की इफ ऑन ए विंटर्स नाइट और महर्षि तुहिन कश्यप की कोक्कोकोकोक विजन - एशिया में, ट्रिबेनी राय की शेप ऑफ मोमो (भारत/कोरिया) उसी वर्ग में; और विकास रंजन मिश्रा की बयान, अनूप लोकुर की डोंट टेल मदर, और तनिष्ठा चटर्जी की फुल प्लेट इन ए विंडो ऑन एशियन सिनेमा। नई लॉन्च की गई प्रतियोगिता में, स्पाईंग स्टार्स फ्रांस-श्रीलंका-भारत के सह-निर्माण के रूप में दिखाई देती है, जो रेखांकित करती है कि कैसे भारतीय पूंजी और रचनात्मक प्रतिभाएं बहुराष्ट्रीय परियोजनाओं में निवास करती हैं।

बाजार का पक्ष भी उतनी ही महत्वपूर्ण कहानी कहता है। एशियन प्रोजेक्ट मार्केट 2025 ने 30 परियोजनाओं का अनावरण किया है, जिसमें भारत के निमार्ता और रचनात्मक प्रमुख हैंः कुंजिला मस्किल्लामणि की द लास्ट ऑफ देम प्लेग्स को पायल कपाड़िया, जियो बेबी और कानी कुसरुति का समर्थन प्राप्त है; सौरव राय की लंका (द फायर) भारतीय चयनों में से एक है; और मुख्यधारा के स्टार पावर विकास में कदम रखते हैं, जिसमें आलिया भट्ट निमार्ता के रूप में जुड़ी हैं, जिसे व्यापक रूप से डिफिकल्ट डॉटर्स/डिफिकल्ट गर्ल्स के रूप में रिपोर्ट किया गया है यह उछाल पिछले साल कान में हुई ऐतिहासिक उपलब्धि के कारण है, जहां पायल कपाड़िया की फिल्म ऑल वी इमेजिन एज लाइट ग्रैंड प्रिक्स जीतने वाली पहली भारतीय फिल्म बनी थी, जिसने कान प्रतियोगिता में भारत के लिए 30 साल का अंतराल समाप्त कर दिया था।

कान्स पोडियम टोरंटो की सूची नहीं है और न ही वेनिस की क्लासिक्स स्लेट है, लेकिन साथ में वे एक ही संदेश देते हैंः प्रोग्रामर, जूरी और भौगोलिक क्षेत्रों के बाजार भारतीय सिनेमा की गंभीरता, रेंज और निर्यात क्षमता के इर्द-गिर्द एकजुट हो रहे हैं।

यह क्षण भारत की वैश्विक स्थिति के बारे में क्या कहता है यह स्पष्ट है। भारत भागीदार से मंच की ओर बढ़ रहा है। वेनिस, टोरंटो और बुसान में, यह एक साथ कई रजिस्टरों में मौजूद हैः कैनन, समकालीन और पाइपलाइन। फिल्में भेजने और टेबल सेट करने के बीच यही अंतर है। भारतीय फिल्मों की उपस्थिति भारतीय क्यूरेटोरियल प्रभाव से परिलक्षित होती हैः टीआईएफएफ की वरिष्ठ कार्यक्रम सलाहकार (दक्षिण एशिया) मीनाक्षी शेडे ने उत्तरी अमेरिकी और यूरोपीय द्वारपालों के बीच दक्षिण एशियाई आवाजों में विश्वास पैदा करने में दशकों बिताए हैं। वेनिस के लिए दो बीघा जमीन और टीआईएफएफ के लिए शोले को पुनर्स्थापित करना एक नीतिगत समझ का संकेत देता है कि क्लासिक भारतीय सिनेमा को संरक्षित और प्रसारित करने से सांस्कृतिक पूंजी अर्जित होती है जिसे केवल प्रीमियर से नहीं खरीदा जा सकता। यह समकालीन रिलीज में नए दर्शकों को आकर्षित करते हुए भारत को फिल्म इतिहास में स्थापित करता है। साथ ही, अंतरराष्ट्रीय निर्माण एक आदर्श है, अपवाद नहीं।

बुसान प्रतियोगिता में भारत-फ्रांस-श्रीलंका सहयोग से लेकर एपीएम में भारत समर्थित परियोजनाओं और टीआईएफएफ में भारतीय निर्देशकों के इर्द-गिर्द वैश्विक निर्माण समूह तक, भारत की रचनात्मक अर्थव्यवस्था सह-निर्माण में निपुण है। यह 'भारतीय सिनेमा' को किसी एक देश की पाइपलाइन के बजाय एक अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क के रूप में पुनर्परिभाषित करता है।

अंततः, प्रवासी गुणक वास्तविक है। टीआईएफएफ के रिकॉर्ड 17 दक्षिण एशियाई शीर्षक बताते हैं कि कैसे भारतीय डीएनए वाली कहानियाँ सीमाओं और दर्शक वर्गों के पार पहुँचती हैं। प्रवासी दृश्यता वितरकों के लिए बाजार जोखिम को कम करती है जबकि गुरुत्वाकर्षण का केंद्र भारतीय रचनात्मक श्रम और विषयों से जुड़ा रहता है। यह एक राजस्व मॉडल के साथ सॉफ्ट पावर है।

निकट भविष्य में, सभी की निगाहें होमबाउंड, बंदर और बयान के टीआईएफएफ प्रीमियर पर टिकी हैं कि आलोचक और खरीदार उन्हें पुरस्कार-सीजन में कैसे पेश करते हैं; शोले के लिए टीआईएफएफ क्लासिक्स रिसेप्शन पर उत्तरी अमेरिकी दर्शकों के लिए प्रामाणिक भारतीय सिनेमा के तापमान की जाँच के रूप में; और बुसान के विजन-एशिया शीर्षकों और एपीएम सौदों पर उन संकेतों के लिए कि किन भारतीय फिल्म निमार्ताओं को विकास से वैश्विक वितरण की ओर अग्रसर होना है।

यदि आप इसे दो चक्रों में विभाजित करते हैं, इस शरद ऋतु में वेनिस/बुसान, अगले वसंत में बर्लिन/कान्स, तो आप देखेंगे कि भारतीय सिनेमा की उपस्थिति अब एक लय की तरह व्यवहार करती है, न कि एक उछाल की तरह। व्यापक अर्थ सरल हैः भारत का रचनात्मक इंजन तेजी से विविधतापूर्ण और पेशेवर हो रहा है, और दुनिया के सबसे प्रतिस्पर्धी महोत्सव पारिस्थितिकी तंत्र उसी तरह प्रतिक्रिया दे रहे हैं।

ऋणदाता के तौर पर भारत का भविष्य

एक व्यावसायिक खुफिया रिपोर्ट के अनुसार, भारत का वैकल्पिक ऋण बाजार सालाना 26 प्रतिशत से अधिक की दर से बढ़ रहा है। यह उद्योग पहले से ही एक आदर्श बदलाव के दौर से गुजर रहा हैः परिसंपत्ति–समर्थित ऋण से व्यवहार विश्लेषण की ओर।

शशांक सौरव
लेखक, चार्टर्ड एकाउंटेंट हैं।

बहुत कम लोग भविष्य की अवधारणाओं को इतने सरल शब्दों में प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत कर सकते हैं, जितना कि इंफोसिस के गैर-कार्यकारी अध्यक्ष नंदन नीलेकणी कर सकते हैं। 2016 में, उन्होंने एक ऐसे भविष्य के बारे में स्पष्ट रूप से कहा था जब ऋण और बैंकिंग संचालन पूरी तरह से डिजिटल होंगे।

2024 में, उन्होंने फिन्टरनेट शब्द गढ़ा - वित्तीय प्रणालियों का भविष्य। हाल ही में, उन्होंने बताया कि कैसे भारत 2035 तक दस लाख स्टार्ट-अप की मेजबानी करेगा।

इन भविष्यवाणियों को परस्पर मिला दें और हम यह विश्वास कर सकते हैं कि यह रास्ता भारत की बैंकिंग प्रणाली को कागज रहित ऋण से आगे छलांग लगाते हुए देख सकता है, एक उपस्थिति-रहित और सहमति-आधारित विश्वास नेटवर्क तक। यह परिवर्तन उन लाखों स्टार्ट-अप और ग्रामीण उद्यमों को सक्षम करने के लिए है जिन्हें भरोसेमंद, चुस्त और तकनीक-समृद्ध ऋण की आवश्यकता है।

यह डेटा मोबाइल फोन के उपयोग, बिजली के उपयोग और यहां तक कि यूपीआई भुगतानों से संबंधित हो सकता है ताकि उन छोटी-छोटी जानकारियों का पता लगाया जा सके - वे निशान जो ऋण के उद्देश्य और चुकाने की क्षमता के बारे में अधिक बताते हैं। यह वह ज्ञान है जो एक अच्छे बैंक के गहन विश्लेषण और व्याख्या से प्राप्त डेटा प्रदान करने में विफल रहता है।

एक व्यावसायिक खुफिया रिपोर्ट के अनुसार, भारत का वैकल्पिक ऋण बाजार सालाना 26 प्रतिशत से अधिक की दर से बढ़ रहा है। यह उद्योग पहले से ही एक आदर्श बदलाव के दौर से गुजर रहा हैः परिसंपत्ति-समर्थित ऋण से व्यवहार विश्लेषण की ओर।

यह बदलाव भारत के वित्तीय पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर जोखिम मूल्यांकन पद्धतियों के एक मौलिक पुनसंयोजन का प्रतिनिधित्व करता है।

इस बदलाव के दो कारण हैं। पहला, ग्राहकों की मांग; दूसरा, फोमो (छूट जाने का डर)। आज, भारत में लगभग 63 मिलियन मध्यम, लघु एवं सूक्ष्म उद्यम में से अधिकांश के पास औपचारिक ऋण तक पहुंच नहीं है - मुश्किल से 14 प्रतिशत औपचारिक रूप से ऋण तक पहुंच पा रहे हैं। ऐसा इसलिए नहीं है।

क्योंकि ऐसे उद्यम जोखिम भरे हैं, बल्कि इसलिए है क्योंकि वे पारंपरिक बैंकिंग और वित्तीय प्रणालियों के लिए ज्यादातर अदृश्य रहे हैं।

ग्राहकों की मांग इस आधार से भी उपजी है कि आज, ग्राहक सेकंडों में सेवा वितरण की मांग करते हैं। इसलिए, वित्तीय संस्थानों को व्यापक दस्तावेजीकरण और कठोर संपार्श्विक आवश्यकताओं पर आधारित नहीं किया जा सकता। इसलिए, ऐसी प्रक्रियाएँ अभूतपूर्व, फिर भी मौन अप्रचलन का अनुभव कर रही हैं। बैंक वैकल्पिक डेटा स्रोतों पर निर्भर हैं।

दूसरा, अधिकांश संगठनों और उद्यमों ने सीख लिया है कि यह एक सरल खेल है - प्रदर्शन करो या नष्ट हो जाओ। इसलिए, नए मानकों को न अपनाना अस्तित्व के लिए एक जोखिम है। जो बेहतर पूवार्नुमान क्षमता प्रदर्शित कर सकते हैं, वे न केवल जीवित रहते हैं बल्कि बढ़ते भी हैं। इसलिए, डिजिटल परिवर्तन की यात्रा नए पुनरावृत्तियों के साथ उभरी है - एक जो कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मशीन लर्निंग एल्गोरिदम और व्यापक डिजिटल फुटप्रिंट विश्लेषण को एकीकृत करती है।

मशीन लर्निंग वही कर रही है जो जोखिम अधिकारी पहले सहज ज्ञान के आधार पर किया करते थे, लेकिन बड़े पैमाने पर। आज, एल्गोरिदम सैकड़ों व्यवहारिक चरों को पढ़कर यह अनुमान लगा सकते हैं कि कोई उधारकर्ता 15,000 का साधारण ऋण चुकाएगा या नहीं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता पर आधारित तकनीक इस दुविधा को सेकंडों में समझने में मदद कर सकती है। और यह एक पुनरावृत्त शक्ति है। 2023 तक, भारत में डिजिटल ऋण 350 अरब डॉलर से अधिक हो गया, जो 2012 में केवल 9 अरब डॉलर था।

इस क्षमता का अधिकांश भाग एआई-समर्थित अंडरराइटिंग और रीयल-टाइम एपीआई द्वारा संचालित है जो जीएसटी डेटा, ई-केवाईसी, बैंक स्टेटमेंट और वैकल्पिक डेटा को सेकंडों में प्राप्त करते हैं। ये प्रणालियां ऋण देने को और भी स्मार्ट बनाती हैं।

आज का नया जोखिम इंजन विशाल है और कई तकनीकी परतों को घेरे हुए है। यह ब्लॉकचेन और स्मार्ट कॉन्ट्रैक्ट हो सकते हैं जिनका उपयोग वर्तमान में धोखाधड़ी को कम करने के लिए किया जाता है।

यह समय पर पुनर्भुगतान को सुनिश्चित करने के लिए स्वचालित संदेश भी हो सकते हैं। इसके साथ-साथ ही यह कृषि-आधारित मध्यम, लघु एवं सूक्ष्म उद्यम के जोखिम का आकलन करने के लिए उपग्रह-आधारित फसल डेटा का लाभ उठाने की ऋणदाताओं की क्षमता भी हो सकती है।

ऋण देने में दस्तावेजीकरण की हमेशा एक भूमिका होगी। लेकिन भविष्य व्यवहार के विश्लेषण और वास्तविक क्षमता के लिए वैकल्पिक डेटा का लाभ उठाने से निर्मित विश्वास में निहित है। परिणामी प्रणाली, बैंकिंग की समय-परीक्षित प्रक्रियाओं को वैकल्पिक डेटा के साथ एकीकृत करके, विश्वास-आधारित ऋण और तकनीकी नवाचार को जन्म देगी। यह भारत के वित्तीय सेवा परिदृश्य में एक परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता है - एक ऐसा परिदृश्य जो ज़िम्मेदार नवाचार को सुगम बनाता है।

तकनीकी परिष्कार पहले से वंचित आबादी के लिए वित्तीय समावेशन के अभूतपूर्व अवसर खोलता है। यह संगठनों को जोखिम-समायोजित मूल्य निर्धारण जैसे नए उत्पाद बनाने में भी सक्षम बनाता है जो जनसांख्यिकीय सामान्यीकरण या परिसंपत्ति स्वामित्व पैटर्न के बजाय वास्तविक उधारकर्ता विशेषताओं को दर्शाते हैं।

यह प्रतिमानात्मक विकास औपचारिक ऋण तक पहुंच को मौलिक रूप से लोकतांत्रिक बनाता है, साथ ही स्थायी ऋण प्रथाओं के लिए आवश्यक विवेकपूर्ण जोखिम प्रबंधन मानकों को बनाए रखता है।

भारत के ऋण देने वाले पारिस्थितिकी तंत्र के लिए, संदेश स्पष्ट हैः जो लोग बैलेंस शीट से परे आँकड़ों को सुनना सीखते हैं, वे बेहतर, गहन और अधिक निष्पक्ष ऋण देंगे।

आप की बात

नेपाल, बांग्लादेश और श्रीलंका में आग

पिछले चार वर्षों में दक्षिण एशिया की राजनीति में एक अजीब समानता उभरी है युवा नेतृत्व वाले जनांदोलन, भ्रष्टाचार और सत्ता के केंद्रीकरण के खिलाफ उग्र विरोध, और अंततः सरकारों का झुकना। नेपाल की हालिया हिंसा इसी सिलसिले की अगली कड़ी है। बांग्लादेश में भी व श्रीलंका में इसयी तरह का जनाक्रोश देखने को मिला था। नेपाल में सितंबर 2025 में सोशल मीडिया बैन के खिलाफ शुरू हुए जेन जी आंदोलन ने राजधानी काठमांडू को हिला दिया। प्रदर्शनकारियों ने संसद और सुप्रीम कोर्ट तक कब्जा कर लिया, कई मंत्रियों को इस्तीफा देना पड़ा, और प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली को पद छोड़ना पड़ा। यह आंदोलन सिर्फ एक तकनीकी प्रतिबंध के खिलाफ नहीं था यह युवाओं की अभिव्यक्ति की आजादी, भ्रष्टाचार और भाई-भतीजावाद के खिलाफ एक निर्णायक विद्रोह था।ऐसे ही हालात 2024 में बांग्लादेश में और उसके पहले श्रीलंका में 2022 में देखे गए जब छात्र आंदोलन ने तत्कालीन सरकारों को हिला दिया ।इन तीनों देशों में एक समान पैटर्न दिखता है युवा पीढ़ी, जो सोशल मीडिया पर पली-बढ़ी है, अब सड़कों पर उतरकर बदलाव की मांग कर रही है। वे सिर्फ नारे नहीं लगा रहे, बल्कि सत्ता की चूलें हिला रही हैं।

– **भगवानदास छारिया**, सोमानी नगर, इंदौर

निर्दयता की पराकाष्ठा

गाजा पट्टी में जारी जंग जितनी भीषण हुई है इजराइल सरकार की नीतियां भी उतनी ही विभत्स साबित हुई है।सरकार के कृत्य अक्सर अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों पर सवाल उठाते हैं। हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि फलस्तीनी कैदियों को पर्याप्त और गुणवत्तापूर्ण भोजन न देना न केवल कानून के खिलाफ है बल्कि यह अमानवीयता की पराकाष्ठा भी है। युद्ध जैसी परिस्थितियों में भी कैदियों के बुनियादी अधिकारों से वंचित करना मानवता पर सीधा प्रहार है। न्यायपालिका ने दो वर्षों बाद सरकार के खिलाफ यह दुर्लभ निर्णय दिया जो यह दशार्ता है कि स्थिति कितनी गंभीर है। गाजा युद्ध के बाद से अपनाई गई भोजन नीतियों ने ही कैदियों को कुपोषण और भूखमरी की स्थिति तक पहुँचाया जो न केवल अंतरराष्ट्रीय कानून, बल्कि सभ्यता और नैतिकता के भी विरुद्ध है। यह तथ्य रेखांकित करता है कि सुरक्षा और प्रतिशोध के नाम पर इजराइल सरकार ने मानवीय मूल्यों को किनारे कर दिया है। न्यायालय का यह निर्देश याद दिलाता है कि कोई भी सत्ता अपने विरोधियों से इतनी नफरत नहीं कर सकती कि उन्हें जीने के न्यूनतम अधिकारों से भी वंचित कर दे। यह निर्णय अंतरराष्ट्रीय समुदाय के लिए भी एक चेतावनी है कि इजराइल की अमानवीय नीतियों पर निगरानी और दबाव बढ़ाएं ताकि निर्दोष लोग प्रताड़ना से बच सकें।

– **अमृतलाल मारू**, इंदौर

एनआरसी की अनिवार्यता

देश के किसी भी चुनाव में केवल वही मतदान करने के अधिकारी हो सकते हैं जो भारत के नागरिक हों। जो भारत के नागरिक नहीं और किसी तरह मतदाता बन बैठे हैं वे भारतीय लोकतंत्र के साथ खिलवाड़ ही कर रहे हैं। उचित यह होगा कि भारत सरकार राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर तैयार करने की दिशा में आगे बढ़े। इसका अर्थ है कि जिन लोगों ने गलत तरीके से आधार हासिल कर लिया है, उन्हें मतदाता बनने से नहीं रोका जा सकता। यह कोई अच्छी स्थिति नहीं और तब तो बिल्कुल भी नहीं, जब चुनाव आयोग बिहार के बाद पूरे देश में मतदाता सूचियों के सत्यापन की तैयारी कर रहा है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि अपने देश में सभी भारतीय नागरिकों को उनकी नागरिकता साबित करने वाले प्रमाण पत्र नहीं दिए जा सके हैं। सुप्रीम कोर्ट ने केवल जन्म प्रमाण पत्र और पासपोर्ट को ही नागरिकता का प्रमाण माना है। यह सही भी है, लेकिन अपने देश में अनेक लोगों के पास जन्म प्रमाण पत्र नहीं और पासपोर्ट तो बहुत कम लोग बनवाते हैं। यह भी ध्यान रहे कि आधार एवं अन्य प्रमाण पत्रों की तरह जन्म प्रमाण पत्र भी नकली बनवाए जा सकते हैं। अच्छा यह होगा कि भारत सरकार के साथ-साथ सुप्रीम कोर्ट भी इस पर विचार करे कि ऐसा कोई प्रमाण पत्र देश के लोगों को कैसे दिया जाए, जो उन्हें भारत का नागरिक साबित करे।

– **विभुक्ति बुपक्या**, उज्जैन

बदले ट्रंप के सुर

आज टैरिफ विवाद एवं रूस से तेल खरीदने के मुद्दे पर भारत -अमेरिका में जारी तनाव के बीच अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प एवं भारतीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने सकारात्मक बयानों के जरिए दरकते रिश्तों को बचाने की एक महत्वपूर्ण कोशिश की है, जबकि एक दिन पहले हि ट्रम्प ने भारत को चीन के खेंमे में जाने संबंधी बयान देकर विवाद खड़ा कर दिया था , लेकिन अब इसके कुछ घंटे बाद ही अचानक ट्रम्प ने मोदी को अब एक बार फिर से महान प्रधानमंत्री बताते हुवे भारत अमेरिका के सम्बंधों को आज एक बार फिर से विशेष बताया है वे आगे यह भी कहते हैं कि कभी-कभार आपस में कुछ विवाद हो सकते हैं लेकिन चिंता की कोई बात नहीं है फिर इधर स्वयं मोदी ने भी ट्रम्प के उक्त बयान की प्रशंसा की हैं एवं कहा है कि दोनों देशों के बीच आज भी काफी सकारात्मक सम्बन्ध है। ट्रम्प के इस बदलते व्यवहार के कारण आज पत्रकारों ने जब ट्रम्प से यह पूछा कि क्या वह मौजूदा हालात में भारत के साथ सम्बंधों का आदर करने को तैयार हैं तो उनका जवाब था कि मैं तो हमेशा हि ऐसा करता हूं एवं आगे भी करता रहुगा फिर आप सभी जानते हैं कि प्रधानमंत्री मोदी के साथ मैं हमेशा एक अच्छा मित्र भी बना रहना चाहता हूं।

– **मनमोहन राजावत**, शाजापुर

दैनिक जागरण
जीवन की सार्थकता के लिए आत्मबोध आवश्यक है

संकट में नेपाल

राजशाही के खात्मे के बाद से राजनीतिक अस्थिरता से दो-चार होता रहा नेपाल इस बार अराजकता से भी घिर गया है। चिंताजनक यह है कि इस अराजकता का अंत होता नहीं दिख रहा है। सोशल मीडिया कहे जाने वाले डिजिटल प्लेटफार्म पर पाबंदी के खिलाफ नेपाल के युवाओं ने जो विरोध प्रदर्शन शुरू किया, वह जिस तरह इस पाबंदी को हटा लिए जाने के बाद भी जारी रहा, उससे यही स्पष्ट होता है कि नई पीढ़ी का आक्रोश केवल डिजिटल मीडिया पर पाबंदी को लेकर नहीं था। इसकी पुष्टि इससे होती है कि सड़कों पर उतरे युवाओं ने अपने नेताओं के भ्रष्टाचार का उल्लेख कर उनके इस्तीफे की मांग करनी शुरू कर दी। इसके आसार नहीं थे कि उनका आक्रोश इतना उग्र रूप ले लेगा कि प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली इस्तीफा देने के लिए बाध्य हो जाएंगे, लेकिन उनके दमनकारी रवैये से ऐसा ही हुआ। उनके सत्ता से बाहर हो जाने के बाद यह प्रश्न उठ खड़ा हुआ है कि इस पड़ोसी देश का राजनीतिक भविष्य क्या होगा? नेपाल के हालात काफी कुछ बांग्लादेश के घटनाक्रम की याद दिला रहे हैं। वहां भी छात्रों ने आरक्षण नीति से आक्रोशित होकर शेख हसीना सरकार के खिलाफ जो आंदोलन छेड़ा, वह उन्हें सत्ता से बेदखल करने का जरिया बना।

नेपाल में जो स्थिति बनी, उसके लिए प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली अपने अलावा अन्य किसी को दोष नहीं दे सकते। उनकी मनमानी नीतियां ही उन्हें ले डूबीं। नेपाल के लिए चिंता का विषय केवल यह नहीं कि वहां भावी अंतरिम सरकार किस रूप में गठित होगी? उसके लिए चिंता की बात यह भी है कि भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन अराजकता की राह से कैसे लौटे? नेपाल के युवाओं का आक्रोश समझ आता है, लेकिन यदि उसकी अभिव्यक्ति हिंसा से होगी तो वह संकट को और बढ़ाएगी। यह शुभ संकेत नहीं कि आक्रोशित युवा सेना की भी नहीं सुन रहे हैं। उन्हें यह देखना होगा कि नेपाल में वैसी स्थितियों का निर्माण न होने पाए, जैसी बांग्लादेश में निर्मित हुईं और जिनके नतीजे में वहां एक वर्ष बाद भी अनिश्चितता व्याप्त है। नेपाल कोविड महामारी के बाद से ही आर्थिक संकटों से घिरा है। राजनीतिक अस्थिरता ने इस संकट को और अधिक बढ़ाया। नेपाल के नेता कुछ भी दावा करें, सत्ता के लोभ में उन्होंने लोकतंत्र के साथ जैसे मनमाने प्रयोग किए, उनसे लोगों को निराशा ही हाथ लगी। यह सही समय है कि नेताओं की नई पीढ़ी नेपाल का नेतृत्व करने आगे आए और अपने पुराने नेताओं की गलतियों से सबक सीखे। भारत को नेपाल की चिंताजनक स्थितियों से सतर्क रहना होगा। उसे यह भी देखना होगा कि अस्थिरता के साथ अराजकता से घिरे नेपाल में विदेशी ताकतों और विशेष रूप से चीन का हस्तक्षेप न बढ़ने पाए।

भविष्य का ड्रोन

वर्ष 2030 तक देश ड्रोन हब बन जाएगा, ऐसी संकल्पना है। राष्ट्रीय नीति के साथ कदमताल कर रहा हरियाणा भी केंद्र की लीक पर चलता दिख रहा है। इसे सरकार की तैयारियों के आलोक में देखा जा सकता है। प्रदेश में 252 ड्रोन पायलट तथा 136 ड्रोन और तकनीशियनों को प्रमाणपत्र सौंपकर सरकार ने जता दिया है कि वह वाकई प्रदेश को ड्रोन हब बनाने के प्रति बेहद गंभीर है। सिसाय में देश के पहले और दक्षिण एशिया के सबसे बड़े ड्रोन प्रशिक्षण संस्थान और ड्रोन विनिर्माण यूनिट का ई-शुभारंभ भी इसी दृष्टि का परिचायक माना जाएगा। इतने व्यापक स्तर पर किए जा रहे जतन बता रहे हैं कि प्रदेश के भविष्य को नई ऊंचाई दी जा रही है। यह कहना ज्यादा उचित होगा कि भविष्य का ड्रोन विकास को नया आसमान दे, इस सोच को साकार करने के सराहनीय प्रयास किए जा रहे हैं। संभवतः बदले दौर में यही समय की मांग भी है। अत्याधुनिक पहियों के सहारे चलाने वाला विकास-रथ विकसित हरियाणा की यात्रा को भी तीव्रता से गतिमान रखेगा, ऐसी उम्मीद की जानी चाहिए। ड्रोन का उपयोग कृषि, रक्षा और सुरक्षा, लाजिस्टिक्स और बुनियादी ढांचे जैसे क्षेत्रों में किया जा सकता है। प्रदेश की कृषि व्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए 'किसान ड्रोन' जैसी योजना पहले से ही चल रही रही है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा शुरू की गई 'नमो ड्रोन दीदी' और 'किसान ड्रोन' जैसी योजनाएं ग्रामीण समुदाय और किसानों को सशक्त बनाने की दिशा में अग्रसर है।

ड्रोन हब की दिशा में केंद्र के साथ चलना विकास के संदर्भ में हरियाणा सरकार की दूरदर्शिता को दर्शाता है

बिहार के पिछड़ेपन के गुनहगार

सुरेंद्र किशोर

विकास की होड़ में पीछे रह गए बिहार ने वापसी तो की है, पर आजादी के बाद से उसे जिस उपेक्षा का सामना करना पड़ा, उसकी क्षतिपूर्ति संभव नहीं

बिहार का विकास और उसकी बदहाली इन दिनों चर्चा में है। विपक्षी खेमे से जुड़े राजद और कांग्रेस जैसे दल राज्य के पिछड़ेपन के लिए सत्तारूढ़ राजग सरकार को जिम्मेदार बता रहे हैं। उनके इस आरोप की पड़ताल की जाए तो बिहार की मौजूदा स्थिति के लिए सबसे अधिक दोषी राजद और कांग्रेस जैसे दल ही दिखेंगे। स्वतंत्रता के बाद से ही कांग्रेस के नेतृत्व वाली केंद्र सरकारों ने बिहार के साथ सौतेला व्यवहार किया। याद रहे कि अविभाजित बिहार के दक्षिणी हिस्से में देश के करीब 40 प्रतिशत खनिज संसाधन उपलब्ध थे। यही कारण है कि टाटा जैसे कारोबारी समूह ने यहां कारखाने लगाए। उत्तर बिहार की जमीन को जापान की भूमि की तरह ही उपजाऊ माना जाता है, पर केंद्र सरकार ने ऐसे प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर राज्य को प्रगति के पथ पर अग्रसर करना उचित नहीं समझा। न तो उत्तर बिहार में सिंचाई और बांध आदि का पर्याप्त इंतजाम हुआ और न ही खनिज पदार्थों के उपयोग का प्रबंध किया गया। इसके विपरीत आजादी के तत्काल बाद रेल भाड़ा समानीकरण नियम लाकर केंद्र सरकार ने खनिज संपन्न बिहार के लिए लाभ की स्थिति को सीमित कर दिया।

भाड़ा समानीकरण नियम तब समाप्त हुआ, जब लोकसभा में कांग्रेस को बहुमत मिलना बंद हो गया, पर इस बीच बिहार को करीब 10 लाख करोड़ रुपये के लाभ से वंचित रहना पड़ा। समझिए कि 1950 से 1990 तक 10 लाख करोड़ रुपये की राशि से बिहार का कितना विकास हो चुका होता? भाड़ा समानीकरण का यही अर्थ था कि रेलगाड़ी के जरिये धनबाद से खनिज पटना पहुंचाने में जितना भाड़ा लगता था, उतना ही भाड़ा मुंबई या चेन्नई तक पहुंचाने में लगता। पहले यह स्थिति नहीं थी। कहा गया कि समानीकरण इसलिए किया गया ताकि उद्योगीकरण का लाभ समान रूप से सभी राज्यों तक पहुंचे। सिर्फ उन्हीं राज्यों को नहीं, जहां खनिज पदार्थ अधिक पाए जाते हैं। समानीकरण के बाद टाटा जैसी किसी कंपनी के लिए मुंबई या गुजरात से बिहार आकर पूंजी निवेश करने की मजबूरी नहीं रह गई। केंद्र सरकार को चाहिए था कि रेल भाड़ा समानीकरण के एवज में उत्तर बिहार के खेतों को विकसित करने के काम के लिए साधन मुहैया कराती, लेकिन ऐसा भी नहीं हुआ। तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू का ध्यान उस समय पंजाब पर केंद्रित रहा।

नेहरू सरकार ने 1955 में सिंचाई के मद में पूरे देश के लिए करीब 29,106 लाख रुपये का आवंटन किया था। इस राशि में से सिर्फ पंजाब को 10,952 लाख रुपये मिले। उन्हीं दिनों कोसी बांध निर्माण योजना पर भी काम होना था। नेहरू ने बिहार से कह दिया कि हमारे पास पैसे नहीं हैं, इसलिए कोसी में निर्माण के काम में स्वयंसेवी संगठनों और आमजन से मदद ली जाए। रिजर्व बैंक बुलेटिन के अनुसार 1993-94 में जम्मू-कश्मीर के लिए प्रति व्यक्ति केंद्रीय सहायता 2,291 रुपये थी। उसी अवधि में बिहार को सहायता राशि प्रति व्यक्ति मात्र 192 रुपये मिली। जबकि तमिलनाडु को 233 रुपये, राजस्थान को 304 रुपये तथा उत्तर प्रदेश को 331 रुपये आवंटित किए गए थे। बिहार की ऐसी उपेक्षा प्रथम पंचवर्षीय योजना काल से ही शुरू हो गई थी। नतीजतन 1971 में ओडिशा को छोड़कर बिहार देश का सर्वाधिक गरीब राज्य था। आज भी लगभग वही स्थिति है। आजादी के बाद से बिहार में कुछ सरकारी उपक्रम जरूर स्थापित हुए, लेकिन यह किसी से छिपा नहीं रहा कि वे कितने सफल रहे। इसके बजाय खेती में पूंजी लगाई गई होती तो बिहार का कहीं अधिक भला होता।

राजद और कांग्रेस जिस राजग सरकार पर आरोप लगा रहे हैं, उसके शासनकाल में ही प्रदेश का चहुंमुखी विकास हुआ। इस दौरान आंतरिक राजस्व बढ़ना जारी रहा। उसी अनुपात में केंद्र से भी सहायता राशि मिली। 2014 में केंद्र में भी राजग सरकार बनने के बाद विशेष केंद्रीय सहायता सुगम हुई। केंद्र और राज्य सरकारों के साझा प्रयासों से विकास की गति तेज हुई है। बिहार में बिजली घर-घर पहुंच गई है। सड़कों का जाल बिछा दिया गया। रोजगार के अवसर बढ़े हैं। पलायन में कमी आई है। आंकड़े खुद आर्थिक कायाकल्प की गवाही देते हैं। वित्त वर्ष 2005-06 में बिहार का बजट 26 हजार 328 करोड़ रुपये था जो, 2025-26 में बढ़कर 3 लाख 16 हजार 895 करोड़ रुपये हो गया। विकास की होड़ में पीछे रह गए बिहार ने वापसी तो की है, लेकिन आजादी के बाद उसे जिस उपेक्षा का सामना करना पड़ा, उसकी क्षतिपूर्ति संभव नहीं।

जनता के मन पर नीतीश कुमार के सुशासन की छाप स्पष्ट दिखती है। राज्य में 2005 से ही लगातार उनकी सरकार बनी हुई है। आगामी विधानसभा चुनाव से पहले 2024 के लोकसभा चुनाव में भी बिहार में राजग को भारी बढ़त मिली। गत वर्ष नवंबर में बिहार के चार विधानसभा उपचुनाव में चारों सीटों पर राजग की विजय हुई। उनमें से तीन सीटें पहले राजद-माले के पास थीं। इन दलों से सीटें छीनना कोई मामूली बात नहीं मानी जाती, लेकिन यह भी संभव हो गया। आगामी विधानसभा चुनाव की पृष्ठभूमि में बिहार के अधिकांश मतदाता विकास की ही बातें करते हैं। लालू प्रसाद-राबड़ी देवी के 15 साल के शासनकाल को याद करके ही उन्हें सिहरन होने लगती है। वे उन दिनों की वापसी कतई नहीं चाहते। राजनीतिक समीकरणों की बात करें तो लालू प्रसाद का जांचा परखा एमवाइ यानी मुस्लिम-यादव का मजबूत वोट बैंक बरकरार है। मुस्लिम वोट तो शायद ही छिटके, लेकिन यादवों का एक छोटा सा वर्ग अब राजद के प्रति पहले जैसा उत्साहित नजर नहीं आता। भाकपा-माले का साथ महागठबंधन की ताकत बढ़ा रहा है। जबकि कांग्रेस का नेतृत्व निष्क्रिय है तो वह राजद पर बहुत ज्यादा निर्भर है। कुछ छिटपुट क्षेत्रीय दलों और प्रभावशाली निर्दलीय उम्मीदवार राजग या महागठबंधन में से किसे कितना नुकसान पहुचाएंगे, यह तो भविष्य में ही पता चलेगा। हालांकि यह जरूर दिख रहा है कि बिहार के इस चुनाव में धनबल का ऐसा असर दिखने जा रहा है, जैसा पहले कभी नहीं दिखा। यह भी देखना होगा कि प्रवर्तन एजेंसियां इस पर अंकुश लगाने में कितनी सफल होंगी?

(लेखक वरिष्ठ स्तंभकार एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

response@jagran.com

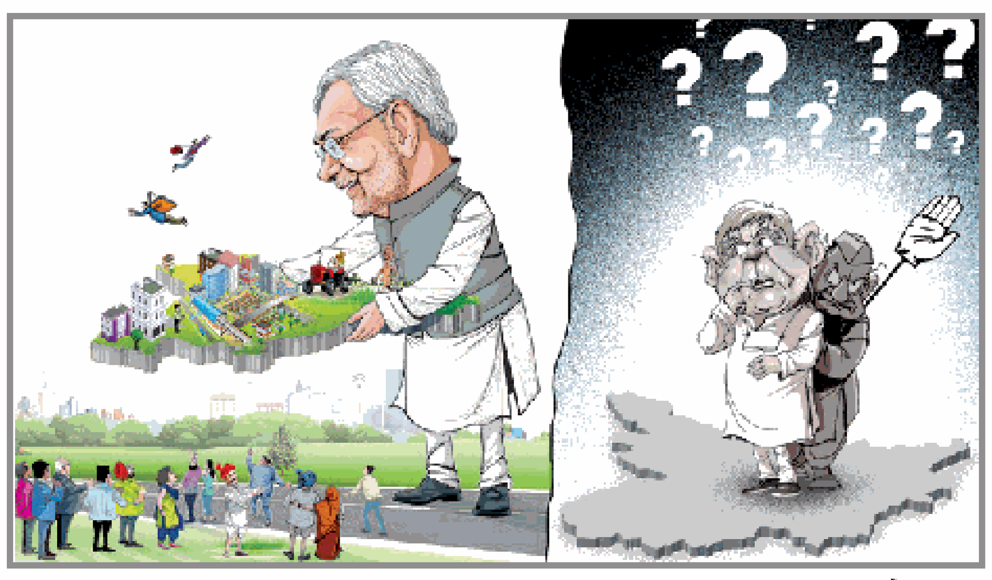

अवधेश राजपूत

बंगाल का समानांतर सेंसर बोर्ड

राजीव सचान

क्या बंगाल फाइल्स के विरोधी यह चाहते हैं कि फिल्म उनकी कथा-पटकथा के हिसाब से बनती?

एक और ऐसी फिल्म चर्चा में है, जिसे लेकर विवाद है। विवाद का कारण फिल्म की विषयवस्तु है। फिल्म बंगाल फाइल्स इस कारण विवादों में है, क्योंकि वह जिन्ना के डायरेक्ट एक्शन डे के आह्वान के बाद कलकत्ता की भयानक मारकाट (इसे ग्रेट कोलकाता किलिंग भी कहते हैं) के इर्द-गिर्द घूमती है। इस फिल्म में अगस्त 1946 की कलकत्ता और नोआखाली की भयावह हिंसा के साथ ही उस समय की राजनीतिक-सामाजिक परिस्थितियों को भी दिखाया गया है। यह वह कालखंड था, जब भारत आजादी के साथ बंटवारे की ओर भी बढ़ रहा था। 1946 में जिन्ना पाकिस्तान की मांग पर अड़े थे और कांग्रेस नेता बंटवारे से बचने में। इसी समय ब्रिटिश सरकार ने कैबिनेट मिशन भेजा था।

कैबिनेट मिशन ने अंतरिम सरकार के गठन के लिए जो प्रस्ताव तैयार किया, उससे जिन्ना आगबबूला हो उठे। उन्होंने डायरेक्ट एक्शन डे का एलान कर दिया। यह हिंसा की खुली धमकी थी। इस धमकी को अंजाम देने की शुरुआत कलकत्ता से हुई। इसका प्रमुखता से चित्रण बंगाल फाइल्स में है, लेकिन ऐसा पहली बार नहीं किया गया। कोलकाता हिंसा पर कई किताबें भी लिखी जा चुकी हैं। लाइफ पत्रिका ने 'कलकत्ता के गिद्ध' शीर्षक वाले 9 सितंबर, 1946 के अंक में कलकत्ता हिंसा की रोंगटे खड़े करने वाली तस्वीरें छापी थीं। इनमें लाशों के ढेर के सामने एक मुंडेर पर बैठे गिद्ध भी दिखते हैं।

कुछ वर्ष पहले मार्च 2014 में दस-भागों वाले टीवी सीरियल 'संविधान' को राज्यसभा टीवी पर दिखाया गया था। इस डाक्यूड्रामा के निर्माण में तत्कालीन उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी का योगदान था। इसका निर्देशन श्याम बेनेगल ने किया था। 'संविधान' के पहले ही भाग में कोलकाता और नोआखाली की हिंसा का संक्षिप्त चित्रण है। यह इसीलिए किया गया, क्योंकि जिन्ना के डायरेक्ट एक्शन डे से उपजी हिंसा के साये में ही संविधान निर्माण का कार्य आगे बढ़ा। सीरियल में अंतरिम सरकार के गठन के विरोध में जिन्ना को ऐसा उकसावे वाला भाषण देते हुए दिखाया गया है, 'अब हमने भी अपना हथियार तैयार कर लिया है और हम इसका इस्तेमाल भी करना जानते हैं। आज मैं हिंदुस्तान के सारे मुसलमानों से डायरेक्ट एक्शन की अपील करता हूं। आने वाले जुमे, 16 अगस्त से हम आर-पार की सीधी लड़ाई लड़ेंगे और हथियार तभी रखेंगे, जब मंजिले मकसूद सामने दिखाई देगी यानी हमारा प्यारा पाकिस्तान।.. मैं यहां उसूल-इखलाक की बात नहीं करुंगा। आप सभी लोग जानते हैं कि मुझे गांधी की अहिंसा-वहिंसा में कोई यकीन नहीं है।....'

जिन्ना के भाषण के बाद स्क्रीन पर प्रकट होती हैं सीरियल की एंकर स्वरा भास्कर। वे बताती हैं, 'कैबिनेट मिशन वापस लौट गया और हिंसा के बादल चारों ओर मंडराने लगे। वायसराय वेवेल ने सारे गवर्नरों को बुलाकर पुलिस व्यवस्था को चाक-चौबंद करने को कहा, पर बंगाल के गवर्नर ने वेवेल को खबर दी कि बंगाल के मुस्लिम लीगी प्रधानमंत्री एचएस सुहरावर्दी के कहने पर उन्होंने 16 अगस्त से सारे पुलिस महकमे को छुट्टी पर भेज दिया है। 16 अगस्त, 1946 भारत के इतिहास के काले दिनों में शामिल होने जा रहा था। जिन्ना साहब की पुकार पर 16 अगस्त की सुबह हथियारबंद लोग सड़कों पर उतर आए और हत्याओं का सिलसिला शुरू हो गया।..' क्या यह बताने की जरूरत है कि जिन्ना की पुकार पर हत्याओं का सिलसिला किसने शुरू किया होगा? नहीं न! इसके बाद स्वरा भास्कर की आवाज के साथ कलकत्ता हिंसा के कुछ दृश्य स्क्रीन पर उभरते हैं। आगे नोआखाली की भीषण हिंसा और वहां गांधीजी के जाने के दृश्य हैं।

फिल्म बंगाल फाइल्स में विवेक रंजन अग्निहोत्री ने कलकत्ता हिंसा का चित्रण अपनी तरह से किया है। यदि उन्होंने कुछ गलत किया होता तो फिल्म सेंसर बोर्ड में अटकती या फिर किसी हाई कोर्ट या सुप्रीम कोर्ट ने उस पर रोक लगा दी होती। अदालत का दरवाजा खटखटाने के बाद भी ऐसा नहीं हुआ, फिर भी पश्चिम बंगाल में इस फिल्म की रिलीज पर अघोषित पाबंदी है। यह इसलिए है, क्योंकि सत्तारूढ़ तृणमूल कांग्रेस को फिल्म रास नहीं आई। वह फिल्म पर पाबंदी नही लगा सकती थी, इसलिए उसने अघोषित प्रतिबंध का रास्ता चुना। उसकी ओर से मल्टीप्लेक्स वालों को धमकाया गया कि यदि उन्होंने बंगाल फाइल्स दिखाई तो उनकी खैर नहीं। उन्होंने अपनी खैर मनाई। बंगाल में बंगाल फाइल्स पर अघोषित पाबंदी यही बताती है कि राज्य में सत्तारूढ़ तृणमूल कांग्रेस ने अपना समानांतर सेंसर बोर्ड कायम कर लिया है। तृणमूल कांग्रेस उन दलों में शामिल है, जिसे संविधान खतरे में दिखाई दे रहा है, लेकिन वह करणी सेना की तरह व्यवहार कर रही है। बंगाल फाइल्स पर आपत्ति अकेले तृणमूल कांग्रेस को ही नहीं, अन्य अनेक लोगों और खासकर सेक्युलर-लिबरल किस्म के लोगों को भी है। क्या वे यह चाहते थे कि बंगाल फाइल्स उनके हिसाब से बनाई जाती? पता नहीं वे क्या चाहते हैं, लेकिन उनके पास बंगाल फाइल्स न देखने की भी सुविधा है और उसे खराब फिल्म बताने की भी।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)

response@jagran.com

बंगाल फाइल्स फिल्म के समर्थन में जुटे लोग। फाइल

ऊर्जा

निराशा का शमन

सकारात्मक सोच हमारे कार्य करने की क्षमता को बढ़ाता है। हमें रचनात्मक बनाता है। हमारे भीतर नवीन सामर्थ्य का संचार करता है। यह आशा की सुंगध लेकर आता है, जिससे हमें अपने कार्यों में सफलता प्राप्त होती है। इसके उलट यदि हम निराशा के जाल में फंस जाते हैं तो प्रगति की दिशा से भटक जाते हैं। तब हम जहां हैं, वहां से भी नीचे फिसल जाएंगे। निराशा हमारे संकल्पों पर ग्रहण की कालिमा लगा देती है। उसके पश्चात स्वप्न टूटने लगते हैं। हम बिखरने लगते हैं। कोई भी कार्य ठीक गति से नहीं होता। जीवन में हताशा एवं नैराश्य दस्तक देने लगते हैं।

स्मरण रहे कि आशा की किरण ही सफलता के आंगन को आलोकित करती है। एक बुजुर्ग इसी आशा में पेड़ लगाता है कि कल को आने वाली पीढ़ी इसके फलों का आस्वादन करेगी। वह यह सोचे कि उसे अब ज्यादा दिनों तक जीवित नहीं रहना है तो वह क्यों फलदार पेड़ लगाए? ऐसी स्थिति में तो वह निराशा के कूप में डूबकर तड़पने लगेगा। निराशा का तिमिर उसे कचोटने लगेगा। अगर वह निराशा की ऐसी पतवार थामे चलेगा तो मझदार में ही डूब जाएगा। जबकि आशा की सुधा जीवन को लालित्य प्रदान करती है। वह उसे आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है। निराशा का अंधकार हमारी क्षमताओं को लीलता है। हम अपनी सामर्थ्य को भूल जाते है। निराशा हमें भयाक्रांत करती है और समय के साथ उससे जुड़े भय और गहरे होते जाते हैं। इस कारण संभव दिख रही सफलता भी असंभव लगने लगती है। जीवन में नैराश्य का मर्दन अत्यंत आवश्यक है। अन्यथा हम उन्नति नहीं कर पाएंगे। निराशा का जन्म नकारात्मकता से होता है। नकारात्मकता ही निराशा को पोषित करती है। जीवन में नकारात्मकता से दूर रहकर ही निराशा का शमन किया जा सकता है।

ललित शौर्य

जलवायु संतुलन में मददगार झीलें

सुधीर कुमार

झीलों के संरक्षण के लिए सामूहिक प्रयास की आवश्यकता है, तभी ये मानव के लिए उपयोगी साबित हो पाएंगी

संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, धरती पर झीलों की संख्या लगभग 12 करोड़ है, जो कुल भूमि के चार प्रतिशत हिस्से को घेरती हैं। झीलें केवल मीठे पानी के स्रोत नहीं हैं, बल्कि ये कृषि और उद्योग की जल आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ-साथ जैव विविधता के आश्रयस्थल, रोजगार प्रदाता और पर्यटन एवं मनोरंजन के महत्वपूर्ण स्रोत भी हैं।

झीलों का निर्माण आमतौर पर डेल्टाई और तटीय क्षेत्रों में होता है, लेकिन पहाड़ी और रेगिस्तानी इलाकों में भी इनकी उपस्थिति देखी जाती है। झीलें पारिस्थितिकी तंत्र और मानव समाज के लिए कई प्रकार से उपयोगी होती हैं। पृथ्वी में मौजूद कुल सतही ताजे पानी का लगभग 90 प्रतिशत हिस्सा झीलों में संग्रहित है। झीलों के कारण भूमिगत जल का स्तर स्थिर रहता है, जिससे स्थानीय आबादी को पेयजल की कमी का सामना नहीं करना पड़ता। ये झीलें वर्षा जल संग्रहण के रूप में कार्य करती हैं, जिससे वर्षा ऋतु के अतिरिक्त भी पानी की उपलब्धता बनी रहती है। इससे आसपास के क्षेत्रों में कृषि और उद्योग के विकास की संभावनाएं बढ़ जाती हैं।

झीलों का पारिस्थितिकी महत्व अत्यधिक है। ये प्राकृतिक कार्बन अवशोषक के रूप में कार्य करती हैं, जिससे धरती का तापमान नियंत्रित रहता है। बाढ़ की स्थिति में, झीलें अतिरिक्त पानी को सोखकर बाढ़ के फैलाव को कम करने में मदद करती हैं। आर्थिक गतिविधियों के कारण झीलें रोजगार सृजन और आर्थिक विकास के केंद्र भी बनती हैं। मछली पालन, पर्यटन और मनोरंजन से जुड़े क्रियाकलापों के चलते बड़ी आबादी की आजीविका सुरक्षित होती है। इसके अलावा, झीलें जैव विविधता के बड़े केंद्र भी होती हैं, जो असंख्य मछलियों, जलीय जीवों, स्वदेशी और प्रवासी पक्षियों के लिए आश्रयस्थल प्रदान करती हैं। इस प्रकार, झीलों का आर्थिक और पारिस्थितिकीय महत्व अत्यधिक है। हालांकि एक समय धरती पर झीलों की भरपूरता थी, लेकिन बढ़ते शहरीकरण और औद्योगिक विकास के कारण झीलों का अतिक्रमण बढ़ा है। इससे शहरी आबादी को पानी की कमी और तापमान में वृद्धि जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। जलवायु परिवर्तन के कारण झीलों की प्रकृति में भी अप्रिय बदलाव देखे जा रहे हैं। ग्लोबल वार्मिंग के कारण झीलों का वाष्पीकरण तेज हो गया है, वहीं खेतों में प्रयुक्त कीटनाशकों, रासायनिक उर्वरकों और कूड़ा-कचरे के झीलों में एकत्रित होने से उनकी सेहत खराब हो रही है। झीलों के संरक्षण के लिए कुनमिंग-मांट्रियल वैश्विक जैव विविधता फ्रेमवर्क-2022 में भी ध्यान दिया गया है, जिसके तहत 2030 तक जैव विविधता के संरक्षण का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। झीलों के संरक्षण के लिए सामूहिक प्रयास की आवश्यकता है, तभी ये मानव के लिए उपयोगी साबित हो पाएंगी।

(लेखक बीएचयू में शोधार्थी हैं)

समय की आवश्यकता एनआरसी

'आधार पर आदेश' शीर्षक से प्रकाशित संपादकीय टिप्पणी में सुप्रीम कोर्ट द्वारा बिहार में आधार को मतदान हेतु मान्य प्रमाण पत्र की सूची में शामिल करने के आदेश की समीक्षा की गई है। उक्त आदेश में इस तथ्य की उपेक्षा कर दी गई है कि बड़ी आसानी से फर्जी आधार बनवाया जा सकता है। इस मामले में आधार की वैधानिकता की जांच चुनाव आयोग पर छोड़ दी गई है। आधार को मतदान का आधार बनाने से फर्जी मतदान की आशंका बहुत हद तक बढ़ सकती है, क्योंकि घुसपैठियों ने बड़े पैमाने पर नकली आधार कार्ड बनवा लिए है। ऐसी स्थिति में भारत का नागरिक होने पर ही मतदान करने की शर्त का उल्लंघन होना स्वाभाविक है, जो लोकतंत्र की शुचिता के साथ अन्याय होगा। इस विकट स्थिति में भारतीय नागरिकता रजिस्टर (एनआरसी) की आवश्यकता और महत्ता स्वप्रमाणित हो जाती है। भारतीय नागरिकता को साबित करने का इससे बेहतर तरीका नहीं हो सकता। अतः प्राथमिकता के साथ इसे अनिवार्यतः लागू किया जाना चाहिए। लोकतंत्र में फर्जी मतदान को रोकने की महती जिम्मेदारी चुनाव आयोग पर है, किंतु आधार को अनुमति दिए जाने से अब वह स्वयं असहज स्थिति में पहुंच गया है। फर्जी मतदान चुनाव परिणामों को अप्रत्याशित तरीके से प्रभावित कर सकता है। इसलिए नागरिकता के दायरे को सुनिश्चित किए बगैर चुनाव कराना किसी भी स्थिति में सही नहीं ठहराया जा सकता।

मोहित सोनी, कुक्षी-मध्य प्रदेश

मेलबाक्स

स्वदेशी चेतना की राह

भारत आज जिस आत्मनिर्भरता और स्वदेशी चेतना की राह पर अग्रसर है, उसमें शिक्षा का योगदान महत्वपूर्ण है। केवल उद्योग, कृषि या विज्ञान ही नहीं, बल्कि हमारी शिक्षा व्यवस्था भी यदि स्वदेशी मूल्यों और भारतीयता के साथ आगे बढ़ेगी, तभी सच्चा आत्मनिर्भर भारत संभव होगा। हमारे पूर्वजों ने शिक्षा को केवल रोजगार पाने का साधन नहीं माना, बल्कि चरित्र निर्माण और राष्ट्र सेवा का मार्ग बताया। जब बड़ी संख्या में छात्र विदेश जाकर शिक्षा ले रहे हैं, तो इससे न केवल आर्थिक बोझ बढ़ता है, बल्कि प्रतिभा का पलायन भी होता है। यदि भारत में ही विश्व-स्तरीय संस्थान, शोध केंद्र और नवाचार की परंपरा विकसित की जाए, तो हमारे युवा यहीं रहकर देश की उन्नति में योगदान देंगे। स्वदेशी शिक्षा से हमें अपनी संस्कृति, भाषाओं और परंपराओं के संरक्षण के साथ-साथ आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी को भी भारतीय परिप्रेक्ष्य में विकसित करने का अवसर मिलेगा। यह केवल डिग्री पाने की प्रक्रिया नहीं होगी, बल्कि राष्ट्र निर्माण का संकल्प होगा। इसलिए आवश्यक है कि शिक्षा नीति में ऐसे कदम उठाए जाएं, जो स्वदेशी गौरव, आत्मनिर्भरता और राष्ट्रभक्ति को प्रोत्साहित करें। जब हमारे विद्यार्थी अपने देश की धरती पर रहकर विश्वस्तरीय शिक्षा प्राप्त करेंगे, तब वे केवल अपने सपनों को नहीं, बल्कि भारत के सपनों को भी साकार करेंगे। यही सच्चे अर्थों में ''शिक्षा में स्वदेशी'' की सार्थकता है। srayushmaan@gmail.com

नेपाल में उथल-पुथल

नेपाल के घटनाक्रम तेजी से बदल रहे हैं। प्रधानमंत्री ओली ने इस्तीफा दे दिया है। जबरदस्त उपद्रव का माहौल है। इसके तात्कालिक कारण भले डिजिटल मीडिया के विभिन्न मंचों को प्रतिबंधित करना बताया जा रहा है मगर भीतर ही भीतर वहां के युवाओं और आमजनों में असंतोष पनप रहा था, जिसका प्रकटीकरण अब हो रहा है। दुर्भाग्यपूर्ण है कि ओली सुधार के बजाय जोड़-तोड़ से सरकार बनाने एवं चलाने में लगे थे। चीन जैसे अलोकतांत्रिक शक्तियों की मदद लेने लगे थे। इन सब कारणों से वहां राजशाही की मांग की जाने लगी थी जबकि आमतौर पर सर्वश्रेष्ठ शासन प्रणाली लोकतंत्र को माना जाता है। दरअसल वहां की लोकतांत्रिक सरकारों में बैठे लोग लोकतंत्र को कुलीनतंत्र बनाने पर आमादा थे। लोकतंत्र सिर्फ चुनाव तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सुशासन का साधन है। भारत को सतर्क रहने की जरूरत है, क्योंकि भारत के चारों तरफ लोकतांत्रिक सरकारें नहीं हैं। manannmk8155@gmail.com

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : response@jagran.com

संस्थापक- स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक- संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।
****